ISSN-0971-8397

योजना

नवंबर 2009 | विकास को समर्पित मासिक | मूल्य : 10 रुपये

लघु एवं मझोले उद्योग विकास के नवीन मार्गों का संधान

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम–1857
प्रकाशन विभाग की चुनिंदा पुस्तकें

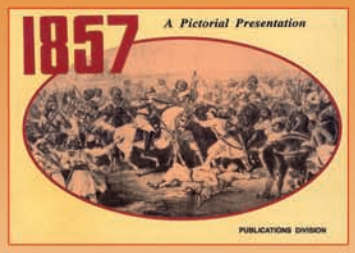

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली

विक्रय केंद्रः सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, **नई दिल्ली (24365610)** हाल नं0 196, पुराना सचिवालय, **दिल्ली** (23890205) सी–701, केंद्रीय सदन, बेलापुर, **नवी मुंबई** (27570686) 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, **कोलकाता** (22488030) राजाजी भवन, एफ एंड जी ब्लॉक, 'ए' विंग बेसेंट नगर, **चेन्नई** (24917673) बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, **पटना** (2683407) प्रेस रोड, निकट गवर्मेंट प्रेस **तिरुअनंतपुरम** (2330650) हाल नं.1, दूसरी मंजिल, केंद्रीय भवन, सेक्टर–एच, अलीगंज, **लखनऊ** (2325455) ब्लॉक नं. 4, गृहकल्प कॉम्प्लेक्स, एम.जे. रोड, नामपल्ली, **हैदराबाद** (24605383) प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, **बंगलौर** (25537244) अम्बिका कॉम्प्लेक्स, प्रथम तल, पालदी, **अहमदाबाद** (26588669) हाउस नं. 07, न्यू कालोनी, चेनीकुथी, के.के.बी. रोड, **गुवाहाटी** (2885090)

ज्यादा जानकारी के लिए हमारी वेबसाइट देखें –

DPDB-H-09/9

योजना

वर्ष : 53 • अंक : 11 नवंबर 2009 कार्तिक-अग्रहायण शक संवत 1931 कुल पृष्ठ : 60

प्रधान संपादक
नीता प्रसाद

वरिष्ठ संपादक
राकेशरेणु

संपादक
रेमी कुमारी

संपादकीय कार्यालय

538, योजना भवन, संसद मार्ग,
नयी दिल्ली-110 001
दूरभाष : 23096738, 23717910
टेलीफैक्स : 23359578
ई-मेल : exeed.yojana@gmail.com
yojanahindi@gmail.com
वेबसाइट : www.yojana.gov.in
www.publicationsdivision.nic.in
a) dpd@nic.in
b) dpd@hub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
जे.के. चन्द्रा

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन)
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26100207, 26105590
फैक्स : 26175516
ई-मेल : pdjucir_icm@yahoo.co.in

आवरण : **साधना सक्सेना**

इस अंक में

संपादकीय	–	5
सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों का वित्तपोषण मुद्दे एवं चिंतायें	आर.एम. मल्ला	6
संभाव्यता परखने का वक़्त	रहीस सिंह	9
उद्यम समूहों का विकास	तमल सरकार	13
विपणन की चुनौतियां और अवसर	अश्विनी सक्सेना	15
सवाल मजदूरों के पोषण और स्वास्थ्य रक्षा का	अरविंद मोहन	17
भारत में समावेशित विकास	राजेश रपरिया	19
असंगठित क्षेत्र की छतरी	उमेश चतुर्वेदी	23
आर्थिक मंदी और खाद्य-प्रसंस्करण उद्योग	विजय लक्ष्मी कसौरिया	25
क्या आप जानते हैं : सूक्ष्म, लघु और मझोले उद्योग क्या हैं?	–	27
वनों को संरक्षित करता लाख उद्योग	निमिष कपूर	29
खादी एवं ग्रामोद्योग निर्यात की संभावनाएं	बृजेन्द्र कुमार निगम करुणा शंकर कनौजिया	33
श्रमिकों के लिए एक नयी आशा	एम.एल. धर	36
जहां चाह वहां राह : बायोवेद शोध संस्थान द्वारा लाख क्रांति	रीति थापर कपूर	37
शोध यात्रा : राह रोके न पानी	–	39
उत्तर बिहार में पीने का पानी सुरक्षित	एकलव्य प्रसाद	40
पुरस्कृत निबंध : बच्चों के लिए हानिकर खाद्य व्यापार	सचिन यादव	43
कृषि एवं ग्रामीण विकास में सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका	जितेन्द्र सिंह	45
ज़रूरत मुद्रास्फीति के सही आकलन की	वेद प्रकाश अरोड़ा	49
स्वास्थ्य चर्चा : स्वाइन फ्लू (एच I एन I)	राकेश सिंह वीणापाणि सिंह	53
ख़बरों में	–	55

योजना हिंदी के अतिरिक्त असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु तथा उर्दू भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। पत्रिका मंगवाने हेतु, नयी सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिए मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'निदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें : व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन), प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक IV, लेवल VII, आर.के. पुरम, नयी दिल्ली-110066 दूरभाष : 26100207, 26105590, तार : सूचनाप्रकाशन।

सदस्य बनने अथवा पत्रिका मंगाने के लिए आप हमारे निम्नलिखित बिक्री केंद्रों पर भी संपर्क कर सकते हैं :- सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003 (दूरभाष : 24367260, 5610), हाल सं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 (दूरभाष : 23890205) * 701, सी- विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (दूरभाष : 27570686) * 8, एसप्लानेड ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष : 22488030) * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बंसल नगर, चेन्नई-600090 (दूरभाष : 24917673) * प्रेस रोड नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुवनंतपुरम-695001 (दूरभाष : 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकल्प, एमजी रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष : 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलुरु-560034 (दूरभाष : 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष : 2683407) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-H, अलीगंज, लखनऊ-226024 (दूरभाष : 2225455) * अंबिका कॉम्प्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर, पाल्दी, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष : 26588669) * के.के.बी. रोड, नयी कॉलोनी, मकान संख्या-7, चेनीकुटी, गुवाहाटी-781003 (दूरभाष : 2665090)

चंदे की दरें : वार्षिक : 100 रु. **द्विवार्षिक :** 180 रु.; **त्रैवार्षिक :** 250 रु.; **विदेशों में वार्षिक दरें : पड़ोसी देश:** 500 रु.; **यूरोपीय एवं अन्य देश :** 700 रु.

'योजना' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। ज़रूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए 'योजना' उत्तरदायी नहीं है।

आपकी राय

उम्मीद नहीं थी

योजना का सितंबर अंक मिला। शिक्षा अधिकार विधेयक पर मेरा लेख देखकर सुखद आश्चर्य हुआ। आलोचनात्मक होने के कारण मैं उम्मीद नहीं कर रहा था कि आप इसे छापेंगे।

योजना अच्छी निकल रही है। कवर, कलेवर भी अच्छा है।

एक छोटी-सी गलती की ओर ध्यान आकृष्ट कर रहा हूं। मेरे लेख के अंतिम पृष्ठ के पहले कॉलम में उपशीर्षक 'अंग्रेज़ी माध्यम की गुंजाइश' के नीचे एक दूसरा पैरा है, जो ट्यूशन के बारे में है। शायद संपादन करते समय स्थानाभाव के कारण अंग्रेजी माध्यम के बारे में पैरा हटा दिया गया, किंतु उपशीर्षक वही रह गया।

सुनील
ग्रा+पो : केसला
जिला : होशंगाबाद, मध्य प्रदेश

महत्वपूर्ण अंक

सितंबर 2009 अंक उत्कृष्ट है, मुख्यत: सर्वशिक्षा अभियान पर आधारित मनीष कुमार सिन्हा का लेख महत्वपूर्ण है तथा सतीशचंद्र सक्सेना का 'शिक्षा का माध्यम और भारतीय भाषाएं' शीर्षक लेख भी शिक्षा और भाषा का महत्व स्पष्ट करता है। 'हरियाणा में शिक्षा का प्रारूप व विकास' शीर्षक राजेश्वरी का लेख राज्य में शिक्षा की स्थिति से अवगत कराता है।

राहुल पाडवी
तलोदा, नंदुरबार, महाराष्ट्र

गुणवत्ता में सुधार ज़रूरी

योजना का सितंबर 2009 अंक में प्रकाशित लगभग सभी आलेख और ख़बर जानकारियों से लबालब हैं। विशेषकर संपादकीय, यशपाल जी का साक्षात्कार, सैम पित्रोदा एवं कनक शर्मा के आलेख प्रशंसनीय हैं। वास्तव में शिक्षा ही हमारे जीवन का आधार और जीवन में समृद्धि की कुंजी है। शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण मानवीय कर्तव्यों को इंगित करता है। शिक्षा के पुनर्गठन के लिए एक शैक्षिक क्रांति की आवश्यकता है। महिला, अनुसूचित जातियों, प्रौढ़ और रोज़गारोन्मुख शिक्षा के लिए एक वृहत राष्ट्रीय शिक्षा नीति का निर्माण आवश्यक है। शिक्षा की गुणवत्ता में पर्याप्त सुधार की ज़रूरत है। शिक्षा को सामाजिक और नैतिक मूल्यों से जोड़ना भी आवश्यक है। शिक्षकों के पद पर सुयोग्य व्यक्तियों को आकर्षित करने के लिए योजनाओं की आवश्यकता को नज़रअंदाज नहीं करना चाहिए। आधुनिक शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को बहुमुखी प्रतिभा का धनी बनाना होना चाहिए। प्रतिभा पलायन रोकने के लिए भी ठोस कदम उठाए जाने चाहिए।

प्रवीण कुमार शर्मा
किशनगंज, बिहार
ई-मेल-prabinkr.s@gmail.com

नयी कर संहिता का प्रारूप ही क्यों?

हमारे केंद्रीय वित्तमंत्री प्रणब मुखर्जी ने देश में कर-प्रणाली में सुधार हेतु संशोधनों का प्रस्ताव देश के सामने रखा है जिसे अप्रैल 2011 से लागू किए जाने का विचार है।

देश के प्रमुख कर सलाहकारों ने इस प्रारूप पर गंभीर आपत्तियां दर्ज़ कराई है। सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि देश में काले धन के प्रसार को विराम देने या रोकने के प्रयास इस प्रारूप में शून्य हैं। हमारे देश में व्यापक स्तर पर काले धन का प्रसार हो रहा है जो हमारी त्रुटिपूर्ण कर-प्रणाली का परिचायक है। चतुर किसान वह होता है जो अपने खेत में खरपतवार को पैदा नहीं होने देता।

प्रस्तावित प्रारूप में आयकर सीमा को बढ़ाने का प्रस्ताव नहीं है। रुपये का अवमूल्यन तेज़ी से हुआ है। अत: आयकर की न्यूनतम सीमा कम-से-कम पांच लाख रुपये होना चाहिए। इसके साथ देश के सुरक्षाकर्मियों को आयकर से पूर्णतया मुक्त करना राष्ट्रहित में होगा।

दशकों से चुनाव आयोग सफलतापूर्वक अपने कार्य को अंजाम दे रहा है। इसी के अनुरूप क्या आयकर विभाग को कार्य नहीं करना चाहिए? वित्त मंत्रालय में अब विश्व स्तर के आर्थिक विशेषज्ञ कार्यरत हैं। फिर क्या वजब है कि आयकर विभाग के नाम से नागरिक थर्र-थर्र कापते हैं? लाल फीताशाही के कारण ही आयकर विभाग को रिफंड वापस करने में विलंब पर भारी जुर्माना आयकर दाताओं को देना पड़ा है। क्यों?

यह भी खेद का विषय है कि आयकर विभाग में पारदर्शिता का अभाव है। आयकर प्रणाली में अब संशोधनों की दरकार नहीं पूर्ण तथा नयी आयकर नीति की दरकार है। हमारे देश में प्रत्येक वर्ष धार्मिक अनुष्ठानों, विवाह, सामाजिक कार्यक्रम आदि पर ही पांच लाख करोड़ से ज्यादा धन ख़र्च होता है। यह आयकर विभाग के खातों में क्यों नहीं दिखाया जाता? इसे काले धन की परिभाषा में कब तक शामिल किया जाएगा?

कर-प्रणाली में संशोधनों के बजाय संपूर्ण परिवर्तन समय की मांग है। यदि हमारी कर-प्रणाली सुलभ और सुगम होगी तो देश के

विकास के नये आयाम तेज़ी से परवान चढ़ेंगे। साथ-ही-साथ आतंकवाद, उग्रवाद जैसी अपराधिक घटनाओं पर भी विराम लगेगा। सुरक्षा बलों पर बजट का अनुपात घटेगा। देश में करोड़ों नवयुवकों को रोज़गार के नये अवसर प्राप्त होंगे। शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के लिए ज्यादा राजस्व इकट्ठा होगा। हमारे देश का नागरिक देश के राजस्व में सहयोग को तत्पर है। वह कर-अपबंधक की श्रेणी में रहना नहीं चाहता।

कृष्ण मोहन गोयल
अमरोहा, उ.प्र.

अच्छी शिक्षा राष्ट्र की आधारशिला है

सभ्यता का स्थायी विकास केवल अच्छी शिक्षा के द्वारा ही संभव है। अच्छी शिक्षा का कार्य एक अच्छे नागरिक का निर्माण तो है ही, साथ ही यह एक समृद्ध राष्ट्र की आधारशिला भी रखती है। पर हम रोज़गार और शिक्षा को कभी भी अलग-अलग रखकर नहीं देख सकते हैं।

हर भारतीय की चाह अच्छी शिक्षा और बेहतर रोज़गार होती है। संपादकीय में 'सर्वशिक्षा अभियान' और 'मध्याह्न भोजन' जैसी योजनाओं की प्रासंगिकता पर विश्लेषण किया गया है। मैं समझता हूं बिना विकल्प के समस्या का समाधान संभव नहीं है। 'मध्याह्न भोजन' ने भारत की लगभग 50 प्रतिशत बाल मज़दूरी को सीधे प्रभावित किया है। इस योजना ने ग़रीब तबक़े के बच्चों को सर्वाधिक प्रभावित किया जो केवल भोजन के लिए ही मज़दूरी किया करते थे। आज वे बच्चे स्कूल में एक अच्छे भविष्य की तैयारी कर रहे हैं। इसका प्रतिफल हमें अवश्य दिखाई देगा। पर दुख तब होता है, जब यही बच्चे प्रतिभावान होकर भी अच्छी शिक्षा से वंचित हो जाते हैं। उच्च शिक्षा के लिए निजी संस्थान उनसे भारी चंदे और माता-पिता की आय का ब्यौरा मांगते हैं।

माता-पिता की आर्थिक सामर्थ्य का एक छात्र की बौद्धिकता से क्या संबंध है? सरकार को ही इस विषय पर अवश्य सोचना होगा।

'स्कूल छोड़ने वालों में लड़कियां कम' शीर्षक बॉक्स फीचर यह सिद्ध करता है कि शिक्षा के प्रति छात्राओं की इच्छाशक्ति छात्रों की तुलना में कहीं अधिक है।

सौरभ कुमार मौर्य
वारंट ऑफिसर, एपीएस

इन पर भी लेख हों

योजना पत्रिका को मैं पिछले 3 वर्षों से पाठक हूं। आपसे निवेदन है कि पत्रिका में खाद्य वितरण प्रणाली, राशनिंग व्यवस्था, खाद्य प्रापण पद्धति इत्यादि के साथ ग्रामीण विशेषांक एवं शहरीकरण की दशा और दिशा के ऊपर निबंध दें वन संसाधन, स्वाइनफ्लू, बर्डफ्लू इत्यादि समस्याओं एवं सूनामी, भू-स्खलन, भूकंप, समुद्र एवं समुद्रतट, नदी इत्यादि पर भी लेख दें।

विनोद कुमार यादव
छपरा, सारण, बिहार

स्वाइन फ्लू पर लेख इस अंक में पढ़ें। *योजना* के आपदा प्रबंधन पर केंद्रित अप्रैल 2009 अंक में सूनामी, भूकंप, भूस्खलन आदि आपदाओं पर लेख शामिल हैं। –वरिष्ठ संपादक

योजना
आगामी अंक

दिसंबर 2009 विशेषांक

दिसंबर 2009 अंक विगत वर्षों की भांति **पूर्वोत्तर पर केंद्रित विशेषांक** होगा। इस वर्ष हमारा फ़ोकस मणिपुर पर होगा। इसमें हम समूचे पूर्वोत्तर क्षेत्र के साथ-साथ मणिपुर की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक आदि विभिन्न क्षेत्रों की योजनाओं/नीतियों और विकास पर समग्र दृष्टि डालेंगे। साथ ही विकास पथ पर पूर्वोत्तर की राह में मौजूद चुनौतियों और उनसे निपटने की संभावित नीतियों पर भी चर्चा करेंगे।

जनवरी 2010 विशेषांक

भारतीय गणतंत्र अपने 60वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। 60 वर्ष की इस यात्रा में हमारी उपलब्धियां क्या-क्या रही हैं? कहां-कहां हम पीछे रह गए? इस मौक़े पर विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों के गहन और बेबाक विश्लेषण और लाभ-हानि खाते के साथ *योजना* आपके सम्मुख उपस्थित होगा। ❑

Mains cum PT IAS 2010/11

भूगोल

द्वारा

अनिल केशरी

1. प्रतिदिन मानचित्र अवलोकन का अभ्यास जो प्रारम्भिक एवं मुख्य परीक्षा दोनों में उपयोगी।
2. कक्षा के अर्न्तगत अवधारणा एवं संकल्पना के विकास पर विशेष बल।
3. प्रश्नों के उत्तर लेखन एवं प्रतिदिन जांच की विशेष प्रणाली, फाइल मेन्टिनेन्स सिस्टम के अन्तर्गत।
4. शिक्षक के साथ व्यक्तिगत संपर्क जिससे छोटी-छोटी समस्याओं का सरलता से समाधान।
5. गत वर्षों में पूछे गए तथा संभावित प्रश्नों की आवश्यकता के आधार पर पूर्णतः संशोधित अध्ययन सामग्री।
6. विस्तृत कक्षा नोट्स जिससे मुख्य परीक्षा में लेखन सरल।
7. आकस्मिक जांच परीक्षा।
8. प्रत्येक खण्ड के पश्चात् जांच परीक्षा।
9. प्रारम्भिक परीक्षा हेतु वस्तुनिष्ट जांच परीक्षा।
10. प्रारंभिक परीक्षा हेतु प्रत्येक खंड पर विशिष्ट कक्षाएं।

नए पाठ्यक्रम के अनुरूप कक्षाएं

हमारा उद्देश्य – 'ज्ञान नहीं परिणाम'

विगत 3 वर्षों से भूगोल हिन्दी माध्यम में सर्वोच्च अंक लाने वाले छात्र हमारी कक्षा से रहें हैं।

कार्यशाला- 13 नवम्बर
प्रातः 11.00 बजे

कक्षा प्रारंभ -16 नवम्बर

कक्षा समयः- 6.00-9.00 सायं

भारत में सर्वाधिक बिकने वाली मानचित्रावली पुस्तक

विश्व का भूगोल
मानचित्रों में
लेखक- अनिल केशरी

भारत का भूगोल
मानचित्रों में
लेखक- अनिल केशरी

DISCOVERY®
...Discover your mettle

B-14, (Basement), Comm. Complex,
Mukherjee Nagar, Delhi-110 009

Contact us at : 32906050, 9313058532

YH-11/09/2

संपादकीय

भारत को सबसे तेज़ी से उभरने वाली अर्थव्यवस्था वाले देशों में प्रमुख स्थान दिलाने में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (एमएसएमई) की महती भूमिका रही है। देश के विनिर्माण क्षेत्र के उत्पादन का लगभग 45 प्रतिशत और कुल निर्यात का क़रीब 40 प्रतिशत इसी क्षेत्र में होता है। समावेशी विकास के इस युग में, सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य तो यह है कि एमएसएमई का यह क्षेत्र बड़ी संख्या में लोगों को रोज़गार उपलब्ध कराता है (अनुमान है कि वर्तमान में क़रीब 4 करोड़ 20 लाख लोग इस क्षेत्र में कार्यरत हैं) और अधिक बेहतर ढंग से संपत्ति के समान वितरण के साथ-साथ संतुलित क्षेत्रीय विकास के संवर्धन में भी समर्थ है।

एमएसएमई क्षेत्र, पूर्व में लघु उद्योग क्षेत्र के रूप में जाना जाता था और इस क्षेत्र को सदा ही सरकार का नीतिगत समर्थन मिलता रहा है। नब्बे के दशक के प्रारंभिक वर्षों में, संरक्षण-केंद्रित व्यवस्था में बदलाव की शुरुआत हुई और मुक्त अर्थव्यवस्था के झंझावातों का मज़बूती से सामना करने के इरादे से जीवटता और स्पर्धात्मकता बढ़ाने वाली नीतियों को अपनाया जाने लगा। वर्ष 2006 में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम विकास अधिनियम का पारित होना, खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग अधिनियम में संशोधन, एमएसएमई इकाइयों को प्रोत्साहित करने वाले व्यापक पैकेज़ों की घोषणा, राष्ट्रीय असंगठित क्षेत्र उद्यम आयोग का गठन, राष्ट्रीय विनिर्माण स्पर्धात्मकता कार्यक्रम, राजीव गांधी उद्यमी मित्र योजना, एमएसएमई क्लस्टर विकास योजना और इस तरह के अन्य अनेक कार्यक्रमों ने इस क्षेत्र को सुदृढ़ता प्रदान करने के साथ-साथ ऋण, अधोसंरचना, प्रौद्योगिकी और विपणन से संबंधित वर्षों पुरानी इसकी समस्याओं के समाधान में भी योगदान किया है। इस पूरी कसरत के दौरान इस क्षेत्र को अधिकाधिक स्पर्धात्मक बनाने और घरेलू एवं विदेशी, दोनों बाज़ारों में इसकी मौजूदगी बढ़ाने पर पूरा ज़ोर दिया जाता रहा है। इन प्रयासों का फल भी मिला है। एक करोड़ तीस लाख की क्षमता वाला एमएसएमई क्षेत्र न केवल 6,000 से अधिक वस्तुओं का उत्पादन करता है, बल्कि कुल 56 खरब रुपये के आकार वाला क्षेत्र होने का दावा भी करता है। समग्र औद्योगिक क्षेत्र से अधिक वृद्धिदर बनाए रखने के साथ-साथ एमएसएमई क्षेत्र, सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में क़रीब 6 प्रतिशत का योगदान कर रहा है।

अपने प्रभावी प्रदर्शन के बावजूद एमएसएमई क्षेत्र को देश में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है और इन पर तुरंत ध्यान देने की आवश्यकता है। पिछले दो वर्षों में इस क्षेत्र की ओर ऋण प्रवाह में दोगुनी वृद्धि हुई है, तथापि अधिकतर एमएसएमई इकाइयों को भारी वित्तीय अभाव का सामना करना पड़ रहा है। इसके साथ ही, विपणन, अधोसंरचना, नवीनतम प्रौद्योगिकी का अभाव और प्रशिक्षण जैसी समस्यायें तो हैं ही। वर्तमान वैश्विक आर्थिक संकट ने इस क्षेत्र के संकट को और भी बढ़ा दिया है। निर्यात की मांग में कमी आई है, बैंक छोटे उद्यमियों को ऋण देने में संकोच करने लगे हैं और प्रवासी कामगारों द्वारा देश भेजी जाने वाली राशि में कमी आई है और कारपोरेट क्षेत्र के ग्राहकों से मिलने वाली देरी से एमएसएमई क्षेत्र की समस्यायें और भी घनीभूत हो गई हैं। निस्संदेह सरकार ने प्रोत्साहन पैकेज़ों के जरिये सहारा देने का प्रयास किया है। भारतीय रिज़र्व बैंक ने भी मंदी के प्रभाव को कम करने के लिए उपयुक्त कदम उठाए हैं। परंतु इन सबके बावजूद अभी और भी बहुत कुछ किए जाने की आवश्यकता है। इसीलिए प्रधानमंत्री ने अगस्त '09 में एमएसएमई क्षेत्र की समस्याओं पर विचार करने के लिए 11 सदस्यों वाले कार्यबल का गठन किया है। इस कार्यबल की रिपोर्ट की प्रतीक्षा है। सरकार ने इस क्षेत्र के विकास के लिए जो प्रतिबद्धता दिखाई है, व्यापार एवं उद्योग संघों के साथ-साथ अनेक गैर-सरकारी संगठनों ने जो प्रयास किए हैं, साथ ही इन सबके अलावा हमारे उद्यमियों ने संकट का सामना करने में जिस धैर्य और साहस का प्रदर्शन किया है, उससे यह स्पष्ट है कि यह क्षेत्र शीघ्र ही नयी ऊंचाइयों को छूने में समर्थ होगा। ❑

सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों का वित्तपोषण मुद्दे एवं चिंतायें

● आर.एम. मल्ला

सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम औद्योगीकरण, रोज़गार सृजन, निर्यात वृद्धि और क्षेत्रीय संतुलन को बनाए रखने की प्रक्रिया में अपने उल्लेखनीय योगदान के कारण प्राय: सभी अर्थव्यवस्थाओं में नीति-निर्माताओं की पसंद बने हुए हैं। इन उद्योगों के समर्थन के लिए देशभर में चल रहे कार्यों को नज़दीक से देखने से पता चलता है कि इस क्षेत्र के विकास के प्रयास दो बुनियादी सिद्धांतों पर आधारित हैं- (i) सूक्ष्म, लघु एवं मझोले उद्योग (एमएसएमई) विकास को आगे बढ़ाने वाले इंजन हैं, और (ii) बाज़ार की खामियों से उनका विकास प्रभावित होता है। इसलिए इस क्षेत्र के विकास के लिए सरकारी समर्थन अनिवार्य और उचित है। जहां तक राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में इन उद्यमों (एमएसएमई) के योगदान का संबंध है, देशव्यापी आंकड़ों से पता चलता है कि निर्धन देशों में एक प्रकार से ये ही उभर रहे निजी क्षेत्र हैं और इस प्रकार निजी क्षेत्र नीति-विकास की नींव बन गए हैं (हॉलबर्ग, 2001)। विनिर्माण क्षेत्र में एमएसएमई का हिस्सा (250 कर्मचारियों को रोज़गार देने वाले) ग्रीस में लगभग 85 प्रतिशत है, जबकि इटली में 80 प्रतिशत, ब्राज़ील में 60 प्रतिशत और मेक्सिको में 50 प्रतिशत के आसपास हैं (स्रोत-अय्यागरी, बेक और डेमिरगुक- कंट-2003)। अनेक देशों में विनिर्माण क्षेत्र में रोज़गार में लगे कुल लोगों में से लगभग 60 प्रतिशत एसएमई (लघु और मध्यम श्रेणी) के उद्योगों में काम करते हैं।

भारतीय अनुभव

भारत सरकार द्वारा सन् 2006 में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम विकास अधिनियम को पारित करना, देश में लघु और सूक्ष्म उद्योगों के विकास के इतिहास में एक महान घटना मानी जाती है। इस कानून से उद्यमों की अवधारणा और मध्यम स्तर के उद्योगों को परिभाषित करने का जो प्रयास किया गया, उससे यह क्षेत्र और सशक्त होकर उभरा है। अब इसकी परिधि में ज्यादा उद्योग आने लगे हैं और इस क्षेत्र के उर्ध्व विकास के लिए अधिक अवसर और स्थान उपलब्ध हुए हैं। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारूप में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में इस क्षेत्र के महत्व को स्वीकार किया गया है। देश की अर्थव्यवस्था के समग्र संवर्धित औद्योगिक मूल्य में सूक्ष्म और लघु उद्योगों का योगदान 40 प्रतिशत से अधिक का है। देश के विनिर्माण क्षेत्र के कुल निर्यात में क़रीब 44 प्रतिशत हिस्सा लघु उद्योगों का ही है। रोज़गार सृजन के लिहाज़ से इस क्षेत्र का स्थान कृषि क्षेत्र के तुरंत बाद आता है। इस क्षेत्र में 3 करोड़ 50 लाख से अधिक लोग काम करते हैं।

यद्यपि भारतीय बैंकों के लिए ऋण वितरण का कोई लक्ष्य निर्धारित नहीं किया गया है, तथापि संस्थागत वित्त के मामले में सूक्ष्म और लघु उद्योगों को वरीयता दी जाती है। अनुमान है कि सूक्ष्म और लघु क्षेत्र के उद्योगों को दिए जाने वाले सावधि ऋणों की राशि बढ़कर 14 खरब 87 अरब 20 करोड़ रुपये तक पहुंच गई है। इसका अर्थ है कि योजनावधि में प्रतिवर्ष औसतन 24.1 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज़ की गई (भारत सरकार, 2006)। सूक्ष्म और लघु उद्योगों को प्रोत्साहन देना सरकार की वैकल्पिक नीतियों और कार्यक्रमों का प्रमुख हिस्सा रहे हैं। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने 28 अगस्त, 2009 को नयी दिल्ली में एमएसएमई को राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान करते हुए घोषित किया कि सरकार अगले पांच वर्षों में सूक्ष्म, लघु एवं मझोले उद्योगों (एमएसएमई) को दिए जाने वाले ऋण प्रवाह को दोगुना करने के लिए कदम उठाएगी। इससे देश की अर्थव्यवस्था के इस महत्वपूर्ण अंग के विकास के प्रति भारत सरकार की प्रतिबद्धता का पता चलता है।

एमएसएमई वित्त हेतु संस्थागत व्यवस्था

स्वतंत्रता के बाद से ही अर्थव्यवस्था के उत्तरोत्तर औद्योगीकरण पर प्रमुखता से ध्यान दिया जा रहा है ताकि आयात में कमी के लक्ष्य को हासिल किया जा सके। इसके साथ ही यह आर्थिक विकास का प्रमुख अभिकर्ता भी रहा है। दूसरी पंचवर्षीय योजना, जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र के भारी उद्योगों के संवर्धन पर काफी ज़ोर दिया गया था, में भी आर्थिक विकास और क्षेत्रीय संतुलन बनाए रखने की प्रक्रिया में लघु उद्योगों के महत्व को स्वीकार किया गया था। माना जाता है कि बहुत छोटे (सूक्ष्म) और लघु क्षेत्र के उद्योगों का विकास क्षेत्रीय स्तर ही पर बेहतर ढंग से हो सकता है, क्योंकि उसमें स्थानीय कौशल, स्थानीय कच्चे माल और खपत के तौर-तरीक़ों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। भारत सरकार ने इसीलिए 1951 में एसएफसी अधिनियम पारित किया ताकि विभिन्न राज्यों में बहुत छोटे और लघु उद्योगों के वित्त पोषण के लिए क्षेत्रीय वित्तीय संस्थाओं के तौर पर काम करने वाले राज्य वित्त निगमों की स्थापना की जा सके। भारत सरकार द्वारा पहले 1969 में और बाद में 1980 में प्रमुख बैंकों के राष्ट्रीयकरण और प्राथमिकता वाले क्षेत्र की अवधारणा के स्पष्टीकरण से सूक्ष्म और लघु उद्योगों को संस्थागत वित्तपोषण के मामले में क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। 1990 में भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक की स्थापना

से लघु उद्योगों के संस्थागत वित्त को नयी शक्ति मिली है। यह बैंक लघु उद्योगों के विकास, संवर्धन और वित्तीयन की शीर्ष संस्था है। इस प्रकार, कालांतर में सिडबी (भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक), वाणिज्यिक बैंक, एसएफसी (राज्यों के वित्त निगम), एसआईडीसी (राज्यों के लघु उद्योग विकास निगम), क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सहकारी बैंक जैसी अनेक संस्थागत सुविधाओं का एक व्यापक ढांचा तैयार हो गया है जो देश में सूक्ष्म और लघु उद्योगों के विकास और वित्त पोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

हाल के दिनों में, गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) जैसे अनेक संस्थागत साधन, विशेषकर सूक्ष्म वित्तीय संस्थायें, सूक्ष्म उद्योगों के लिए महत्वपूर्ण वित्तीय स्रोत के रूप में उभर कर सामने आए हैं। वर्तमान में सूक्ष्म उद्योगों को कर्ज़ देने के मामले में सूक्ष्म वित्तीय संस्थाओं (एमएफआई) ने औपचारिक संस्थाओं को कहीं पीछे छोड़ दिया है और वे अच्छी कमाई कर रही हैं, साथ ही सम्मान भी पा रही हैं।

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों (एमएसएमई) की ओर ऋण प्रवाह की हालिया प्रवृत्तियां

यद्यपि सूक्ष्म और लघु उद्यमों को ऋण देने के लिए एक व्यापक संस्थागत व्यवस्था बनी हुई है, ऐतिहासिक रूप से सूक्ष्म और लघु उद्यमों को बैंकों द्वारा दिया जाने वाले ऋण और कुल बैंक ऋण के प्रतिशत को ही इस क्षेत्र की ओर ऋण प्रवाह का संकेतक माना जाता है। बैंकिंग प्रणाली में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक ही सूक्ष्म और लघु उद्योगों को कर्ज़ देने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक द्वारा सूक्ष्म और लघु उद्यमों को दिए गए ऋणों की पिछले पांच वर्षों की बकाया राशि (मार्च '09 के अंत तक) का विवरण तालिका-1) में दिया गया है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में ज्यों-ज्यों खुलापन आता जा रहा है, वाहन और अन्य क्षेत्रों के अग्रणी निर्माता अपनी उत्पादन इकाइयां भारत में स्थापित कर रहे हैं और उसमें लगने वाले साजो-सामान की आपूर्ति सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों से ही प्राप्त कर रहे हैं। इससे इनवॉयस वित्तीयन अथवा चैनल वित्तीयन के रूप में व्यापार के अच्छे अवसर उपलब्ध हुए हैं। बैंक और गैर वित्तीय बैंकिंग कंपनियां (एनबीएफसी) इन अवसरों का लाभ उठा रहे हैं जिससे सूक्ष्म और लघु उद्यमों को मिलने वाले ऋण में वृद्धि हुई है। परंतु, ऋण देने की इस पद्धति की कुछ सीमाएं हैं, क्योंकि यह तेज़ी के दिनों में तो अच्छे से काम करती है, परंतु मंदी के दिनों में यह ढंग से काम नहीं करती। ऐसे में लघु इकाइयों की ऋण राशि बढ़ती जाती है और उत्पादित माल का ढेर लगता जाता है।

अग्रणी एमएसएमई उद्योग संघों के साथ अपनी बैठक में प्रधानमंत्री ने उनके प्रतिनिधियों को आश्वासन दिया कि आसन्न दुरूह आर्थिक परिदृश्य को दूर करने के लिए सरकार सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए हर संभव प्रयास करेगी। विभिन्न समस्याओं के निराकरण के लिए प्रधानमंत्री के प्रधान सचिव की अध्यक्षता में एक उच्चस्तरीय कार्यबल गठित किया गया। यह समूह विभिन्न हितधारियों के साथ परामर्श कर तीन महीने में सभी बकाया समस्याओं का समाधान करेगा। यह कार्यबल निम्नलिखित मुद्दों पर विचार करेगा :

- प्राथमिकता वाले क्षेत्र को ऋण प्रदान करने की योजना के अधीन सूक्ष्म उद्यमों को ऋण देने के लक्ष्य का निर्धारण।
- असंगठित क्षेत्र के लिए राष्ट्रीय कोष की स्थापना की संभाव्यता।
- सूक्ष्म उद्यमों के ऋणों पर ब्याज अनुदान।
- पूंजी बाज़ार में एमएसएमई के प्रवेश को सुगम बनाने हेतु एसएमई एक्सचेंज का गठन।
- श्रम कानूनों के सरलीकरण पर विचार।
- सार्वजनिक अर्जन (प्रापण) नीति सहित एमएसएमई उत्पादों के विपणन से जुड़े मुद्दे।
- दिवाला/दिवालियापन से जुड़े मुद्दे और विकास नीति।

सूक्ष्म उद्यमों के वित्त के मामले में एक अन्य महत्वपूर्ण बात जो देखने में आई है वह है क्षेत्रीय स्तर पर सुदृढ़ सूक्ष्म वित्त संस्थाओं का उभरकर सामने आना। इनमें से अनेक ने तो राष्ट्रीय स्वरूप ग्रहण कर लिया है। इन सूक्ष्म वित्त संस्थाओं का नेटवर्क देश के विभिन्न भागों में बहुत बड़ी संख्या में सूक्ष्म उद्योगों को कर्ज़ दिलाने में मदद कर रहा है। इन सूक्ष्म वित्त संस्थाओं के बढ़ते आकार ने कुछ राज्यों में राज्य वित्त निगमों (एसएफसी) की घटती भूमिका की भरपाई करने में महत्वपूर्ण योगदान किया है।

तालिका-1
सूक्ष्म और लघु उद्योगों की बकाया ऋण राशि

क्षेत्र	2005 मार्च अंत तक	2006 मार्च अंत तक	2007 मार्च अंत तक	2008 मार्च अंत तक	2009 मार्च अंत तक
सूक्ष्म राशि (करोड़ रुपये में)	34,315 (11%)	33,314 (-3%)	44,311 (33%)	66,702 (51%)	86,508 (29.7%)
(संख्या लाख में)	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध	17.69	33.3	35.9
लघु राशि (करोड़ रुपये)	33,319 (21%)	49,178 (48%)	60,392 (23%)	79,538 (32%)	1,04,460 (31.3%)
(संख्या लाख में)	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध	2.33	5.53	6.2
मझोले राशि (करोड़ रुपये)	67,634 (16%)	82,492 (22%)	1,04,703 (27%)	1,48,651 (42%)	1,90,968 (28.5%)
(संख्या लाख में)	17.71	18.86	20.02	39.12	42.1
कुल बैंक ऋण	7,18,722	10,17,614	13,17,705	13,64,268	16,94,313
कुल बैंक ऋण के प्रतिशत के रूप में मझोले उद्यमों का ऋण	9%	8%	8%	11%	11.2%

स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक एवं सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम मंत्रालय
आंकड़े प्रतिशत में

एमएसएमई वित्तीयन में समस्यायें और चिंताएं

ऋण किसी भी व्यवसाय की जीवन रेखा होती है और सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों के क्षेत्र के व्यवसाय में तो यह बात और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। अपर्याप्त और समय पर ऋण न मिलना, सूक्ष्म

और लघु उद्योगों की बड़ी पुरानी समस्या है। सूक्ष्म और लघु क्षेत्र के उद्यमियों द्वारा संस्थागत वित्त प्राप्त करने के मार्ग में जिन बाधाओं अथवा समस्याओं का सामना करना पड़ता है, वे हैं– गारंटी/गिरवी पर ज़ोर, बैंकों का नियमों से बंधा होना, सख्त नज़रिया, ऊंची ब्याज दरें और अन्य लागत, जटिल कागज़ी कार्यवाही, व्यवसाय के विकास की सहायक सेवाओं का अभाव आदि। बड़ी कंपनियों के विपरीत छोटे उद्यमों का पूंजी अभिवृद्धि और दीर्घकालीन ऋणों के लिए पूंजी बाज़ार का रुख़ करना काफी सीमित होता है। इसके अलावा, इस तरह की इकाइयों को प्रारंभिक चरण में सहारे और व्यवसाय के विकास के लिए सहायक सेवाओं की आवश्यकता होती है। प्राय: उन्हें परियोजना रिपोर्ट तैयार करने और हिसाब-किताब रखने के लिए भी सहायता की आवश्यकता होती है। किसी भी ऐसे नये उद्यम के लिए, जिनकी सफ़लता का पिछला कोई इतिहास नहीं है, वेंचर कैपिटल अथवा प्रारंभिक पूंजी मित्रों और संबंधियों से ही प्राप्त होती है और यह वह क्षेत्र है जहां मांगें आपूर्ति से कहीं अधिक होती हैं। विलंब अथवा अपर्याप्त कार्यकारी पूंजी से परियोजना पटरी से उतर सकती है और मामला बिगड़ सकता है। अधिक मांग से निपटने के लिए बैंकों में ज़ोखिम का अध्ययन करने की दक्षता और आईटी (सूचना प्रौद्योगिकी) क्षमता की आवश्यकता है। यदि धन प्राप्त करने की कुल लागत में कमी लाना है तो लेन-देन की लागत में कमी लानी होगी। हालांकि, अनेक बैंकों में इस क्षेत्र को ऋण मंजूर करने की प्रक्रिया को शीघ्र निपटाने के लिए विशिष्ट शाखाएं और योजनाएं हैं, फिर भी इन बैंकों से काफी अपेक्षाएं हैं। उनके सामने अनेक चुनौतियां हैं।

हाल के घटनाक्रम और निष्कर्ष

सूक्ष्म और लघु उद्यमों द्वारा संस्थागत वित्त प्राप्त करने के मार्ग में आ रही समस्याओं के निराकरण के लिए भारत सरकार और भारतीय रिज़र्व बैंक ने पिछले कुछ वर्षों में अनेक समितियों का गठन किया है और उनकी सिफ़ारिशों पर अमल भी किया है। ऋण से संबंधित समस्याओं के निराकरण के लिए किए गए कई प्रयास उल्लेखनीय हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

- भारत सरकार और सिडबी द्वारा क्रेडिट गारंटी फंड ट्रस्ट का संवर्धन और सूक्ष्म एवं लघु उद्यमों को ऋण देने हेतु गिरवी मुक्त और तीसरे पक्ष की गारंटी से मुक्त ऋण गारंटी योजना पर क्रियान्वयन। अनुभवों के आधार पर योजना के दायरे के विस्तार के साथ-साथ उसे अधिक प्रभावी एवं लोकप्रिय बनाया जा रहा है।
- सिडबी द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के साथ मिलकर केवल सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों हेतु विशिष्ट क्रेडिट रेटिंग एजेंसी का संवर्धन।
- सूक्ष्म और लघु उद्यमों के लिए प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) के शर्तों का उदारीकरण, ताकि धन प्राप्ति का अतिरिक्त साधन जुटाया जा सके।
- सूक्ष्म और लघु उद्यमों को बैंकों के लिए अधिक ग्राह्य बनाने के लिए क्रेडिट रेटिंग (साख निर्धारण) को आर्थिक सहायता देना।
- पूंजीगत आवश्यकता में निहित ज़ोखिम से निपटने के लिए केवल सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों के लिए समर्पित वेंचर कैपिटल फंड का संवर्धन।
- देश में सूक्ष्म उद्यमों को धन मुहैया कराने वाली ऋण संस्कृति के संवर्धन के लिए सूक्ष्म वित्त संस्थाओं हेतु अनुकूल वातावरण तैयार करना।
- सूक्ष्म और लघु उद्योगों के आकार-प्रकार में वृद्धि एवं समृद्धि में मदद के लिए सीमित भागीदारी अधिनियम का पारित होना।

उपर्युक्त प्रयास अधिकतर सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की ऋणों की मांग संबंधी समस्याओं का समाधान करते हैं, क्योंकि वे मुख्यत: ऋणियों अर्थात सूक्ष्म और लघु उद्योगों की समस्याओं के समाधान से ही संबंधित हैं। जहां तक आपूर्ति पक्ष का प्रश्न है, ऋणदाता अर्थात बैंकों और वित्तीय संस्थाओं की अपनी प्रासंगिक समस्यायें हैं, जो सूक्ष्म और लघु उद्योगों के ऋणों के प्रबंध को प्रभावित करती हैं। इनमें से कुछ ये हैं– उद्यमी का कमज़ोर इक्विटी आधार, ख़राब प्रबंधन और लेखा कर्म, विशेषकर मंदी के दिनों में बिलों के भुगतान में देरी, के कारण प्राप्य राशि का बढ़ता जाना आदि। यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि प्रतिभूति आधारित ऋणदायी वातावरण में बैंक और वित्तीय संस्थायें अपने कर्ज़ देने के निर्णय के समर्थन में प्रकाशित तुलन-पत्रों और विश्वसनीय व्यवसाय आदर्शों पर ज्यादा ध्यान देते हैं। इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि अनेक सूक्ष्म और लघु उद्यमों, विशेषकर पहली पीढ़ी के उद्यमियों के लिए ये बहुत बड़ी कमज़ोरियां हैं। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों को तेज़ी से ऋण प्रदान करने के साथ-साथ उपर्युक्त समस्याओं का समाधान भी ज़रूरी है। इस दिशा में कुछ सुझाव निम्नानुसार हैं :

- वित्तीय सेवाओं में 'वन स्टॉप शॉप' (एक ही स्थान पर सभी सेवाओं की सुविधा) जैसी व्यवस्था शुरू की जानी चाहिए, जहां एमएसएमई ऋणियों की सभी समस्याओं का निराकरण हो सके।
- एमएसएमई की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बैंकों और वित्तीय मध्यस्थों को प्रौद्योगिकी का समुचित प्रयोग करना चाहिए।
- वित्तीय मध्यस्थों का भरोसा जीतने के लिए एमएसएमई को अपना हिसाब-क़िताब और लेखाकर्म सुधारना होगा।
- ज़िला उद्योग केंद्रों, तकनीकी परामर्शदाता संगठनों आदि जैसी राज्य स्तरीय संस्थाओं में नयी जान डालनी होगी। यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि संभावित उद्यमियों की समस्याओं के समाधान के लिए ज़िला और ताल्लुका स्तर पर और सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र की भागीदारी के आधार पर व्यापार विकास केंद्रों (बीडीसी) जैसे सुविधा केंद्रों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।
- एमएसएमई क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने के लिए उद्योग संगठनों, तकनीकी संस्थाओं और अन्य हित-साधकों के सहयोग से राष्ट्रीय विनिर्माण स्पर्धात्मकता कार्यक्रम सही अर्थों में लागू किया जाना चाहिए।
- पूंजी बाज़ार में एमएसएमई की पहुंच को सुविधाजनक बनाने के लिए इस क्षेत्र के लिए खासतौर पर अलग से एक एक्सचेंज बनाए जाने की ज़रूरत है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के व्यापक हितों के लिए सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों का विकास वांछनीय है और इसीलिए नीतिगत हस्तक्षेप आवश्यक है। एमएसएमई के सतत विकास को सुनिश्चित करने के लिए क़िफ़ायती ऋणों के सतत प्रवाह की आवश्यकता है। एक ऐसे समग्र दृष्टिकोण पर अमल करने की आवश्यकता है जो एमएसएमई की ऋणों की मांग और आपूर्ति संबंधी समस्याओं का समाधान कर सके। ❑

(लेखक भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक हैं।
ई-मेल : rmmalla@sidbi.in)

संभाव्यता परखने का वक़्त

● रहीस सिंह

दुनिया में आए वित्तीय संकट के चरित्र और भविष्य की चुनौतियों को देखते हुए ऐसे आधारभूत प्रयास करने चाहिए जो इस आधारभूत क्षेत्र को और अधिक शक्तिशाली तथा प्रतिस्पर्धी बना सकें। इसके लिए लघु इकाइयों की पूंजीगत संरचना को मज़बूत करना, बेहतर विपणन सुविधाएं प्रदान करना, अल्पावधि व दीर्घावधि ऋण उपलब्ध कराने वाली विभिन्न वित्तीय एजेंसियों के बीच अधिक समन्वय स्थापित करना और तकनीकी दृष्टि से उन्नत बनाने के प्रयास करना अनिवार्य है

हाल ही में दुनिया के दो अर्थशास्त्रियों अमर्त्य सेन और जोसेफ स्टिंग्लिट्ज ने फ्रांस के राष्ट्रपति निकोलस सरकोजी को एक रिपोर्ट सौंपी। जिसमें इस बात का जायज़ा लिया गया है कि विकास के इस प्रतिस्पर्धी दौर में जीवनस्तर की गुणवत्ता में कितना सुधार हुआ है। यह रिपोर्ट स्पष्ट तौर पर कहती है कि जीडीपी यानी विकासदर के आंकड़े सही अर्थों में किसी देश की अर्थव्यवस्था की सेहत बता पाने में असमर्थ हैं। दोनों अर्थशास्त्रियों का कहना है कि जीडीपी के अलावा समाज के दूसरे पहलुओं पर भी गौर किया जाना चाहिए जिनका हमारे जीवन पर असर पड़ता है। अब अगर यही बात भारत के संदर्भ में देखें तो पाएंगे कि भारत अतीत की तुलना में काफी आगे निकल गया है और अब यह दुनिया की सबसे तेज़ गति से विकास करने वाली दूसरी अर्थव्यवस्था है। पिछले तीन वर्षों के दौरान उसने कमोबेश नौ प्रतिशत की विकास दर को हासिल किया और अभी भी इसमें छह से साढ़े छह प्रतिशत का लक्ष्य हासिल करने की क्षमता दिखाई दे रही है। लेकिन इसका स्याह पक्ष यह है कि भारतीयों का एक बड़ा भाग ग़रीबी, निरक्षरता, भोजन और आधारभूत स्वास्थ्य सेवाओं से महरूम ज़िंदगी जी रहा है। आखिर विकास के इन दोनों पहलुओं के मध्य साम्य क्यों नहीं है?

इस स्थिति को देखकर बरबस महात्मा गांधी और टैगोर के मध्य एक छोटी-सी बहस याद आ गई जिस पर यदि अमल हो तो शायद जीवन की गुणवत्ता में आधारभूत सुधार भी हो जाए। गांधी और टैगोर के मध्य यह बहस चरखे को लेकर होती है जिसमें टैगोर गांधी के स्वावलंबन के लिए चरखा के सूत्र से सहमत नहीं थे। गांधीजी कहते थे कि मशीनें सार्वजनिक शारीरिक श्रम को समाप्त कर देती हैं। श्रम की खरीद-बिक्री होने लगती है और पूंजीवाद का

तालिका-1

सूक्ष्म और लघु उद्यमों का निष्पादन

वर्ष	इकाइयों की संख्या (लाख में)			उत्पादन	रोज़गार	निर्यात
	पंजीकृत	अपंजीकृत	कुल	(करोड़ रु.में)	(लाख में)	(करोड़ रु.में)
2002-03	16.03	93.46	109.49 (4.1)	3,06771 (8.7)	263.68 (4.5)	86.013 (20.7)
2003-04	17.12	96.83	113.95 (4.1)	3,36,344 (9.6)	275.30 (4.4)	97,644 (13.5)
2004-05	18.24	100.35	118.59 (4.1)	3,72,938 (10.9)	287.55 (4.5)	1,24,417 (27.4)
2005-06	19.30	104.12	123.42 (4.1)	418884 (12.3)	299.85 (4.3)	1,50,242 (20.8)
2006-07	20.32	108.12	128.44 (4.1)	471663 (12.6)	312.52 (4.2)	अनुपलब्ध

स्रोत : आर्थिक समीक्षा, 2007-08

नोट : कोष्ठक में दी गई संख्या पिछले वर्ष के मुक़ाबले वृद्धि को प्रदर्शित करती है।

विकास होता है। पूंजीवाद ग्रामीण स्वराज्य की अर्थव्यवस्था को समाप्त कर देता है। संपत्ति के समान वितरण के लिए श्रम का समान वितरण एक आवश्यक शर्त है। गांधीजी का प्रयास प्रत्येक को स्वावलंबी बनाने का था। शायद यही कारण है कि गांधीजी ने स्वावलंबन के लिए चरखे की वकालत की, जो अधिकांश लोगों को रोज़गार और आत्मनिर्भरता प्रदान कर सकता था। गांधीजी भारत की औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था में भूख और ग़रीबी से लोगों को जूझते हुए बड़े निकट से देख रहे थे, इसलिए उनकी चिंता व्यावहारिक थी, न कि शास्त्रीय। उनका कथन है कि ''ये भूखे लोग पशु के समान हैं। ऐसे में इनसे काम लेने की समस्या कैसे हल हो सकती है ? मैं चरखे के प्रसार के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं देख रहा हूं।'' गांधीजी का कहना था ब्रिटिश शासन से पीड़ित आम भारतवासी को रोटी की आवश्यकता है। यह रोटी उसे रोज़गार के माध्यम से पहुंचानी चाहिए। ब्रिटिश शासन के सहयोग से रोज़गार उत्पन्न करना संभव नहीं था इसलिए यह कार्य चरखे के माध्यम से हो सकता था। गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर गांधीजी की इस बात से बिल्कुल सहमत नहीं थे क्योंकि वे मानते थे लोगों के स्वभाव भिन्न-भिन्न होते हैं। वे एक गांव में बड़े-छोटे के बीच संबंधों पर ज़ोर देते हुए कहते हैं :

''किसान के दिमाग की विशेष क्षमताएं हैं। उसके लिए खेती का काम सबसे अधिक आरामदेह है। किसान को चरखा चलाने को कहना उसके दिमाग को अव्यवस्थित करता है। फिर भी हो सकता है थोड़े समय के लिए वह यह कार्य अत्यधिक परिश्रम से करे अपनी ऊर्जा बर्बाद करे।''

गांधी टैगोर के विचार का जवाब कुछ इस प्रकार देते हैं ''मैं कवि को चरखा धार्मिक अनुष्ठान के रूप में चलाने को नहीं कह रहा हूं। जब घर में आग लगी होती है तो सभी बाहर आकर एक-एक बाल्टी लेकर आग बुझाने का प्रयास करते हैं। मेरा मानना यह है कि भारत एक ऐसा घर है जिसमें आग लगी हुई है क्योंकि यहां पौरुष प्रतिदिन झुलस रहा है। यहां लोगों के पास भोजन ख़रीदने के लिए रोज़गार नहीं है। भूख वह तर्क है जिसके कारण भारतवासी चरखा चला रहे हैं।''

वे आगे कहते हैं कि ''(कवि) हमारे सामने एक सुंदर दृश्य रखते हैं जिसमें प्रात:काल चिड़िया आसमान में ऊंचा उड़ती हुई गीत गा रही है। पर यहां चिड़ियों में इतनी भी शक्ति नहीं कि वे अपने पंख फड़फड़ा सकें। करोड़ों भूखे लोग सिर्फ़ एक कविता चाहते हैं- पौष्टिक भोजन की।''

गौर से देखें तो आज भी स्थिति बहुत बदली नहीं है। विश्व बैंक के नये प्रतिमानों के आधार पर भारत में ग़रीबी रेखा से नीचे बसर करने वालों की संख्या गांधी जी के जमाने की कुल आबादी से अधिक हो जाती है। विश्व बैंक की बात तो छोड़ ही दीजिए असंगठित क्षेत्र के लिए गठित राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट को देखें तो पता चल जाएगा कि भारत के 77 प्रतिशत लोग अभी भी प्रतिदिन 20 रुपये से भी कम आय पर जीवनयापन कर रहे हैं। कुछ दशक पहले जाकर देखें, जब (60 के दशक में) जवाहरलाल नेहरू और राममनोहर लोहिया छह आने और एक रुपये प्रतिदिन आय पर बहस कर रहे थे, तो पाएंगे कि यह 20 रुपये की मात्रा उससे भी कम है। फिर हमने असल में पिछले 50 वर्षों में ज़िंदगी के पैमाने पर विकास का कितना सफ़र तय किया है ? ऐसा शायद इसलिए हुआ क्योंकि केंद्रीय आयोजना ने विकास की एक ऐसी संरचना निर्मित की जिसने प्रदर्शित तो बहुत किया लेकिन आधारभूत चीज़ों को छोड़ गया। परिणाम यह हुआ कि शहर तो चमकने लगे लेकिन गांव की झोपड़ी में कोई खास परिवर्तन नहीं हो सका। बड़े उद्योगों की चिमनियां दूर से दिखने लगीं लेकिन लघु और मझोले उद्योगों की तमाम चिमनियों से निकलने वाला धुंआ गायब हो गया। स्वाभाविक है कि विकास ग्राम, कस्बे और नगर के स्तर पर समान नहीं होता। अब जब 11वीं पंचवर्षीय योजना में समावेशी विकास को केंद्रीय विषय के रूप में चुना गया है तो ज़रूरी है कि लघु स्तर की इकाइयों पर ज्यादा ध्यान दिया जाए जो उत्पादन, रोज़गार और निर्यात में बड़े उद्योगों की अपेक्षा बेहतर प्रदर्शन कर रही हैं।

तालिका-2

लघु उद्योग क्षेत्र के लिए मदों के आरक्षण की प्रवृत्ति

वर्ष	आरक्षित मदों की संख्या
अप्रैल 1967	504
अप्रैल 1978	807
मई 1980	833
अक्तूबर 1984	873
जुलाई 1989	836
अप्रैल 1999	812
मई 2002	749
जून 2003	675
अक्तूबर 2004	605
मार्च 2005	506
मई 2006	326
जनवरी 2007	239
13 मार्च, 2007	114
5 फरवरी, 2008	35

स्रोत : आर्थिक समीक्षा 2006-07, 2007-08 एवं 2008-09

विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में लघु उद्योगों को बढ़ावा देना सबसे अधिक तर्कसंगत पक्ष है क्योंकि इनमें श्रमिकों की बहुलता और उसके कारण होने वाले समांतर वितरण, लचीलापन तथा उद्यमशीलता के विकेंद्रीकरण एवं संवर्धन की उनकी क्षमता विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को आगे ले जाने में तो मदद करती ही है साथ ही में विकास के समावेशी वितरण को भी बढ़ावा देती है। भारतीय रिज़र्व बैंक के पूर्व गवर्नर सी. रंगराजन का मानना है कि उद्योगों को भौगोलिक तथा उत्पादन की दृष्टि से व्यापक आधार प्रदान करने में लघु उद्योगों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण है। लघु उद्योग उन वस्तुओं के उत्पादन तथा सेवाओं के क्षेत्र में सर्वाधिक उपयोगी हैं जो पैमाने की दृष्टि से सामान्य होते हैं। अलबत्ता, कुछ वस्तुओं का उत्पादन पैमाने को काफी हद तक प्रभावित भी करता है। उदाहरण के तौर पर हाल में संचार तथा कंप्यूटर प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुई प्रगति ने दुनियाभर में औद्योगिक संरचना को प्रभावित किया है। एक अनुमान के मुताबिक अमरीका का लगभग 50 प्रतिशत निर्यात उन कंपनियों द्वारा किया जा रहा है जिनमें 19 या इससे भी कम कर्मचारी काम कर रहे हैं। यही नहीं हमारी पड़ोसी और दुनिया की सबसे तीव्र गति से विकास कर रही रही चीनी अर्थव्यवस्था को ही लें तो आंकड़े बताते हैं कि उसे इस मुकाम तक लाने में लघु और मझोले उद्यमों की आधारभूत भूमिका रही है।

भारतीय छोटे एवं लघु उद्यमों को घरेलू एवं वैश्विक प्रतिस्पर्धा के बढ़े हुए स्तरों में लाने के साथ ही आर्थिक उदारीकरण एवं बाज़ार सुधारों की प्रक्रिया ने बड़े उद्यमों के साथ छोटे एवं लघु उद्यमों के लिए बड़े बाज़ारों तक पहुंचने की एवं उनके साथ सशक्त एवं गहरे

संबंधों की लुभावनी संभावनाओं का मार्ग प्रशस्त किया है। बेहतर विनिर्माण तकनीकों एवं प्रबंधन प्रक्रिया को ज्यादा आसानी से लगाया एवं स्वीकार किया जा सकता है। सुदृढ़ एवं प्रगतिशील छोटे एवं लघु उद्यम संगठन इन नये अवसरों का लाभ उठा सकते हैं। यदि समुचित समर्थनकारी नीतियां आगे की जाती हैं और सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र में क्षमता निर्माण के उपाय किए जाते हैं तो प्रतिस्पर्धा एवं तेज़ी से हो रहे तकनीकी परिवर्तनों के इस वातावरण में यह घटक अपनी तकनीकी क्षमताओं को बढ़ाकर अपनी उत्पाद एवं सेवा गुणवत्ता को विश्व स्तर का बना और नवाचार के तरीक़ों की खोज कर उच्च सतत वृद्धि प्राप्त कर सकता है। आंकड़ों पर गौर करें तो सूक्ष्म और लघु उद्योग(एमएसई) देश के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में अनुमानित तौर पर 31.2 लाख लोगों को रोज़गार मुहैया कराते हैं। वर्ष 2003-07 के दौरान इस क्षेत्र ने उद्योगों की संख्या, उत्पादन, रोज़गार और निर्यात में लगातार बढ़त दर्ज़ की है। अनुमान किया जा रहा है कि 31 मार्च, 2007 की स्थिति के अनुसार देश में लगभग 128.44 लाख लघु उद्यम हैं जिनका योगदान विनिर्माण क्षेत्र में उत्पादन के सकल मूल्य का लगभग 39 प्रतिशत है। वर्ष 2002-03 से वर्ष 2006-07 तक इन इकाइयों की कार्यक्षमता और निष्पादन क्षमता को तालिका 1 में देखा जा सकता है।

इस क्षमता को देखते हुए सूक्ष्म और लघु उद्योगों की आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में संभाव्यता को नकारा नहीं जा सकता। लेकिन चिंता का विषय यह है कि इस क्षेत्र में बीमार इकाइयों की संख्या पिछले वर्षों के दौरान तेज़ी से बढ़ी है। इस संदर्भ में ताज़ा आंकड़े अप्राप्त होने के कारण स्पष्ट संख्या नहीं बताई जा सकती लेकिन साढ़े चार लाख से अधिक इकाइयां बीमार हैं। इन औद्योगिक इकाइयों के बीमार होने के कारण हैं- अधिसंरचनात्मक सुविधाओं का अभाव तथा बेहतर वित्तीय और बैंकिंग सुविधाओं का उपलब्ध न होना। आज जिस तरह से बड़े कारपोरेट घराने राष्ट्रीय पूंजी और वित्तीय सुविधाओं पर कब्ज़ा जमाते जा रहे हैं वह लघु औद्योगिक इकाइयों की सेहत के लिए बहुत ही हानिकारक है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि जब हम वैश्विक अर्थव्यवस्था का हिस्सा बने, तो लघु स्तर की इकाइयों के साथ सौतेला व्यवहार करना आरंभ कर दिया गया जिससे उनके सामने अस्तित्व का संकट अधिक पैदा हो गया। सरकारी आंकड़े जो भी कहें लेकिन पहले पश्चिमी उत्तर प्रदेश में 100 किमी की यात्रा करने पर लघु स्तर की चीनी, तथा अन्य इकाइयों की जो झलकियां दिख जाती थीं अब वे खंडहरों में तब्दील हो गई हैं। वैश्विक प्रतिस्पर्धा अब केवल बड़े स्तर पर नहीं रह गई है बल्कि वह पूंजीगत वस्तुओं से लेकर घरेलू उपभोग की वस्तुओं तक पसर गई है। अब विकासशील देशों की अर्थव्यवस्थाओं के बराबर की हैसियत रखने वाले अमरीका की रिटेल शृंखलाएं खुदरा बाज़ार में प्रतिस्पर्धा करने के लिए कदम बढ़ा चुकी हैं। इस स्थिति में इन उद्योगों को सुरक्षित रखने के लिए यह ज़रूरी है कि कुछ लघु औद्योगिक इकाइयों द्वारा उत्पादित मदों को आरक्षित रखा जाए ताकि घरेलू बाज़ार में होने वाली अन्यायी प्रतिस्पर्धा से वे बचे रहें। लेकिन यह संभव नहीं हो सका। सरकार ने कुछ ऐसे तर्कों का सहारा लेकर इनकी आरक्षित मदों को समाप्त कर दिया जो प्रतिस्पर्धी बाज़ार में इनकी स्थिति कमज़ोर बना रहे हैं। लेकिन इनकी संवदेनशील स्थिति को वैश्विक व्यवस्था और कारपोरेट दबावों के आगे अनदेखा करना ज्यादा उचित समझा गया। अस्सी के दशक तक लघु औद्योगिक इकाइयों के लिए अधिक मदों को आरक्षित रखा गया था, परंतु विश्व व्यापार संगठन का हिस्सा बनने के बाद से भारत सरकार इन्हें लगातार कम करती गई और वर्ष 2008 में आकर इन मदों की संख्या मात्र 35 रह गई, जो 1988 में 873 थी। लघु उद्योग क्षेत्र के द्वारा उत्पादन के लिए मदों के आरक्षण की स्थिति को तालिका 2 में देखा जा सकता है।

इस प्रकार से देखा जाए तो अब सूक्ष्म, लघु और मझोले उद्योगों को अधिक प्रतिस्पर्धा करनी पड़ रही है, क्योंकि मदों की आरक्षण व्यवस्था, जो इनके लिए रक्षात्मक ढाल की तरह थी, अब समाप्त हो चुकी है। शायद यही कारण भी है कि लघु और मझोले उद्योगों की स्थिति में गिरावट दर में तेज़ी आई है और श्रम तथा निर्यात में उनका योगदान घटा है। असल बात तो यह है कि घरेलू मामलों में इसकी बेहतर कार्यक्षमता के प्रदर्शन का दावा करने के बावजूद

सूक्ष्म, लघु एवं मझोले उद्यम विकास अधिनियम, 2006 के कुछ प्रमुख प्रावधान

- यह अधिनियम 'उद्यम (विनिर्माण एवं सेवाओं दोनों) की अवधारणा की स्वीकारोक्ति एवं इन उद्यमों के लिए तीन स्तरों अर्थात सूक्ष्म (माइक्रो), लघु (स्मॉल) एवं मझोले (मिडिल), के एकीकरण के लिए अपनी तरह की पहली कानूनी रूपरेखा विहित करता है।
- अधिनियम के अंतर्गत उद्यमों को मुख्य रूप से दो श्रेणियों में विभक्त किया गया है- (1) विनिर्माण; एवं (2) सेवाएं।
- इन दोनों श्रेणियों को इसके अतिरिक्त, संयंत्र एवं मशीनों में निवेश (विनिर्माण उद्यमों के लिए) अथवा उपस्करों (उन मामलों में जहां उद्यम सेवाएं उपलब्ध करा रहा है) के आधार पर छोटे, लघु एवं मझोले उद्यमों के रूप में वर्गीकृत किया गया है जो निम्नलिखित हैं:

  विनिर्माण उद्यम : इसके लिए तीनों श्रेणियों के उद्योगों को निम्नलिखित निवेश सीमा आधारों में विभक्त किया गया है :

  छोटे उद्यम : निवेश सीमा 25 लाख रुपये तक।

  लघु उद्यम : निवेश सीमा 25 लाख रुपये से 5 करोड़ रुपये।

  मझोले उद्यम : निवेश सीमा 5 करोड़ रुपये से 10 करोड़ रुपये।

  सेवा उद्यम : सेवा उद्यम में तीनों श्रेणियों के उद्योगों को निम्नलिखित निवेश सीमा आधारों में विभक्त किया गया है :

  छोटे उद्यम : निवेश सीमा 10 लाख रुपये तक।

  लघु उद्यम : निवेश सीमा 10 लाख रुपये से 2 करोड़ रुपये।

  मझोले उद्यम : निवेश सीमा 2 करोड़ रुपये से 5 करोड़ रुपये।
- यह अधिनियम राष्ट्रीय स्तर पर एक सांविधिक सलाहकार तंत्र की स्थापना को विहित करता है जिसमें हितधारियों के सभी वर्गों का व्यापक प्रतिनिधित्व होगा, खासकर उद्यमों की तीन श्रेणियों का और बोर्ड एवं केंद्रीय/राज्य सरकारों का सहयोग करने के लिए सलाहकार समिति होगी।

❑

अपने आर्थिक प्रतिस्पर्धी चीन के मुक़ाबले हम काफी पीछे हैं। चीन में कस्बाई और ग्रामीण औद्योगिक इकाइयों ने चीन के ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। चीन में गैर-कृषि ग्रामीण क्षेत्र के तीव्र विकास के कारण पिछले 15 वर्षों में ग्रामीण प्रतिव्यक्ति आय में 4 गुना वृद्धि हुई है। वहां लघु और मझोले उद्योग देश के सकल उत्पादन मूल्य में 56 प्रतिशत योगदान करते हैं और लगभग 8 करोड़ के आसपास लोग इन इकाइयों में रोज़गार पाते हैं। इसी का परिणाम है कि पूरे एशियाभर में चीनी उत्पादों की भरमार है। उत्तर भारत के घरों का जायज़ा लें तो बिजली, इलेक्ट्रॉनिक, रसोई के सामान और खिलौनों में तो चीनी उत्पादों ने कमाबेश एकाधिकार जैसी स्थिति प्राप्त कर ली है। इस दृष्टि से भारत सरकार को अपने पड़ोसी मुल्क से उत्पाद बाज़ार में प्रतिस्पर्धा करने के लिए तथा रोज़गार क्षेत्र में तीव्र प्रगति के लिए इस क्षेत्र पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

सरकारी सक्रियता

सूक्ष्म, लघु और मझोले उद्यम क्षेत्र की दिशा में केंद्र सरकार पिछले कुछ वर्षों से ध्यान देने लगी है, जिसके परिणाम बेहतर आने की उम्मीद की जा सकती है। 2009-10 के बजट में वित्तमंत्री ने घोषणा की है कि सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों को सरकार से सहायता मिलती रहेगी। उन्होंने इस क्षेत्र में व्याप्त कुछ ग़लत धारणाओं को दूर करने की प्रतिबद्धता ज़ाहिर करते हुए संसद को बताया कि विगत चार वर्षों के दौरान, जिनके आंकड़े उपलब्ध हैं, पंजीकृत यूनिटों की संख्या, अपंजीकृत यूनिटों की संख्या, उत्पादन रोज़गार और निर्यातों में लगातार वृद्धि हुई है। सरकार ने इस क्षेत्र को प्रोत्साहित करने के लिए भारतीय लघु उद्योग और विकास बैंक(सिडबी) में ज़ोखिम पूंजी निधि के सृजन करने का प्रस्ताव भी इस बजट में किया है। सरकार के महत्वपूर्ण प्रयासों में एक यह है कि सिडबी गारंटी शुल्क को 1.5 प्रतिशत से घटाकर 1 प्रतिशत तथा 5 लाख रुपये तक के ऋण के लिए वार्षिक सेवा शुल्क 0.75 प्रतिशत से घटाकर 0.5 प्रतिशत करने की घोषणा की गई। इसके अतिरिक्त छोटे एवं लघु उद्यमों को उनकी प्रतिस्पर्धा क्षमता बढ़ाने, प्रतिस्पर्धा की चुनौती का सामना करने के लिए एवं वैश्विक बाज़ार के लाभों का फायदा उठाने के लिए समर्थ बनाने हेतु सरकार द्वारा किए गए उपायों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं सूक्ष्म, लघु एवं मझोले उद्यम विकास (एमएमईडी) अधिनियम, 2006 को लागू करना(देखें बॉक्स) जिसमें सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग क्षेत्र की परिभाषा और क्षेत्राधिकार का विस्तार किया गया है। इसके अतिरिक्त अधिनियम में पहली बार मझोले उद्यमों को भी परिभाषित किया गया है।

हाल ही में सरकार द्वारा सूक्ष्म, लघु और मझोले उद्योग क्षेत्र के पुनरुत्थान के लिए पहल की गई है, जिनमें कुछ निम्नलिखित हैं :

- फरवरी 2007 में सूक्ष्म और लघु उद्यमों के संवर्धन के लिए एक पैकेज़ की घोषणा जिसमें ऋण, राजकोषीय सहायता समूहन आधारित विकास, अवसंरचना, प्रौद्योगिकी तथा विपणन की समस्याओं के निदान के उपाय शामिल हैं।
- ऋण गारंटी योजना को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए निम्नलिखित परिवर्तन किए गए हैं :
  - अर्ह-ऋण सीमा को 25 लाख रुपये से बढ़ाकर 50 लाख रुपये किया गया है।

निम्नलिखित के लिए गारंटी कवर का विस्तार 75 प्रतिशत से बढ़ाकर 80 प्रतिशत किया गया है :

- 5 लाख रुपये तक के ऋण वाले सूक्ष्म उद्यम
- महिलाओं के स्वामित्वाधीन या संचालनाधीन एमएसई और
- पूर्वोत्तर क्षेत्र में सभी ऋणों के लिए एकबारगी गारंटी शुल्क कम करके 1.5 प्रतिशत से 0.75 प्रतिशत करना।

बहरहाल, दुनिया में आए वित्तीय संकट के चरित्र और भविष्य की चुनौतियों को देखते हुए अब ऐसे आधारभूत प्रयास करने चाहिए जो इस आधारभूत क्षेत्र को और अधिक शक्तिशाली तथा प्रतिस्पर्धी बना सकें। इसके लिए लघु इकाइयों की पूंजीगत संरचना को मज़बूत करना, बेहतर विपणन सुविधाएं प्रदान करना, अल्पावधि व दीर्घावधि ऋण उपलब्ध कराने वाली विभिन्न वित्तीय एजेंसियों के बीच अधिक समन्वय स्थापित करना और तकनीकी दृष्टि से उन्नत बनाने के प्रयास करना अनिवार्य है। सरकार इस दिशा में प्रगतिशील कदम उठा रही है लेकिन वैश्विक प्रतिस्पर्धा को देखते हुए इनकी मात्रा अपेक्षा से कम है। इनके प्रदर्शन की संभाव्यता इनके बेहतर प्रतिस्पर्धी होने का संकेत देती है, इसलिए उपेक्षा से तो किसी लाभ की आशा नहीं की जा सकती। अब वक्त आ गया है कि छोटे उद्यमों को और मज़बूत आधार देकर उनकी संभाव्यता को परखा जाए। ❑

(लेखक आर्थिक मामलों के विशेषज्ञ हैं।
ई-मेल : raheessingh@gmail.com)

अपने लेख हमें ई-मेल करें

आप हमें अपने लेख और पत्र ई-मेल भी कर सकते हैं। ई-मेल करने इसके लिए कृतिदेव फांट इस्तेमाल करें और वर्ड ओपन फाईल exeed.yojana@gmail.com अथवा yojanahindi@gmail.com पर भेजें। एक से अधिक लेखकों के नाम केवल विशेष शोध लेखों पर ही दें। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा वे स्वीकार नहीं की जा सकेंगी। रचना के प्रकाशन के संबंध में किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार अथवा फोन न करें। विशेष अवसरों के लिए लेख तीन माह पूर्व प्राप्त हो जाने चाहिए। रचनाओं के साथ यथासंभव प्रासंगिक चित्र भी भेजें। डाक से भेजे जाने वाले लेखों की एक प्रति सीडी में भी भेजें। वापसी के लिए कृपया टिकट लगा और पता लिखा लिफ़ाफ़ा संलग्न करें।

– वरिष्ठ संपादक

उद्यम समूहों का विकास

● तमल सरकार

क्लस्टर सूक्ष्म, लघु, मध्यम और यहां तक कि बड़े उद्यमों का एक समूह होता है; जिनमें एक ही प्रकार की वस्तुओं (अथवा सेवाओं) का उत्पादन होता है और जो भौगोलिक दृष्टिकोण से कुछ गांवों में अथवा एक ही शहर और उसके आसपास के क्षेत्रों में या एक ही ज़िले के कुछ विकास खंडों में संकेंद्रित होते हैं। यदि किसी उद्यम समूह में सूक्ष्म, लघु अथवा मध्यम और बड़ी सभी प्रकार की कंपनियां शामिल होती हैं तो उसे औद्योगिक क्लस्टर कहा जाता है। कपड़ा, इंजीनियरिंग, रसायन आदि जैसे पारंपरिक वस्तुओं का उत्पादन करने वाले उद्यम समूहों को पारंपरिक विनिर्माण कलस्टर कहा जाता है। सॉफ्टवेयर, बायोटेक आदि जैसे उच्च प्रौद्योगिकी वाले उत्पादों वाले उद्यम समूहों को हाईटेक (उच्च प्रौद्योगिकी) क्लस्टर कहा जाता है। पर्यटन, परिवहन आदि जैसी सेवाओं संबंधी उत्पाद प्रदान करने वाले उद्यम समूहों को सेवा क्लस्टर कहा जाता है। परंतु केवल सूक्ष्म उद्यमों वाले क्लस्टरों को सूक्ष्म उद्यम समूह (माइक्रो इंटरप्राइज़ क्लस्टर) कहते हैं। वे सूक्ष्म उद्यम समूह जिनमें हस्तशिल्प और हथकरघा उत्पाद तैयार होते हैं, कारीगर (आर्टीजन) क्लस्टर कहलाते हैं।

भारत में उद्यम समूहों की मौजूदगी

उद्यम समूहों में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों का अस्तित्व दशकों, यहां तक की सदियों पुराना है। इस प्रकार के उद्यम समूह विकसित और विकासशील दोनों श्रेणियों के देशों में बहुतायत से पाए जाते हैं। विश्व के 50 से अधिक देशों में उद्यम समूह देखे गए हैं। विशेष रूप से 22 देशों में 1,000 से अधिक उद्यम समूहों की पहचान की गई है।

भारत में 636 पारंपरिक विनिर्माण उद्यम समूह हैं। परंतु इनका फैलाव काफ़ी आड़ा-तिरछा है। 12 राज्यों में 88 प्रतिशत उद्यम समूह हैं। इन 12 राज्यों के 52 ज़िलों में 55 प्रतिशत उद्यम समूह संकेंद्रित हैं। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु वे कुछ राज्य हैं जो पारंपरिक विनिर्माण उद्यम समूहों की दृष्टि से काफ़ी संपन्न माने जाते हैं।

इनमें से कई उद्यम समूह अपने नाम से प्रसिद्ध हैं। लुधियाना के बुने हुए ऊनी कपड़ों के उद्यम समूह में भारत के कुल का 9 प्रतिशत ऊनी वस्त्रों का उत्पादन होता है। इसी प्रकार, तिरुपुर में 60 प्रतिशत सूती होजियरी का उत्पादन होता है। सूरत में सिंथेटिक कपड़ों का 8 प्रतिशत, जालंधर में खेल सामग्री का 65 प्रतिशत, नारियल रेशों के उत्पादों का 80 प्रतिशत अलप्युज़ा में उत्पादन होता

तालिका-1
भारत में पारंपरिक विनिर्माण उद्यम समूहों का संकेंद्रण

क्र.सं.	राज्य (क्लस्टर)	जिला 1	जिला 2	जिला 3	जिला 4	जिला 5	योग का प्रतिशत
1.	उत्तर प्रदेश (83)	कानपुर (14)	मेरठ (8)	गौतमबुद्ध नगर (9)	इलाहाबाद (4)	आगरा (4) गाजियाबाद (3)	51
2.	महाराष्ट्र (74)	मुंबई (11)	नागपुर (8)	पुणे (8)	कोल्हापुर (8)	ठाणे (8)	58
3.	गुजरात (63)	अहमदाबाद (21)	राजकोट (13)	भावनगर (6)	सूरत (4)	बड़ोदरा (2)	74
4.	तमिलनाडु (61)	कोयम्बटूर (10)	चेन्नई (7)	विरुद्धनगर (6)	मदुरै (4)	इरोड (3) सलेम (3)	58
5.	आंध्र प्रदेश (55)	हैदराबाद (9)	पू. गोदावरी (6)	गुंटूर (5)	कृष्णा (7)	चित्तूर (3) कुर्नूल (2)	55
6.	केरल (50)	एर्नाकुलम (9)	कोज़ीकोड (7)	त्रिशूर (6)	कन्नूर (5)	मलप्पुरम (5)	64
7.	पंजाब (36)	लुधियाना (12)	जालंधर (9)	अमृतसर (3)	गुरुदासपुर (3)	कपूरथला (2)	81
9.	प. बंगाल (36)	कोलकाता (8)	हावड़ा (7)	नादिया (3)	बांकुड़ा (3)		58
9.	राजस्थान (29)	जयपुर (13)	अजमेर (2)	अलवर (2)	बीकानेर (3)		69
10.	हरियाणा (26)	गुड़गांव (5)	फरीदाबाद (4)	पानीपत (4)	करनाल (2)	अंबाला (2)	65
11.	कर्नाटक (24)	बंगलुरू (10)	बेलगाम (3)				54
12.	दिल्ली (21)	दिल्ली (21)					100
	योग 12 राज्य (568)						88

नोट : कोष्ठक में राज्यवार/जिलावार क्लस्टरों की संख्या दर्शाई गई है
स्रोत : फाउंडेशन फॉर एमएसएमई क्लस्टर्स का डाटाबेस, 2009

है। इसके अतिरिक्त अनुमान है कि भारत में 5,000 कारीगरों वाले और सूक्ष्म उद्यमों वाले समूह हैं। यह उद्यम समूह पूरे भारत में फैले हुए हैं और सभी राज्यों में पर्याप्त संख्या में पाए जाते हैं।

उद्यम समूह के घटक–उद्यम समूह के हित साधक

जिन उद्यमों के उत्पादों के कारण उद्यम समूह की पहचान बनती है उन्हें उद्यम समूह का प्रमुख उद्यम कहा जाता है। प्रमुख उद्यमों की संख्या अलग-अलग हो सकती है। उद्यम समूह की प्रमुख फर्मों को भी उत्पादों का पुराने ढर्रे का होना, बाज़ार का अभाव, प्रदूषण आदि जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। साथ ही नये उत्पादों की शुरुआत और गुणवत्ता का स्तर ऊंचा उठाने से कारोबार में वृद्धि तथा लक्षित विपणन से निर्यात में वृद्धि जैसे अवसर भी प्राप्त होते हैं। प्रमुख उद्यम के कारोबार में अनेक प्रकार के सहायक उद्यमों का योगदान होता है, जोकि माल के उत्पादन के पूर्व और पश्चात सहायता प्रदान करते हैं। इनमें कच्चे माल के आपूर्तिकर्ता मशीनरी और उसके कलपुर्जों के निर्माता, व्यापारी और निर्यातक जैसे मध्यस्थ क्रेता शामिल होते हैं। इनके अलावा करारोपण, गुणवत्ता, पर्यावरण, अभिकल्पन, ऊर्जा, निवेश के बारे में परामर्श देने वाले तकनीकी और वित्तीय सेवा प्रदाता भी होते हैं। विभिन्न प्रकार की तकनीकी/वित्तीय संस्थाएं (निजी और सार्वजनिक दोनों) और उत्पादों तथा व्यापक हितों वाले संघों और मंचों से जुड़े हित-समूह भी उद्यम समूह में पाए जाते हैं। यह सभी प्रमुख उद्यम, सहायक उद्यम, सेवा प्रदाता, तकनीकी और वित्तीय संस्थाएं और हित-समूह उद्यम समूह की गतिशीलता में योगदान करते हैं और इन्हें उद्यम समूह का हित साधक कहा जाता है। उद्यम समूह की गतिविधि से इन सभी के हित जुड़े होते हैं। प्रमुख उद्यम और उनके हित-समूह उद्यम समूह की भौगोलिक सीमा के भीतर स्थित होते हैं जबकि अन्य हित साधक उसकी सीमा के भीतर भी हो सकते हैं और बाहर भी।

क्या उद्यम समूह नहीं है?

किसी उद्योग विशेष अथवा क्षेत्र को क्लस्टर नहीं कहा जाता। उदाहरणार्थ, किसी देश में समस्त कपड़ा उद्योग अथवा चमड़ा उद्योग क्लस्टर या उद्यम समूह नहीं कहलाता, क्योंकि ये कई स्थानों में फैले होते हैं और तमाम हित साधक परस्पर जुड़े नहीं होते। इसके अलावा किसी उद्योग अथवा क्षेत्र की समस्याएं और अवसर स्वभावत: व्यापक होते हैं और उद्यम समूह में उत्पादित उत्पादों के विशिष्ट समूह के सूक्ष्म आयामों से उनका कोई संबंध नहीं होता। एक-दूसरे से भिन्न वस्तुओं का उत्पादन करने वाले औद्योगिक पार्क इस्टेट(संपदा) भी उद्यम समूह नहीं कहलाते। उद्यम समूह स्वाभाविक रूप से विकसित होते हैं और नीतिगत निर्णयों से भी उनका गठन होता है। संक्षेप में, यह एक जैसी वस्तुओं का उत्पादन करने वाली इकाइयों का एक बड़ा समूह होता है। यह तो कुछ समय बाद ही होता है कि विभिन्न हितसाधक वहां काम करने लगते हैं और उसमें उद्यम समूह के गुण आते हैं।

लघु एवं मध्यम उद्यम के विकास के तौर पर उद्यम समूह

अनेक ऐसे उदाहरण हैं जिनसे पता चलता है कि उद्यम समूह क्षेत्रीय औद्योगिक विकास को बढ़ावा देते हैं। उद्यम समूह की फर्मों ने राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दोनों संदर्भों में उच्चतर उत्पादकता का प्रदर्शन किया है। उद्यम समूह में एक ही स्थान पर फर्मों की बड़ी संख्या में मौजूदगी के कारण अर्थव्यवस्था में एक प्रकार की जो निष्क्रियता रहती है उससे फर्मों को काफी लाभ होता है। इस तथ्य के बावजूद यह देखा गया है कि कुछ फर्में बढ़िया काम कर रही हैं तो कुछ जैसे-तैसे काम चला रही हैं, तो अन्य दिन-प्रतिदिन पिछड़ती जा रही हैं।

जिन उद्यम समूहों में बढ़िया काम हो रहा है, वे वहां की निष्क्रिय अर्थव्यवस्था से लाभ उठाने के दायरे से बाहर निकल चुके हैं। वे सोच-समझकर ऐसे निर्णय ले रहे हैं ताकि संयुक्त गतिविधियों में भाग लेकर उद्यम समूह को बढ़ावा दिया जा सके। इस तरह का सहयोग उन इकाइयों में भी होता है जिनमें परस्पर स्पर्धा होती रहती है। क्योंकि प्राय: प्रतिस्पर्धी इकाइयों के सामने भी एक जैसी चुनौतियां और अवसर होते हैं और ये इकाइयां (क) समस्याओं का समाधान, और (ख) कठिन अवसरों को भुनाने के व्यय को आपस में बांटने को तैयार रहती हैं। शुरू में प्राय: संयुक्त प्रयास के ज़रिये ही यह होता है। यह प्रक्रिया चुनौतियों का सामना करने और कठिन लक्ष्यों को हासिल करने की अनिश्चितताओं को ज़ोखिमयोग्य कदमों में बदल देती है।

अनुभवों का लाभ उठाते हुए विश्वभर में विभिन्न सार्वजनिक एजेंसियों ने अनेक प्रकार के उद्यम समूह विकास कार्यक्रम शुरू किए हैं। ये कार्यक्रम न केवल समान रूप से सक्रिय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देते हैं बल्कि विभिन्न प्रकार की नयी सेवा प्रदाता एजेंसियों को एक ही स्थान पर मौका देकर निष्क्रिय अर्थव्यवस्थाओं को भी प्रोत्साहित करते हैं। इनमें से अधिकांश कार्यक्रम सार्वजनिक एजेंसियों की अगुवाई में चलते हैं।

भारत में उद्यम समूह विकास गति पकड़ रहा है। पिछले दशक में 24 योजनाओं/कार्यक्रमों ने 1,358 उद्यम समूहों के विकास में योगदान किया है। इनमें से 278 पारंपरिक विनिर्माण और 1,080 सूक्ष्म उद्यम (कारीगरी उद्यम सहित) वाले समूह हैं। सूचीबद्ध योजनाओं के अंतर्गत उद्यम समूह विकास के लिये वर्ष 2006-07 तक 7 अरब रुपये का आवंटन किया गया था। अनुमान है कि इस राशि में से 90 प्रतिशत राशि केंद्रीय कोष से आवंटित की गई थी। मुख्य रूप से बुनियादी ढांचे के विकास और सुधार के लिए यह सहायता दी गई है (80 प्रतिशत)। इनमें से अधिकांश कार्यक्रमों का लक्ष्य प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करना है। हाल के वर्षों में ग़रीबी उन्मूलन, कार्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व, सूचना प्रौद्योगिकी का संवर्धन और व्यापार विकास सेवाओं आदि जैसे मुद्दों को लेकर भी उद्यम समूह विकास पर ज़ोर दिया गया है।

यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि यद्यपि उद्यम समूह विकास सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों के विकास के लिए एक औज़ार के रूप में उभर रहा है तथापि यह इस उद्देश्य के लिए एक साधन मात्र है। अपने मौजूदा रूप में उद्यम समूह विकास उन उद्योगों के विकास के लिए उचित साधन नहीं हैं जो दूर-दूर और अन्य स्थानों में अलग-अलग फैले हुए हैं। इसी प्रकार, किसी ऐसे विशेष स्थान में जहां इसका अस्तित्व है ही नहीं, वहां उद्यम समूह तैयार करना, कोई उचित साधन नहीं है। इस साधन के उपयोग के लिए ऐसी फर्मों की सघन और महत्वपूर्ण मौजूदगी की आवश्यकता होती है जिनका बाज़ार तो होता है, परंतु प्राय: वे समन्वय और वांछित सेवाओं के अभाव में पिछड़ते जाते हैं अथवा उनमें उन ऊंचाइयों तक पहुंचने की क्षमता होती है जिनको पाने के प्रयास अभी तक नहीं किए गए। उन्हें सुदृढ़ निजी क्षेत्र के समर्थन की आवश्यकता होती है। उन्हें शुरू से ही सही नेतृत्व की भी आवश्यकता होती है ताकि आने वाले वर्षों में योजनाबद्ध विकास के लक्ष्य को हासिल करने में जो प्रयास किए जाएं वे सदा जारी रह सकें। ❑

(लेखक नयी दिल्ली स्थित फाउंडेशन फॉर एमएसएमई क्लस्टर्स के निदेशक हैं।
ई-मेल : tamalsarkar@gmail.com)

विपणन की चुनौतियां और अवसर

● अश्विनी सक्सेना

प्रत्येक शहर में बड़े-बड़े शॉपिंग मॉल खुल रहे हैं। विश्व के कोने-कोने में रिटेल शृंखलाएं खुलती जा रही हैं। उभोक्ता खूब ख़र्च कर रहे हैं। उनकी आमदनी बढ़ रही है और इंटरनेट उत्पादकों तथा क्रेताओं के बीच की खाई को पाट रहा है। बावजूद इसके लघु और मझोले उद्यमों के लिए बाज़ार पहले की तरह अभी भी छलावा बने हुए हैं। वे अभी भी कोसो दूर हैं उनसे।

लघु और मध्यम उद्यमों का अपेक्षाकृत लघु आकार दूरस्थ बाज़ारों तक उनकी पहुंच में सबसे बड़ी बाधा है। इन उद्योगों के लघु आकार के कारण बाज़ार तक उनकी पहुंच आसानी से नहीं हो पाती और होती भी है तो टिकाऊ नहीं रहती। इसके अलावा थोक माल के ऑर्डर मिलने पर उनकी गुणवत्ता मानक बनाए रखना मुश्किल होता है। साथ ही वितरण की चुनौतियां भी होती हैं। सीमित वित्तीय संसाधनों के साथ-साथ जागरुकता की कमी के कारण बाज़ार की जानकारी जुटाने के लिए वे विशेषज्ञ सेवाओं का लाभ नहीं ले पाते। जबकि प्रभावी विपणन योजना के लिए इस तरह की जानकारी बुनियादी ज़रूरत होती है। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय के एक सर्वेक्षण के अनुसार लगभग दो-तिहाई लघु व्यवसायियों के विचार में बाज़ार की जानकारी का अभाव एक प्रबल बाधा है। दो और चीजें जिनका यहां अभाव है वे हैं ब्रांड और आईपीआर (बौद्धिक संपदा अधिकार) संरक्षण। ये दो चीज़ें ही बाज़ार में उत्पाद को लंबे समय तक टिकाऊ बनाने में मदद करती हैं। इसके अलावा लघु एवं मध्यम उद्यमों में आईसीटी (सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी) का उपयोग भी बहुत ही कम पाया जाता है जिससे उनके लिए नये-नये बाज़ारों तक पहुंचने की संभावना अत्यंत क्षीण हो जाती है और वे उदार अर्थव्यवस्था का लाभ नहीं उठा पाते। संक्षेप में कहें तो आघात से उबरने वाली उद्यमिता की हमारी विरासत वर्तमान में संरक्षणवादी वातावरण से आगे बढ़ने और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मुक्त अर्थव्यवस्था के उपलब्ध अवसरों का लाभ उठाने में अपने आपको असमर्थ पाती है। परंतु हमें याद रखना होगा कि इस तरह की इकाइयां व्यक्तिगत प्रयासों और कौशल के फलस्वरूप पैदा होती हैं और उनके परिचालन में अधिक लचीलापन पाया जाता है। उनमें उत्पादन की लागत भी अपेक्षाकृत कम होती है। प्रौद्योगिकी अपनाने की प्रवृत्ति अधिक होती है और वे स्थानीय लोगों को रोज़गार देती हैं। साथ ही, स्थानीय तौर पर उपलब्ध कच्चे माल का अधिक उपयोग भी करती हैं और इस तरह से क्षेत्रीय असंतुलन दूर करने में भी योगदान करती हैं।

यहां, यह देखना उचित होगा कि क्या एक ही स्थान पर केंद्रित लघु एवं मध्यम उद्योगों के अवसर और चुनौतियां अलग-अलग क्षेत्रों में स्थापित उद्यमों से भिन्न हैं, या फिर समूहों में स्थापित उद्यमों की समस्याओं में कुछ इज़ाफ़ा होता है। यद्यपि पास-पास स्थापित होने के कारण उनकी समस्याओं का निराकरण अपेक्षाकृत सरल होता है। अत: वह क्या चीज़ है जो समूहों में स्थापित उद्योगों (लघु एवं मध्यम) की विपणन चुनौतियों को इतना अनन्य बनाती है? यदि शुरू से देखें तो यह सह-स्थापन ही है जो प्रतिस्पर्धा में एक अतिरिक्त आयाम जोड़ देती है। यह एक प्रकार से आंतरिक स्पर्धा को जन्म देती है। क्योंकि समूह जहां क्रेताओं को आकर्षित करते हैं वहीं उनके उत्पादों, डिजाइनों, सेवाओं, मूल्यों और अन्य कारकों की परस्पर तुलना करने का अवसर भी प्रदान कराते हैं। इन्हीं पर क्रय का अंतिम निर्णय आधारित होता है। अत: समूहों में काम करने वाले अनेक उद्यमियों को यह कहते देखा जा सकता है कि यह आंतरिक स्पर्धा आमतौर पर एक भीषण मूल्य युद्ध में बदल जाती है, जोकि सभी लघु व मध्यम इकाइयों की मुसीबतों का मुख्य कारण है। परंतु एक सच यह भी है कि क्लस्टर की छोटी-सी दुनिया में लघु एवं मध्यम इकाइयों को कुछ अनूठे अवसर भी उपलब्ध होते हैं। वे प्रतिस्पर्धा को समाप्त करने के लिए रणनीतियों का विश्लेषण कर सकती हैं, उनकी संभावनाओं का पता लगा सकती हैं, समझ सकती हैं और इनके साथ प्रयोग भी कर सकती हैं। इस प्रकार महत्वपूर्ण यह है कि:

- एक ही स्थान पर केंद्रित उद्यम समूह (क्लस्टर) लघु एवं मध्यम उद्योगों को यह सीखने का अवसर मिलता है कि मूल्य आधारित स्पर्धा से किस

भारत सरकार का सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम विकास अधिनियम (एमएसएम), 2006 सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों ईडीए) को इस प्रकार प्ररिभाषित करता है:

क्षेत्र	सूक्ष्म उद्यम	लघु उद्यम	मध्यम उद्यम
विनिर्माण	संयंत्र एवं मशीनरी में निवेश 25 लाख रुपये	संयंत्र एवं मशीनरी में निवेश 25 लाख से 5 करोड़ रुपये	संयंत्र एवं मशीनरी में निवेश 5 करोड़ रुपये से 10 करोड़ रुपये
सेवा	उपकरणों में निवेश 10 लाख रुपये	उपकरणों में निवेश 10 लाख रुपये से 2 करोड़ रुपये	उपकरणों में निवेश 2 करोड़ रुपये से 5 करोड़ रुपये

प्रकार मूल्य-निर्धारण आधारित स्पर्धा की ओर बढ़ा जाए, और

- मूल्य आधारित स्पर्धा से उत्पाद आधारित स्पर्धा की ओर बढ़ा जाए।

इस आलेख का विषय-क्षेत्र इन बिंदुओं की विस्तृत विवेचना करना नहीं है। परंतु इसमें कोई बुराई नहीं यदि समय-समय पर उठने वाले इन प्रश्नों के संभावित उत्तरों को हल्के से टटोल लिया जाए। यहां केवल इतना ही कहा जा सकता है कि आंतरिक प्रतिस्पर्धा पर काबू पाने के लिए लघु एवं मध्यम इकाइयों के बीच परस्पर विश्वास बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित करने के स्थान पर बेहतर यह होगा कि परस्पर विश्वास का इस्तेमाल प्रतिस्पर्धा के धरातल को बदलने में किया जाए क्योंकि विपणन एक लड़ाई है और इससे लड़ाई के तौर पर निपटना उचित है। अनुभव बताता है कि विपणन संबंधी गतिविधियों के लिए उद्यम समूह की इकाइयों में पास आने की प्रवृत्ति अन्य क्षेत्रों में सहयोग की तुलना में कम होती है और इससे सभी संबंधित कंपनियों के सामने अनेक समस्याएं उठ खड़ी होती हैं।

एक अन्य आयाम जिसके कारण उद्यम समूह अनन्य चुनौतियां पेश करते हैं वह हैं लघु एवं मध्यम इकाइयों का अलग-अलग आकार का होना। इस प्रकार अलग-अलग क्षमताओं और संसाधनों के कारण उनमें आपस में ही प्रतिस्पर्धा होने लगती है। जैसे-जैसे उद्यमों की संख्या बढ़ती जाती है स्थिति और भी जटिल होती जाती है। समय के साथ-साथ एक जैसी इकाइयों के बीच अपना विशिष्ट स्थान पाने के लिए आपसी गुट बन जाते हैं और इकाइयों के बीच मुक़ाबला होने के बज़ाय उनमें आपस में ही प्रतिस्पर्धा बढ़ जाती है। परंतु इसका यह अर्थ नहीं कि उनके स्तरों में कोई अंतर नहीं होता। अत: चुनौती तो यह है कि सभी प्रतिनिधि उद्यमों को विकास का पर्याप्त अवसर देने वाले लघु एवं मध्यम उद्योगों के समूहों के लिए किस प्रकार व्यापक किंतु भिन्न-भिन्न विपणन रणनीति अपनाई जाए। अत: उद्यम समूह के उद्यमों के बीच उत्पादों और साझी जनशक्ति के लिहाज़ से समानता होने के बावजूद विपणन संबंधी हस्तक्षेप की कोई योजना बनाते समय विभिन्न विपणन आवश्यकताओं की विशिष्टताओं को ध्यान में रखना होगा। महत्वपूर्ण यह होगा कि हित साधकों के समूह को रास्ते से हटाने का कोई प्रयास नहीं किया जाना चाहिए और न ही एक समूह को दूसरे के विरुद्ध खड़ा करने की कोई कोशिश होनी चाहिए। इसके बदले एक ऐसी योजना तैयार की जानी चाहिए जो सभी को विकास का अवसर प्रदान करती हो और प्रतिस्पर्धा की भावना को भी जीवित रखे।

जहां तक वितरण नेटवर्क और विपणन के तरीक़ों का प्रश्न है, उद्यम समूह के लघु एवं मध्यम उद्योग इनमें मौजूद एक से अधिक रास्ते चुनने का प्रयास करते हैं और कई बार तो ऐसा लगता है कि इन अवसरों को हासिल करने के कोलाहल में भी प्रतिस्पर्धा हावी हो जाती है। उदाहरण के लिए कारीगरों के उद्यम समूहों में कारीगर, छोटे व्यापारी और कारीगरों एवं अन्य लोगों के लिए काम कर रहे गैर-सरकारी संगठन सभी एक ही प्रकार के विपणन माध्यमों में कारोबार शुरू कर देते हैं। इससे भ्रम और मूल्य युद्ध को लेकर जो कडुआहट पैदा होती है उससे सभी परिचित हैं। हालांकि एक कारोबारी होने के नाते यह पता लगाना बुद्धिमानी होगी कि वह स्थिति कौन-सी होगी जहां अनुकूल संतुलन बनाया जा सकता है। इसके अलावा बाज़ार में प्रवेश के मौजूदा माध्यमों के स्थान पर अन्य विकल्पों का पता लगाना भी महत्वपूर्ण होगा। ऐसा देखा गया है कि नियमित मेलों और प्रदर्शनियों में महंगी, विशिष्ट एवं उत्कृष्ट उत्पादों के कोई अच्छे दाम नहीं मिलते तथा कोई विशेष लाभ नहीं होता। इसी प्रकार, निर्यात को लेकर काफ़ी हाय-तौबा मची रहती है। यह मार्ग भी उद्यम समूहों के सूक्ष्म उद्योगों के अधिकांश छोटे-छोटे समूहों के लिए व्यावहारिक रूप से संभाव्य नहीं होता। एकाध बार तो यह संभव हो सकता है परंतु जब तक नियमित रूप से विशिष्ट इनपुट का सहारा नहीं होगा यह निर्यात लंबे समय तक सफल नहीं हो सकता।

आईसीटी विपणन का एक संभावित स्रोत हो सकता है परंतु इसके लिए प्रशिक्षण और अन्य संरचनात्मक समर्थन की आवश्यकता होती है। प्रभावी व्यापार विकास सेवाओं (बीडीएस) नीत वेब आधारित विपणन के तरीक़ों के अनेक उदाहरण हैं। यह एक ऐसा क्षेत्र है जहां बीडीएस के इस्तेमाल से उनके और उनके साथ जुड़ी कंपनियों के स्थायी विकास की संभावनाएं काफी प्रबल हैं।

अधिकांश लघु एवं मध्यम उद्यमों के लिए अपने उत्पादों का संवर्धन करना एक टेढ़ी खीर है। उद्यम समूहों में तो यह समस्या और भी जटिल हो जाती है। उद्यम समूह में स्थापित लघु एवं मध्यम इकाइयों की कोई भी प्रोत्साहन योजना बनाने में यह समस्या आती है कि दूसरों के बीच कैसे जगह बनाई जाए। कोई भी फर्म उद्यम समूह में अपनी मौजूदगी को एक लाभप्रद स्थिति के रूप में चमकाने की इच्छा भले ही रखती हो परंतु इसी प्रकार की अन्य फर्मों की मौजूदगी से प्रतिस्पर्धा की संभावना भी खड़ी हो सकती है। उद्यम समूह और इसके उत्पादों के संवर्धन के लिए एक उद्यम समूह विकास कार्यकर्ता को इन वास्तविक आशंकाओं को दूर करना होगा।

इसी प्रकार उद्यम समूहों में ब्रांडिंग और आईपीआर (बौद्धिक संपदा अधिकार) का संरक्षण की अपनी अलग ही समस्याएं हैं। क्या उद्यम समूह को ही एक ब्रांड के रूप में प्रोत्साहित करना महत्वपूर्ण है या फिर किसी ख़ास उत्पाद जिसको प्रोत्साहित (प्रचारित) किया जाना चाहिए? क्या आईपीआर किसी संघ में निहित किए जा सकते हैं? इस स्थिति में नवाचार के लिए वैयक्तिक प्रयासों को प्रोत्साहन देने का क्या होगा? यदि ऐसा लगे कि किसी उत्पाद के बारे में सामुदायिक ज्ञान के आधार पर नवाचार द्वारा किसी व्यक्ति/उद्यम समूह अथवा एमएसई ने विशेषज्ञता हासिल कर ली है तो क्या उस व्यक्ति अथवा उद्यम समूह के एसएमई में आईपीआर निहित की जा सकती है? इन सभी प्रश्नों के उत्तर अभी तक अनुत्तरित ही रहे हैं।

अंत में यद्यपि विपणन गतिविधियों में बीडीएस की प्रभावी भूमिका को बड़ी कंपनियों ने भलीभांति प्रदर्शित किया है। यह लघु और मध्यम उद्यम क्लस्टरों के बजाय सूक्ष्म उद्यमों के समूहों के लिए ज़्यादा बड़ी समस्या बनी हुई है। विपणन के लिए इन सेवाओं के महत्व के बारे में जो अस्पष्टता दिखती है उसको 'इम्बेडेड' (साथ में जुड़े हुए) व्यापार सेवाओं के ज़रिये सुलझाया जा सकता है। इस स्थिति में अलग से कोई शुल्क नहीं दिया जाता। परंतु वह व्यावसायिक लेन-देन में निहित होता है। उदाहरणार्थ, विपणनकर्ता उत्पादक संबंध के एक अंश के रूप में विपणन रूपरेखा (मार्केट डिज़ाइन) अथवा बीज निर्माता कंपनी द्वारा किसानों को कीटनाशकों और उर्वरकों के बारे में दी जाने वाली राय।

यहां यह कहना पर्याप्त होगा कि यद्यपि अकेले खड़े एसएमई की तुलना में उद्यम समूहों की विपणन चुनौतियां ज्यादा जटिल हैं। क्लस्टरों द्वारा प्रदत्त प्रयोग के अवसर और मिलजुल कर उठाई जाने वाली लागत तथा सर्वोत्तम कार्य पद्धति के मिलाप को देखते हुए उनका इतना हक तो बनता है कि इसे आज़मा कर देखा जाए। आख़िर इसमें हर्ज़ ही क्या है? ❑

(लेखक अंतरराष्ट्रीय वित्त निगम (आईएफसी) में प्रचालन अधिकारी के रूप में कार्यरत हैं।
ई-मेल : saxena.ashwini@gmail.com)

सवाल मजदूरों के पोषण और स्वास्थ्य रक्षा का

● अरविंद मोहन

भूमंडलीकरण के दौर ने चीज़ों को काफी बदल दिया है। इसने सबसे बड़ा बदलाव आर्थिक कामकाज के पुराने वर्गीकरणों को बेमानी करने और कायदे-कानूनों को दरकिनार करने का किया है। इसमें कौन उद्योग संरक्षित सूची में है कौन खुली सूची में, किसे लघु और सूक्ष्म बताया जाए और किसे बड़ा, यह वर्गीकरण धूमिल हो चुका है। लघु और सूक्ष्म उद्योगों के लिए आरक्षित सूची छोटी होती-होती समाप्ति पर है, तो अब श्रम कानून और बाकी कायदों को लागू करना-कराना प्राथमिकता से हट गया लगता है। असंगठित और कमज़ोर हैसियत का होने के कारण छोटे उद्योगों की आवाज़ भी दिनोंदिन गुम होती जा रही है। संभव है इनमें से काफी का कामकाज बड़ा हो गया होगा, पर मैदान में नये आने वाले उसमें ज्यादा ही होंगे।

उनकी स्थिति और हैसियत में चाहे जो बदलाव आया हो, इनके यहां काम करने वालों की हालत में खास बदलाव नहीं हुआ है बल्कि हालात बदतर ही हुए हैं। छोटे उद्योगों की बात कौन करे बड़े उद्योगों में भी ठेके और फीस रेट पर काम कराने का चलन बढ़ने से मज़दूरों को इस कथित उदारीकरण का कोई खास लाभ नहीं मिला है। ठेके पर या फीस रेट पर काम मिलने के चलते अब मालिक-मैनेजर के कहने की जगह मज़दूर खुद से 12-14 घंटे काम करता है। बोनस-ओवरटाइम की कौन कहे सामान्य ढंग से सम्मानजनक मज़दूरी भी मुश्किल से पाता है। आज बड़े से बड़ा नियोक्ता भी अपने मज़दूरों को आवास, चिकित्सा सुविधा, स्कूल-कॉलेज, खेल के मैदान और मनोरंजन के साधन देना अपनी जिम्मेदारी मानता ही नहीं। छोटे और मझोले नियोक्ताओं को तो पहले ही इन कामों से मुक्त माना जाता था।

पर चाहे कोई जिम्मेदारियों से मुक्त हो जाए या खुद को मुक्त माने मज़दूरों की पेट पालने से लेकर बाकी ज़रूरतें समाप्त नहीं हो जाती। सामान्य ढंग से वह घर में या फैक्टरी में काम करते हुए अपनी जान लगाकर ज्यादा से ज्यादा कमाना और खुद का काम, बच्चों का ढंग से पालन-पोषण करना चाहता है। यह अलग बात है कि अकसर पति-पत्नी समेत कई-कई लोगों की कमाई मात्र पेट भरने और बदन ढकने भर के लिए पर्याप्त नहीं होती और स्थितियां बदलने से जो चीज़ सबसे ज्यादा प्रभावित होने लगती है वह है मज़दूरों का स्वास्थ्य और उनके बच्चों की शिक्षा। दुर्भाग्य से यही दौर स्वास्थ्य सेवाओं में निजीकरण की बाढ़ का भी है, सो मध्यम वर्ग या उच्च वर्ग जहां बदतर स्वास्थ्य सेवाएं पाने लगा है वहीं मज़दूर और कमज़ोर लोग चार पैसे की नौकरी में भी वंचित होने लगे हैं। ईएसआई योजना के तहत जो सुविधाएं है उसका लाभ बहुत कम मज़दूरों को मिलता है- वह भी संगठित क्षेत्र की पक्की नौकरी वालों को।

और जब हम इस तथ्य पर गौर करते हैं कि कृषि के बाद सबसे ज्यादा लोगों को इसी लघु और सूक्ष्म उद्योग क्षेत्र में काम मिलता है तब हमें स्थिति की भयावहता का अंदाज़ा होता है। खेती में लगे लोगों को तो गांव-समाज का एक बड़ा सहारा होता है पर गांव छोड़कर निकले लोग हर तरह से बेसहारा हो जाते हैं। अकेली कमाई ही सहारा रहती है और जब कमाई पेट पालने में ही पूरी न पड़े तो सामान्य ढंग से भी स्वास्थ्य गिरता जाता है। साथ में काम करने की बदहाल स्थितियां और नदारद चिकित्सा सुविधा कितने मज़दूरों को असमय मौत के घाट उतार देती है और कितनों को काम करने लायक नहीं छोड़ती, इसका हिसाब नहीं है। पर वह परिवार चलाने के लिए अपने बच्चों से काम कराने लगे, उन्हें स्कूल जाने से रोके और ज्यादा से ज्यादा बच्चे पैदा करके अपने परिवार को सुरक्षित करने का प्रयास करे यह सब चीज़ें तो हमें साफ़ दिखाई देती है। (पचासों राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय कानूनों के होते हुए भी करोड़ों बाल मज़दूरों की उपस्थिति यही बताती है कि ग़रीब परिवारों को अपनी न्यूनतम ज़रूरतें पूरी करने में भी अपने बच्चों की कमाई जोड़नी पड़ती है- इसके बगैर उनका काम नहीं चलता।)

असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों के स्वास्थ्य और उनके लिए स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता पर वैसे तो कोई बड़ा सरकारी सर्वेक्षण नहीं हुआ है, न बहुत आंकड़े हैं पर कुछ लोगों और संस्थाओं ने विशेष इलाकों और उद्योगों के मज़दूरों की स्थिति, खासकर उनके स्वास्थ्य की स्थिति का अध्ययन किया

है। इससे यह स्पष्ट पता चलता है कि पूरे मुल्क की हालत क्या होगी। लखनऊ के गिरी इंस्टीट्यूट ऑफ डेवलपमेंट स्टडीज के अध्ययन में साफ़ कहा गया है कि फिरोजाबाद चूड़ी उद्योग में काम करने वाले मात्र दो फीसदी बच्चों का वजन अपनी उम्र के सामान्य स्वस्थ बच्चों के स्तर का था। 98 फीसदी बच्चे 'सूखते' जा रहे थे। इसी अध्ययन के अनुसार 93.2 फीसदी बच्चे किसी न किसी तरह के रोग में जूझ रहे थे- इनमें टीबी जैसी बीमारी के शिकार भी काफी लोग थे। चर्म रोग और सांस के रोग सबसे ज्यादा लोगों में थे। हम जानते हैं कि कांच को जलाने और मनचाहा आकार देने का काम खुले मैदानों में होता है।

शिवकाशी के पटाखा और दियासलाई उद्योग का देशभर में नाम है और लगभग पूरा उत्पादन फीस रेट और ठेके पर होता है। सुरक्षा और स्वास्थ्य सुविधाएं न तो मालिक देते हैं न मज़दूर मानते हैं। डीवीसी राजा, आर. विद्यासागर और डेनियल ने यहां के मज़दूरों की स्थिति पर तीन विस्तृत और गंभीर अध्ययन प्रकाशित किए हैं। उन सभी का निष्कर्ष है कि यहां काम करने वाले मज़दूर काम के आगे स्वास्थ्य का ध्यान नहीं रखते। 95 फीसदी मज़दूरों का मानना था कि उनका स्वास्थ्य एकदम ठीक है पर टीबी, कमरदर्द और बवासीर जैसी बीमारियां इतनी आम थीं कि उन्हें शिवकाशी का खास मर्ज़ माना जाता है।

निजामाबाद (आंध्र प्रदेश) बीड़ी बनाने का बड़ा केंद्र है और यहां के बाल श्रम संबंधी रेखा पांडे का अध्ययन 1,000 परिवारों का है। उनका अध्ययन बताता है कि तंबाकू के धूल के चलते दमा, सांस फूलने, चमड़ी का रंग बदलने, जोड़ों का दर्द, सिरदर्द, टीबी, खाज़-खुजली और कई बार कैंसर की बीमारी लगना औसत में काफी ऊपर है। पर पीने का साफ़ पानी, व्यक्तिगत सफाई, प्रदूषण कम करने के उपायों तथा स्वास्थ्य सुविधाएं बढ़ाने की कोई चर्चा बीड़ी उद्योग से जुड़े लोग या सरकारी मशीनरी की तरफ से नहीं होता। उत्तरी अर्काट (तमिलनाडु) से जुड़े सी. करुणानिधि के अध्ययन में भी लगभग इन्हीं स्थितियों और बीमारियों की चर्चा है।

उत्तर प्रदेश के भदोही के कालीनों की धूम चाहे पूरी दुनिया में हो पर उनका उत्पादन कुटीर उद्योग में ही होता है। धूल-रेशे के कारण श्रमिकों में सांस की बीमारी होने के अलावा यह उद्योग बाल श्रम के दोहन के लिए खासा बदनाम रहा है। इस बारे में अध्ययनों और विवादों की कमी नहीं है। पर यह सर्व स्वीकृत तथ्य है कि बच्चों की नाजुक, पतली और छोटी उंगलियां कालीन बुनने और उनमें उनकी कशीदाकारी के ज्यादा उपयुक्त है। भले ही इस क्रम में उंगलियां छिलती हैं, जख़्म लगते हैं और कई बार घाव बहुत समय तक परेशान करते हैं। पर इससे भी ज्यादा नुक़सानदेह काम रंगसाजी का है। एक ही पोजीशन में बैठकर या झुककर काम करने के चलते 90 फीसदी मज़दूर कमर के किसी न किसी रोग से परेशान हैं। सांस फूलना और चर्म रोग आम है। यूनिसेफ का अध्ययन यह भी बताता है कि अधिकांश बाल मज़दूर बंधुआ है।

अलीगढ़ का ताला उद्योग, मुरादाबाद का पीतल उद्योग, मेरठ का खेल सामान उद्योग लगभग पूरी तरह असंगठित क्षेत्र में चलता है। पर यहां धातु और रसायनों का जैसा खुला ख़तरनाक उपयोग होता है वह काम करने वाले हर मज़दूर को प्रभावित करता है। तालों और पीतल पर पॉलिश चढ़ाने के काम में उठने वाला भभका न्यूमोकोनियोसिस नामक रोग लगता है- यह इलेक्ट्रोप्लेटिंग, स्प्रे पेंटिंग और पॉलिश में भी आता है। दिलचस्प बात यह है कि हाथ में इन रसायनों का अवशेष लिए ये मज़दूर जब भोजन करते हैं तो कई बार बेहोश होकर गिर जाते हैं और पुलिस इन पर ज़हर खाकर आत्महत्या करने का प्रयास कह कर मुक़दमा भी ठोक देती है। पर इन स्थितियों को बदलने का प्रयास न मुनाफ़ा कमाने वाले मालिक करते हैं न सरकारी अफसर।

अब यह बात कुछ अजीब लग सकती है कि कंप्यूटर-इंटरनेट युग में स्लेट उद्योग का फलना-फूलना और यहां काम करने वाले मज़दूरों के लिए नारकीय स्थितियां जारी हैं। मरक्कपुर (आंध्र प्रदेश) से संबंधित रत्ना नायडू और मंदसौर (म.प्र.) से संबंधित 'ओआरजी' के अध्ययन बताते हैं कि एक-एक इलाके में 30-30 हज़ार मज़दूर काम करते हैं। स्लेट पत्थरों को खोद कर निकालना भी अस्वास्थ्यकर स्थितियों में होता है पर स्लेट पत्थर काटकर उसे सही आकार देने और पॉलिश चढ़ाने का काम तो स्वास्थ्य की दृष्टि में भारी नुक़सानदेह है। स्लेट पत्थर की कटाई सांस का रोग पैदा करती है तो किनारे लगने वाला टिन और लकड़ी और इन सबका पॉलिश हाथ और सांस, दोनों तरफ से नुक़सान करता है।

आज हमारे निर्यात की बहुत धूम है- सिले-सिलाए वस्त्र, जवाहरात, गहने और चमड़े की चीज़ों का निर्माण बहुत बड़े पैमाने पर होता है। पर इन सबका ज्यादातर काम फ़ीस रेट और ठेके पर होता है। कपड़ों की कटाई, रंगाई और सिलाई का फीस रेट अविश्वसनीय रूप से कम है, या उनमें इस्तेमाल होने वाले रसायन और काम करने की स्थितियां डरावने स्तर की हैं। अकेले तिरुपुर में पांच लाख से ज्यादा होजियरी मज़दूर हैं पर स्वास्थ्य सेवाएं कुछ हज़ार लोगों वाले कस्बों के स्तर की भी नहीं हैं। बंगलुरु, लुधियाना बड़े शहर हैं पर यहां वस्त्र और होजियरी उद्योग के मज़दूरों को कोई पूछता नहीं। सूरत और बरोदरा में जेम्स-ज्वेलरी का कारोबर बहुत है पर लगभग पूरा काम ठेके और फ़ीस रेट का है। इसमें मज़दूरों का स्वास्थ्य कहीं चिंता के दायरे में आता ही नहीं। इससे भी बुरी हालत चमड़ा उद्योग की है क्योंकि 95 रसायनों का प्रयोग और गंदगी का साथ यहां बहुत ज्यादा है। योजना आयोग की सलाह पर इंस्टीट्यूट ऑफ अप्लायड मैनपावर रिसर्च ने चमड़ा उद्योग के संबंधित जो अध्ययन किया था उसमें 2,239 मज़दूरों को शामिल किया गया था। उस अध्ययन के अनुसार 82 फीसदी मज़दूरों के पास नहाने और शौच का अलग से इंतजाम नहीं था। 8 फीसदी को सांस से संबंधित रोग थे, उनके काम करने के 50 फीसदी स्थानों पर हवा आने-जाने की जगह न थी। बीमारी की हालत में 65 फीसदी मज़दूरों को झोला छाप या प्राइवेट डॉक्टरों के पास जाना पड़ता था।

यह स्थिति बाकी उद्योगों की भी है पर साफ़ लग रहा है कि आज मालिक, सरकारी अमला और स्वयं मज़दूर भी यह भूलता जा रहा है कि स्वस्थ माहौल में, नियमित कार्यस्थितियों में और व्यवस्थित रूप से मज़दूरी करना उसका हक़ है तथा उसके पोषण और स्वास्थ्य की चिंता करना उसके साथ उसके नियोक्ता और सरकार का भी कर्तव्य है। ❑

(लेखक सेंटर फॉर दी स्टडी ऑफ डेवलपिंग सोसायटी (सीएसडीएस), नयी दिल्ली से संबद्ध वरिष्ठ पत्रकार हैं। ई-मेल : arvindmohan2000@yahoo.com)

भारत में समावेशी विकास

● राजेश रपरिया

समावेशी विकास संप्रग सरकार का मूल मंत्र है। कल्याणकारी सामाजिक परियोजनाओं का अधिकाधिक लाभ लाभार्थियों को मिले इसके लिए केंद्र सरकार ने वित्तीय समावेशन की मुहिम छेड़ रखी है। केंद्र सरकार की धारणा है कि समावेशी विकास के लक्ष्य को पाने के लिए वित्तीय समावेशन अनिवार्य प्रक्रिया है। भारतीय रिज़र्व बैंक ने वित्तीय समावेशन की ज़रूरत बताने के लिए कुछ आंकड़े पेश किए हैं।

पिछले 18-20 महीनों की बात छोड़ दें तो संप्रग सरकार के पहले पांच वर्षों में विकास दर 8.5 से 9 फीसदी रही है। इस विकास दर में उद्योग और सेवा क्षेत्र का योगदान सर्वाधिक है। जबकि कृषि में विकास दर दो फीसदी से कुछ अधिक रही है। रोज़गार देने की दृष्टि से सूक्ष्म और लघु औद्योगिक संस्थानों का स्थान उद्योग और सेवा क्षेत्र में आगे है। अब भी इन क्षेत्रों में विकास की भारी गुंजाइश है। पर विडंबना यह है कि ये दोनों ही क्षेत्र वित्तीय सेवाओं के लिहाज़ से सबसे ज़्यादा उपेक्षित हैं। जैसे- कर्ज़, धन प्रेषण, बीमा, बचत आदि। ग्रामीण और असंगठित क्षेत्रों में वित्तीय सेवाओं का अभाव समावेशी विकास की राह में सबसे बड़ी बाधा बनी हुई है। रियायती वित्तीय सेवाएं जैसे- ऋण, बीमा आदि जीविका के अवसरों को व्यापक बनाती हैं। इनसे निर्धनों को संबल मिलता है। इस प्रकार के सशस्त्रीकरण से सामाजिक और राजनीतिक स्थिरता आती है और समावेशी विकास और वित्तीय समावेशन को गति मिलती है।

आज बाज़ार में वित्तीय उत्पादों की भरमार है। इनमें इतनी अधिक जटिलताएं हैं कि विकसित देशों को भी यह अहसास हुआ है कि एक बहुत बड़ी आबादी वित्तीय सेवाओं के घेरे में विस्थापित होती जा रही है। नतीज़न उन्हें विकास का समुचित लाभ नहीं मिल पा रहा है। वित्तीय ज्ञान या साक्षरता के अभाव में वे लालची कंपनियों के हाथों अपनी गाढ़े पसीने की कमाई लुटाने को विवश हैं। इस विषम स्थिति से निपटने के लिए विकसित देशों ने वित्तीय समावेशन और वित्तीय साक्षरता का अभियान व्यापक पैमाने पर शुरू किया है जिनमें अमरीका और इंग्लैंड जैसे देश शामिल हैं। ज़ाहिर है कि भारत में स्थितियां ज्यादा विषम और विकराल हैं। वित्तीय समावेशन और वित्तीय साक्षरता की आवश्यकता यहां ज्यादा है। इसीलिए मौजूदा संप्रग सरकार ने समावेशित विकास और वित्तीय समावेश को अपनी कार्यसूची में सर्वाधिक प्राथमिकता दी है। बजट वर्ष 2009-10 तो ज़ाहिर तौर पर समावेशित विकास के लिए समर्पित है।

वित्तीय समावेशन को मोटे रूप से दो तरीक़ों से समझा जा सकता है। पहला, भुगतान सुविधाओं से वंचित वर्ग। दूसरा, कर्ज़ सुविधाओं से वंचित और सूदखोरों पर आश्रित वर्ग। वित्तीय और बैंकिंग सुविधाओं पर धनिक वर्ग का आधिपत्य तोड़ने के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने वर्ष 1969 में देश के 14 बड़े बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया था। इसके पीछे मूल मकसद यही था कि ग्रामीण भारत और सामान्य लोगों को भी बैकिंग और वित्तीय सेवाओं का लाभ मिले। सूदखोरों के चंगुल से बचाने के लिए निर्धन तबके को रियायती दरों पर ऋण मुहैया कराए जाएं। वर्ष 1969 के बाद बैंकों का ऐतिहासिक विस्तार हुआ। निर्धन तबकों को मामूली ब्याज़ दरों पर व्यापक रूप से कर्ज़ उपलब्ध कराए गए। लेकिन उदारीकरण और आर्थिक सुधारों के दौर में पुरानी बैंकिंग प्रवृत्तियां एक तरह से रुक-सी गईं। बल्कि यह कहना ज्यादा सटीक होगा कि गंगा उल्टी दिशा में बहने लगी। हाल ही में समावेशी विकास के घोषित नये लक्ष्य से

तालिका-1

वयस्क आबादी और कर्ज़ खाते (2005)

(प्रतिशत में)

उत्तरी क्षेत्र	12
उत्तरपूर्वी क्षेत्र	7
पूर्वी क्षेत्र	8
मध्य क्षेत्र	9
पश्चिमी क्षेत्र	13
दक्षिण क्षेत्र	25
राष्ट्रीय औसत	**14**

तालिका-2

वयस्क आबादी और बचत खाते (2005)

(प्रतिशत में)

उत्तरी क्षेत्र	80
उत्तरपूर्वी क्षेत्र	37
पूर्वी क्षेत्र	34
मध्य क्षेत्र	52
पश्चिमी क्षेत्र	60
दक्षिण क्षेत्र	66
राष्ट्रीय औसत	**50**

स्थितियों में बदलाव आया है।

वित्तीय समावेशन को जानने का सर्वमान्य पैमाना है कि वयस्क आबादी के कितने व्यक्तियों के पास बैंक खाते हैं। इस धारणा की अंतर्निहित मान्यता है कि हर वयस्क के पास एक ही बैंक खाता है(यद्यपि यह मान्यता ठीक नहीं है)। आंकड़ों से पता चलता है कि 59 फीसदी वयस्क आबादी के पास देश में बैंक खाते हैं। यानी देश की 41 फीसदी वयस्क आबादी अब भी बैंक खातों से वंचित है। कहना न होगा कि ग्रामीण भारत की दशा बदतर है। ग्रामीण भारत में यह औसत महज़ 39 फीसदी है यानी 61 फीसदी वयस्क ग्रामीणों के पास कोई बैंक खाता नहीं है। उत्तर-पूर्वी राज्यों में ग्रामीण इलाकों में यह स्थिति और भी भयावह है।

यह है बचत खातों के लिहाज़ से ग्रामीण भारत का बैंकिंग परिदृश्य। इसे ऋण खातों की दृष्टि से देखें तो यह परिदृश्य और भी निराशाजनक है। देश की कुल वयस्क आबादी में केवल 14 फीसदी को ऋण खातों की सुविधा उपलब्ध है। ग्रामीण भारत में यह औसत गिरकर 9.5 फीसदी ही रह जाती है। बचत खातों की तरह से कर्ज़ खातों की स्थिति भी उत्तर-पूर्वी और मध्य क्षेत्रों में बदतर है।

वित्तीय और बैंकिंग सुविधाओं की स्थिति को एक और ढंग से आकलित किया जा सकता है। एसएसओ-2008 के सर्वे के अनुसार देश में पारिवारिक इकाइयों की संख्या लगभग 20.30 करोड़ है। इसमें से 14.70 करोड़ परिवार गांवों में रहते हैं। इनमें से 8.90 करोड़ कृषक परिवार हैं। इनमें से 73 फीसदी कृषक परिवारों को कर्ज़ लेने के लिए कोई आधिकारिक स्रोत यानी संस्थागत स्रोत उपलब्ध नहीं है। 51.4 फीसदी कृषक परिवारों को किसी भी प्रकार का कर्ज़ (वित्तीय संस्थानों और महाजनों से) उपलब्ध नहीं है। इस संदर्भ में गैर-किसान ग्रामीण परिवार और शहरी निर्धनों का कोई विस्तृत आधिकारिक ब्योरा उपलब्ध नहीं है।

इन आंकड़ों से आर्थिक सुधारों और देश की सबसे बड़ी बैंकों में शुमार संस्थानों की पोल खुलती है। आर्थिक सुधारों के बाद देश में निजी बैंकों की बाढ़ आ गई है। लेकिन ग्रामीण भारत इनके लिए सदैव हाशिये पर रहा। उदारीकरण और आर्थिक सुधारों की उपलब्धियों की असलियत क्या है? इसका चेहरा क्या है? इनकी हक़ीक़त भी आंकड़ों से सामने आ जाती है। वर्ष 1991 के बाद ग्रामीण कर्ज़ों में सूदखोरी की हिस्सेदारी वर्ष 2002 में 17.5 फीसदी से बढ़कर 29.6 फीसदी हो गई। जबकि शहरी क्षेत्रों में यह आंकड़ा वर्ष 1981 के 40 फीसदी से घटकर 25 फीसदी रह गया। इन आंकड़ों से समझा जा सकता है कि ग्रामीण मतदाताओं ने 'शाइनिंग इंडिया' को क्यों धूल चटा दी। आर्थिक सुधार और बाज़ारवाद के पैरोकारों को इस भयावह सच्चाई से मुंह नहीं मोड़ना चाहिए। मसलन बैंकों के विवेकीकरण के नाम पर वर्ष 1991 से 2007 के दरमियान ग्रामीण शाखाओं में 14 फीसदी की कमी आई है (*द हिंदू*, 13 जून, 2009)। बढ़ते महाजनी ऋण इस तथ्य की ताकीद करने के लिए पर्याप्त हैं। लेकिन संप्रग सरकार ने इस आत्मघाती भयानक भूल को पहचान लिया है और वित्तीय समावेशन और समावेशी विकास पर अपनी पूरी ऊर्जा संकेंद्रित कर दी है।

आज़ादी के 62 साल बाद भी 41 फीसदी आबादी वित्तीय सेवाओं की दृष्टि से बहिष्कृत है। ग्रामीण भारत में यह आंकड़ा 61 फीसदी है। इनमें ज्यादातर सीमांत किसान, भूमिहीन मज़दूर, स्वरोज़गार, असंगठित क्षेत्र के अति लघु उद्यमी, शहरी निर्धन, सामाजिक रूप से बहिष्कृत समूह, बुजुर्ग और महिलाएं शामिल हैं।

वित्तीय समावेशन की विडंबना यह है कि परिस्थितिजन्य कारणों से यह अभियान स्वत: वित्तीय निष्कासन में तब्दील हो जाता है। वित्तीय सेवाओं के घेरे से बाहर की बड़ी आबादी को वित्तीय समावेशन की तमाम योजनाओं के तहत संस्थागत वित्त के दायरे में लाया जाता है। लेकिन विषम जीवन स्थितियों व अन्य कारणों से उनके ऊपर कर्ज़ का बोझ बढ़ता चला जाता है और उनकी कर्ज़ चुकाने की क्षमता निरंतर क्षीण होती जाती है। नतीज़न वे कर्ज़ चुकाने में विफल हो जाते हैं। कर्ज़ माफ़ी भी उन्हें इस दुष्चक्र से मुक्ति नहीं दिला पाती है। इसके कई भयानक दुष्परिणाम सामने आते हैं। आर्थिक बेहाली और तंगी के कारण नौबत आत्महत्या तक पहुंच जाती है। भारी मात्रा में ग्रामीण महानगरों की ओर पलायन कर जाते हैं। एक बार वित्तीय निष्कासन हो जाने के बाद ये असहाय, असमर्थ लोग सूदखोरों के ज़ाल में फंसने को विवश हो जाते हैं। प्राय: वित्तीय निष्कासन सामाजिक निष्कासन में तब्दील हो जाता है जिसके भारी राजनीतिक परिणाम सामने आते हैं। इससे राजनीतिक अस्थिरता जन्म लेती है।

भारतीय रिज़र्व बैंक के पूर्व गर्वनर सी. रंगराजन ने माना है कि यद्यपि संगठित बैंकिंग क्षेत्र का ग्रामीण भारत में विस्तार हुआ है लेकिन यह भी हक़ीक़त है कि वित्तीय सेवाओं के घेरे से बाहर लोगों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। मौजूदा बैंकिंग नीतियां, प्रणालियां और प्रक्रियाएं निर्धनों को वित्तीय सेवाओं के दायरे में लाने के लिए माकूल नहीं हैं। सामान्य बैंकिंग प्रणाली का निष्पादन वित्तीय समावेशन की दृष्टि से उत्साहवर्धक नहीं है। लेकिन स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) की सहायता से चले वित्तीय समावेशन अभियान को बैंकों के मुक़ाबले भारी सफलता मिली है। स्वयं सहायता समूह समरूपीय या सजातीय लोगों का समूह होता है जो सामान्य दिक्क़तों को दूर करने के लिहाज़ से संगठित होते हैं। वर्ष 1992 में एक प्रयोग के रूप में एसएचजी बैंकिंग लिंकेज कार्यक्रम को शुरू किया गया। इस दल को इस प्रयोग में निर्धनों को बैंकिंग प्रणाली का लाभ पहुंचने की भारी संभावनाएं नज़र आईं। इस दल की प्रमुख सिफ़ारिशें थीं:

- परस्पर सहयोग के स्वयं सहायता समूह लिंक कार्यक्रम सामाजिक-आर्थिक उत्थान के लिए शक्तिशाली माध्यम साबित हो सकता है। इस कार्यक्रम के साझीदार इस ओर जिम्मेदार साबित हुए हैं।
- निर्धन बचत कर सकते हैं और बैंकों के ग्राहक बनने योग्य हैं।
- निर्धनों की उम्मीद और सामान्य बैंकिंग प्रणाली की प्रक्रिया के बीच जो अंतराल है उसे न्यूनतम किए जाने की आवश्यकता है।
- निर्धनों को न केवल कर्ज़ सहायता की ज़रूरत है, बल्कि बचत व अन्य सेवाओं की भी आवश्यकता है।
- निर्धनों के समरूपीय निकट समूह शुरुआती बाहरी समर्थन से कारगर ढंग से प्रबंध कर सकते हैं और सदस्यों के बीच छोटे-छोटे कर्ज़ों की देखरेख कर सकते हैं।
- स्वयं सहायता समूह की भूमिका प्रारंभिक छोटे उद्यमी की होनी चाहिए।
- स्वयं सहायता समूह कम लागत और ज़ोखिम पर व्यापक सफल आधार विकसित करते हैं।
- इस प्रयोग की सबसे बड़ी उपलब्धि है निर्धनों, खासतौर से महिलाओं का सबलीकरण।

यह कार्यक्रम काफ़ी बड़े स्तर पर काम कर रहा है जिसमें नाबार्ड की प्रमुख भूमिका है।

इसके साथ ही पिछले तीन-चार सालों में भारतीय रिज़र्व बैंक ने सादा/सीमित बचत खातों

के खोलने का महाअभियान छेड़ा है। आज देश में तीन करोड़ से ज्यादा ऐसे खाते बैंकों के कागज़ों में दर्ज़ हैं। रिज़र्व बैंक की वर्ष 2005-06 की अर्द्धवार्षिक समीक्षा में वित्तीय समावेशन के बेहतर लक्ष्य को पाने के लिए बैंकों से शून्य जमा अधिशेष या न्यूनतम अधिशेष के साथ सादा सीमित खाते खोलने का पुरज़ोर आग्रह किया गया है। इसके साथ ही कम-से-कम प्रभार लेने के लिए कहा गया है ताकि जनसंख्या के तमाम उपेक्षित वर्ग आसानी से इन खातों का प्रयोग कर सकें। ऐसे खातों में लेन-देन की संख्या को बैंक सीमित रख सकती है। लेकिन इस अंकुश को शुरू से स्पष्ट ढंग से खातेदारों को बता देने का निर्देश भी रिज़र्व बैंक ने दिया है। रिज़र्व बैंक ने बैंकों से इस सुविधा या अभियान का व्यापक प्रचार करने का आग्रह किया है जिससे वित्तीय समावेशन के लक्ष्य को पाने का रास्ता प्रशस्त हो सके। गांवों और शहरों में निम्न आय वर्ग के खाते खोलने की सामान्य प्रक्रिया से इस बारे में आश्वस्त करने के लिए बैंकों से कहा गया है। इस बाबत, 'अपने ग्राहक को जानिए' (केवाईसी) के प्रावधानों में रिज़र्व बैंक ने ढील दी है। जिन लोगों के खाते या खातों में 50 हज़ार रुपये से कम शेष हो या अग्रिम खाते में एक लाख से कम शेष हो, तो उनसे पहचान और आवास का साक्ष्य मांगने की आवश्यकता से छूट दी गई है। इसके लिए मौजूदा खातेदार से परिचय पत्र भरने के आधार पर केवाईसी प्रक्रिया को पूरा करने की छूट अब बैंकों को है। परिचय पत्र भरने वाला खातेदार ऐसा होना चाहिए जिसका खाता कम-से-कम छह महीने पुराना हो और जिसका लेन-देन संतोषजनक हो।

वित्तीय समावेशन के अधिकाधिक लक्ष्य को हासिल करने के लिए रिज़र्व बैंक ने और भी कई कदम उठाए हैं। ग्रामीण आबादी को आसानी से कर्ज़ उपलब्ध कराने के लिए जनरल परपज़ क्रेडिट कार्ड की सुविधा शुरू की गई है। इस कार्ड के तहत ग्रामीण और शहरी बैंक शाखाओं में निर्धन वर्ग को 25 हज़ार रुपये तक का कर्ज़ उपलब्ध होगा। इस सुविधा में ग्राहक अपनी ज़रूरत के हिसाब से धन निकाल सकता है। इस सुविधा में कर्ज़ निर्धारण की सीमा ग्राहक के परिवार के नकद प्रवाह विवरण के आधार पर होता है। इस सुविधा के लिए कोई भी प्रतिभूति नहीं लेने के लिए बैंकों से कहा गया है।

25 हज़ार रुपये तक के अतिदेय कर्ज़ों के एक मुश्त निपटान के लिए बैंकों से कहा गया है। बैंकों को निर्देश दिया गया है कि एकमुश्त निपटान सुविधा के अंतर्गत कर्ज़ चुकाने वाले ग्राहक दोबारा कर्ज़ लेने के पात्र होंगे। रिज़र्व बैंक ने बिजनेस कॉरिस्पॉडेंट की नूतन अवधारणा विकसित की है। यह एक अहम कदम है। इससे गैर बैंकिंग सुविधाओं वाले क्षेत्रों में बैंकिंग सेवा मुहैया कराने में भारी मदद मिल सकती है। इस प्रकार के प्रयोग को ब्राज़ील में भारी सफ़लता मिली है।

इन प्रयासों के फलस्वरूप मार्च 2006 से 2007 तक 60 लाख सादा/सीमित बचत खाते खोले गए। रिज़र्व बैंक के दस्तावेज़ के अनुसार यह सफलता ग्रामीण भारत में बिना बैंक शाखाएं खोले हासिल की गई। मार्च '08 तक ऐसे खातों की संख्या 1.58 करोड़ पहुंच गई। देश के 155 जिलों में वित्तीय समावेशन का 100 फीसदी लक्ष्य हासिल किया जा चुका है। राष्ट्रीय ग्रामीण वित्तीय समावेशन योजना के तहत 2012 तक बैंकिंग सुविधाओं से वंचित 50 फीसदी ग्रामीण परिवार को बैंकिंग सुविधाओं के दायरे में लाने का लक्ष्य रखा गया है और 2015 तक बाकी बचे परिवारों को बैंकिंग सुविधाएं मुहैया कराने का लक्ष्य है।

समावेशी विकास के लिए वित्तीय समावेशन की यह मुहिम न केवल ऐतिहासिक है, बल्कि असाधारण भी है।

समावेशन और निष्कासन का दुष्चक्र

बहिष्कृत निम्न आय वर्ग

↓

वित्तीय सेवाओं के ज़रिये वित्तीय समावेशन

↓

परिस्थितिजन्य व अन्य कारणों से जीविका अर्जन में विफल

↓

कर्ज़, बढ़ता बोझ, कर्ज़ चुकाने की क्षीण होती क्षमता, कर्ज़ माफ़ी के बाद भी मुक्ति नहीं

↓ कई दुष्परिणाम

↓

वित्तीय निष्कासन

↓

नतीज़ा सूदख़ोरों पर बढ़ती निर्भरता

सादा बचत खातों से निर्धन व्यक्ति को कोई सहायता नहीं मिलेगी जब तक की वह आर्थिक रूप से बैंकिंग लेन-देन करने के लिए समर्थ नहीं है। इस लिहाज़ से बैंकिंग कॉरस्पॉडेंट की अवधारणा बैंकिंग उद्योग के लिए महत्वपूर्ण कदम है।

कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर बैंकिंग आरबीआई चेन्नई के सेंटर फॉर माइक्रो फाइनेंस ने तमिलनाडु जिले के अध्ययन में पाया कि वित्तीय साक्षरता का अभाव सादा/सीमित बचत खातों के निष्क्रिय हो जाने का एक मुख्य कारण है। इसके अलावा बैंक शाखाओं की दूरी भी इन बैंक खातों के संचालन में बड़ी बाधा है। इस अध्ययन में पाया गया कि केवल 15 फीसदी खाते ऐसे हैं जिनमें लेन-देन हुआ। ज्यादातर खातों में खुलने के बाद से कोई लेन-देन नहीं हुआ। पर उत्साह की बात यह थी कि जिन खातों में लेन-देन हुआ, उनमें शेष राशि खाता खुलने के समय से ज्यादा थी। खाता खोलने व उसके संचालन की औसत लागत 50.45 व 13.40 रुपये आंकी गई।

इस अध्ययन में यह सुझाव दिया गया कि खाता खोलते समय वित्तीय साक्षरता का प्रशिक्षण ज़रूरी है। जिन शाखा प्रबंधकों का सामाजिक दायित्व योजनाओं का निष्पादन शानदार रहा है, उन्हें प्रोत्साहन राशि दी जानी चाहिए। असल में वित्तीय साक्षरता की कमी भारत में ही नहीं बल्कि विकसित देशों में भी तीव्रता से महसूस की जा रही है। यद्यपि विकसित और भारत जैसे विकासशील देश की वित्तीय साक्षरता की आवश्यकता और पृष्ठभूमि में ज़मीन-आसमान का अंतर है। भारत में विपन्नता है। विकसित देशों में ऐसी कोई समस्या नहीं है। विकसित देशों में लोग बचत नहीं करते हैं और भारत में कठोर जीवन परिस्थितियों के चलते अधिसंख्य लोग बचत नहीं कर पाते। अमरीकी लोगों की वित्तीय समझ पर वर्ष 2008 में एक समाचार पत्रिका में रिपोर्ट छपी थी। इसमें एक बहुत साधारण सवाल पूछा गया। यदि आप 10 प्रतिशत सालाना प्रतिफल पर 200 डॉलर निवेश करते हैं तो 2 साल बाद आपको कितनी राशि मिलेगी? 34 फीसदी अमरीकी लोगों का जवाब था 240 डॉलर, जो सर्वथा गलत था। केवल 18 फीसदी अमरीकी सही उत्तर दे पाए- 242 डॉलर। भारत में निरक्षरता और कम शिक्षा के चलते हालात और दयनीय है। निम्न आय वर्ग और वंचित तबके के लोग यह नहीं जानते कि उन्होंने जो कर्ज़ लिया है, उसकी दर क्या है? क्या यह दर

घटते हुए कर्ज़ पर है या सपाट दर पर है? उनको कुल कितनी राशि ब्याज़ के रूप में देनी होगी, यह प्रायः मालूम नहीं होता है। बचत खातों के बारे में उन्हें नहीं मालूम होता है कि वे साल में कितने बार धन निकाल सकते हैं। ग्रामीण भारत में अधिसंख्य आबादी नहीं जानती कि उन्हें कितनी अवधि में कर्ज़ चुकाना है और कुल देय ब्याज की रक़म क्या होगी?

इस संदर्भ में देश के प्रसिद्ध गैर-सरकारी संगठन 'सेवा' के अनुभवों से काफी कुछ सीखा जा सकता है। उनकी स्पष्ट अवधारणा है कि वित्तीय समावेशन के लिए ज़रूरी है कि पहले उनकी जीवनशैली और जीविका को समझा जाए। इसके बाद उनको आय-व्यय और बचत की धारणाओं को समझाया जाए। बैंकों के अभियान में सबसे बड़ी कमज़ोरी यह है कि उनकी सोच, कार्यकलाप कागज़ी कार्रवाई से अधिक नहीं जा पा रहा है। केवल कागज़ पर आंकड़ों का पेट भरना उनका लक्ष्य होता है। आपातकाल में वृक्षारोपण अभियान को भी कागज़ों पर भारी सफलता मिली थी। वित्तीय समावेशन के क्रम में यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि निम्न वर्ग या वंचित तबके का केवल खाता खोलने या केवल एक कर्ज़ देने से वित्तीय समावेशन का असली मकसद पूरा नहीं हो सकता है। उनके जीवन की विवशताओं, कठिनाइयों, आवश्यकताओं को समझकर ही वित्तीय समावेशन का कोई सार्थक, कारगर और स्थायी कार्यक्रम बन सकता है। क़ामकाजी ऋण के अलावा उन्हें कब-कब कर्ज़ की आवश्यकता पड़ती है जैसे- जन्म, श्राद्ध, विवाह, शिक्षा के लिए या जीवन की दूसरी ज़रूरी चीजों मसलन रेडियो, साइकिल, मोबाइल आदि आदि के लिए। उनके उपयोग की अनिवार्य आवश्यकताओं को वित्तीय समावेशन में शामिल किया जाना चाहिए। जैसे- मकानों की मरम्मत, मकान क्रय या पुराने ऋणों की अदायगी आदि। यहां माइक्रो फाइनेंस अभियान पर नज़र रखना ज़रूरी है। इस समय माइक्रो फाइनेंस को भारी तवज्ज़ो सरकार दे रही है। लेकिन जो ब्याज माइक्रो फाइनेंस में वसूली जा रही है, वह आंखें खोल देने वाली है। 24-70 फीसदी ब्याज़ माइक्रो फाइनेंस के तहत दिए गए कर्ज़ पर वसूली की जा रही है। यह कुछ ऐसा ही हो रहा है, जैसा चिट फंड कंपनियों ने किया था। रिज़र्व बैंक को तत्काल इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। अभी तो केवल सूदखोरों के कार्यकलापों को कानूनी ज़ामा पहनाने का काम माइक्रो फाइनेंस में रत अनेक कंपनियां कर रही हैं। ❑

(लेखक आर्थिक पत्रकार हैं और दैनिक *अमर उजाला* के संपादक रह चुके हैं)

अब किफ़ायती तकनीक से नाचेंगी तकलियां

अपर्याप्त बिजली उपलब्धता के अलावा विद्युत दर में बार-बार संशोधन ने पंजाब के वस्त्र निर्माताओं को ऊर्जा संरक्षण प्रौद्योगिकियों में निवेश के लिए प्रोत्साहित किया है। इन निर्माताओं में से कुछ ने कंप्रेस्ड और मैनेजमेंट कार्यक्रम की लेखा परीक्षा और आकलन तथा अपेक्षित बिजली बचत को ध्यान में रखते हुए निवेश एवं प्रक्रियाओं पर एक रिपोर्ट तैयार किए जाने के लिए एजेंसियों की भी सेवा ली है। कोयंबटूर स्थित सिस्टेल ग्रुप ऑफ कंपनीज के प्रबंध निदेशक हिधय के. कहते हैं, "अब तक लगभग 20 कताई इकाइयों ने लेखा परीक्षा के लिए दिलचस्पी दिखाई है जिनमें से तीन फर्में (चीमा स्पिनटेक्स, विनसम टेक्सटाइल्स और वर्धमान पोलीटेक्स) कंप्रेस्ड एयर मैनेजमेंट प्रोग्राम के कार्यान्वयन के लिए अनुबंधों पर पहले ही हस्ताक्षर कर चुकी हैं।"

इन इकाइयों द्वारा ऊर्जा संरक्षण के लिए प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल पर विस्तार से बताते हुए उन्होंने कहा कि कंप्रेस्ड एयर निर्माण प्रक्रिया के लिए किसी भी उद्योग द्वारा अपनाए जाने वाले स्वचालन के लिए प्रमुख यूटीलिटी है। हाल के वर्षों में वस्त्र निर्माण मशीनरी निर्माताओं ने अपनी स्वचालन ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अपनी मशीनों में न्यूमेटिक कंपोनेंट या कलपुर्जों के इस्तेमाल को तेज़ी से बढ़ावा दिया है।

लगभग 25,000 तकुओं की क्षमता वाली मझोली कताई मिलों में लगभग 15,000-18,000 न्यूमेटिक कंपोनेंट, जिनमें एयर प्रिपरेशन इकाइयां/वाल्व/एक्चुएटर्स/ कनेक्टर-हॉसेस और एसेसरीज शामिल हैं, का इस्तेमाल किया जाता है।

हालांकि इन सभी कंपोनेंट में स्राव-मुक्त स्थिति सुनिश्चित करना बेहद कठिन है, क्योंकि लीकेज की वजह से हवा का नुक़सान काफी अधिक होता है। कंप्रेस्ड गैस का इस्तेमाल काफी महंगा (एक यूनिट कंप्रेस्ड एयर के उत्पादन के लिए लगभग 10 इलेक्ट्रिक यूनिट की ज़रूरत पड़ती है) हो गया है और यह किसी कताई मिल द्वारा कुल बिजली उपभोग का 5-8 फीसदी होता है।

पंजाब में 6 लाख से अधिक तकलियां हैं। हिधय के अनुसार राज्य की प्रमुख कताई मिलों में कंप्रेस्ड एयर मैनेजमेंट कार्यक्रम का कार्यान्वयन बिजली खपत में अनुमानित रूप से 6.5 मेगावाट तक की कमी लाएगा। पंजाब राज्य विद्युत नियामक आयोग द्वारा बिजली की दर में हाल में किए गए संशोधन की वजह से इस उद्योग को प्रति यूनिट 40 पैसे अतिरिक्त चुकाने होंगे।

इस उद्योग के जानकारों के मुताबिक एक तकली रोज़ाना लगभग दो यूनिट बिजली का उपभोग करती है। इस हिसाब से 25,000 तकलियों की क्षमता वाली एक मिल को रोज़ाना 50,000 यूनिट की ज़रूरत पड़ती है और बिजली दरों में बढ़ोतरी के बाद उसे अब 20,000 रुपये रोज़ाना का अतिरिक्त ख़र्च वहन करना पड़ेगा।

छोटे आकार की इकाइयां जहां पहले 3.58 रुपये प्रति यूनिट के हिसाब से चुकाती थीं, अब उन्हें 3.92 प्रति यूनिट की दर से भुगतान करना होगा। इसी तरह मझोले और बड़े आकार की इकाइयों के लिए बिजली दर को 3.95 रुपये प्रति यूनिट से बढ़ा कर 4.33 रुपये प्रति यूनिट कर दिया गया है।

विनसन टेक्सटाइल इंडस्ट्री के प्रबंध निदेशक आशीष बगरोडिया कहते हैं, "समस्या सिर्फ़ बिजली दर में बढ़ोतरी को लेकर नहीं है बल्कि बिजली की उपलब्धता को लेकर भी है।" ❑

कोमल अमित गेरा

(*बिजनेस स्टैंडर्ड* से साभार)

असंगठित क्षेत्र की छतरी

● उमेश चतुर्वेदी

यह कितनी बड़ी विडंबना है कि देश के सकल घरेलू उत्पाद में 63 प्रतिशत का योगदान करने वाले मज़दूर मौजूदा दौर में ज़िंदगी की आम ज़रूरतों और सहूलियतों से महरूम हैं। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण चार साल पहले यानी सन् 2004-2005 में हुआ था। इस सर्वेक्षण के मुताबिक उस वक्त कुल 45.9 करोड़ लोगों को रोज़गार मिला हुआ था, जिसमें संगठित क्षेत्र में महज 2.6 करोड़ लोग ही नौकरियां कर रहे थे, जबकि उम्मीद से भी कहीं ज्यादा यानी क़रीब 43.3 करोड़ लोग असंगठित क्षेत्र की नौकरियों के ज़रिये अपनी ज़िदगी की गाड़ी खींच रहे थे। चार साल बीतने के बावजूद संगठित क्षेत्र और असंगठित क्षेत्र के इस विरोधाभासी संतुलन में कोई अंतर नहीं आया है। बल्कि आज आर्थिक मंदी के दौर में जिस तरह नौकरियों पर संकट बन आया है, उससे साफ़ है कि असंतुलन और बढ़ा ही होगा। देश के सकल घरेलू उत्पाद में असंगठित क्षेत्र के इस योगदान को खुद राज्यसभा में श्रम मंत्री ऑस्कर फर्नांडिस भी स्वीकार कर चुके हैं।

हक़ीक़त तो यह है कि जिस वर्ग पर देश की प्रगति का सबसे ज्यादा दारोमदार है, मज़दूरों, ड्राइवरों, निर्माण कामगारों, घरेलू नौकरों और ऐसी कई दूसरी तरह की अस्थायी नौकरियां कर रहा यह तबका ज़िंदगी की आम ज़रूरतों को पूरा करने और आज की चकाचौंध भरी जीवनशैली का स्वाद चखने से दूर है। खुद नमूना सर्वेक्षण रिपोर्ट ही बताती है कि असंगठित क्षेत्र के सबसे ज्यादा मज़दूर यानी 26.9 करोड़ कृषि कार्य में लगे हैं। असंगठित क्षेत्र में रोज़गार मुहैया कराने वालों में दूसरे नंबर पर निर्माण उद्योग है, जिसमें 2.6 करोड़ लोगों को काम मिला हुआ है। बाकी लोग परिवहन, संचार, सिलाई-कढ़ाई, बीड़ी-पापड़ बनाने के साथ ही घरेलू कार्यों में लगे हुए हैं। ज़ाहिर है, ऐसे में सरकार का सामाजिक दायित्व बढ़ जाता है।

गांधीजी ने ऐसे ही लोगों को ध्यान में रखकर बड़े उद्योगों को बढ़ावा देने के बजाय ग्राम स्वावलंबन आधारित छोटे और कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने की वक़ालत की थी। उनकी क्रांतिकारी पुस्तक *हिंद स्वराज* लिखे जाने के सौ साल पूरे हो गए हैं। लेकिन यह पुस्तक आज भी कितनी प्रासंगिक है, इसे समझने के लिए असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों की हालत को देखना-परख़ना ज्यादा समीचीन होगा। *हिंद स्वराज* के हरफ़ों के मुताबिक मौजूदा दुनिया में देश की अर्थव्यवस्था को चलाना शायद ही किसी सरकार के बूते की बात हो। लेकिन यह भी सच है कि सामाजिक सुरक्षा मुहैया कराना सरकारों की ही जिम्मेदारी है। मौजूदा माहौल में नियोक्ताओं पर असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों को सामाजिक सुरक्षा मुहैया करा पाने का लक्ष्य हासिल कर पाना भी आसान नहीं है। शायद यही वजह है कि आर्थिक उदारीकरण के चरम दौर में सरकार को आगे आना पड़ा है।

असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों की हित रक्षा के लिए सरकार ध्यान देती रहती है। केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री स्वर्ण जयंती रोज़गार योजना, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, संपूर्ण ग्रामीण रोज़गार योजना की शुरुआत की। इसके नतीज़े भी देश को देखने को मिले। 1 अप्रैल, 2008 को केंद्र सरकार ने आम आदमी स्वास्थ्य बीमा योजना, राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना लागू की है।

आम आदमी स्वास्थ्य बीमा योजना के तहत अगर बीमित व्यक्ति की मौत बीमा की समाप्ति के पहले हो जाती है तो नामित व्यक्ति को 30,000 रुपये की रक़म मिलेगी। अगर बीमित व्यक्ति की किसी हादसे में मौत हो जाती है तो उसके घर वालों को 75,000 रुपये मिलेंगे। अगर हादसे में वह स्थायी तौर पर विकलांग होता है, तब उसे इतनी ही रक़म मिलेगी। लेकिन अगर वह आंशिक तौर पर विकलांग हो जाता है, उसे एक आंख या एक अंग खोना पड़ता है तो उसे 37,500 रुपये की रक़म मिलेगी। इस बीमा योजना के साथ एक नि:शुल्क जोड़-योजना भी शुरू की गई है जिसके तहत बीमाधारी के बच्चों को छात्रवृत्ति दी जा रही है। इसके तहत 9वीं से 12वीं कक्षा में पढ़ रहे अधिकतम दो बच्चों को प्रतिमाह 100 रुपये की दर से छात्रवृत्ति दी जाएगी, जो प्रतिवर्ष 1 जुलाई से 1 जनवरी के बीच अर्द्धवार्षिक रूप से देय है। इस योजना के तहत प्रीमियम 200 रुपये होगा, जिसमें से आधी केंद्र सरकार द्वारा बनाई गई निधि से बतौर सब्सिडी मिल रही है। जबकि बाकी आधी रक़म का भुगतान संबंधित राज्य सरकारें कर रही हैं। इसके तहत एक करोड़ ऐसे लोगों को जोड़ने का लक्ष्य है, जो भूमिहीन हैं और उनके पास आय का स्थायी ज़रिया नहीं है। इसके तहत असंगठित क्षेत्र के उन्हीं लोगों को जोड़ा जा सकेगा, जिनकी उम्र 18 से 59 साल के बीच है।

इसी तरह केंद्र सरकार ने ग़रीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों के लिये राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना शुरू की है। इसके तहत पीले व गुलाबी राशन कार्डधारकों के परिवारों को स्मार्ट कार्ड दिए जा रहे हैं। यह कार्ड महज तीस रुपये की फीस लेकर बनाया जा रहा है। इस योजना के तहत स्मार्ट कार्डधारक व्यक्ति को अपने और कार्ड में दर्ज़ परिवार के सदस्यों के इलाज़ पर 30 हज़ार तक की रक़म का भुगतान खुद ही करना होगा। इस योजना के तहत व्यक्ति को इलाज़ के लिए अस्पताल आने-जाने

के लिए सौ रुपये अतिरिक्त यात्रा भत्ता भी सरकार द्वारा ही दिया जाएगा, जो अधिकतम एक हज़ार रुपये तक ही होगा। लेकिन जन्मजात, बाहरी बीमारियों, नशीली दवाओं के सेवन से पैदा बीमारियों, टीकाकरण, आत्महत्या के प्रयास से उत्पन्न समस्या तथा युद्ध के मामले में स्मार्ट कार्डधारक को इस योजना का लाभ नहीं मिलेगा। सरकार द्वारा पीले व गुलाबी राशन कार्डधारकों के परिवारों को चिप लगा एक स्मार्ट कार्ड दिया जा रहा है। जिसमें पूरे परिवार की जानकारी रिकार्ड होती है। कार्ड में ही पॉलिसी कवर का विवरण भी दिया जा रहा है। कार्ड के खो जाने या ख़राब हो जाने तथा उसमें परिवार के सदस्यों के नाम जोड़ने या हटाने की हालत में सौ रुपये का शुल्क ज़मा करवाना होगा। इसके तहत केंद्र सरकार की योजना 6 करोड़ उन परिवारों को जोड़ने की है, जो ग़रीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले हैं। योजनाओं के रणनीतिकारों के दिमाग में गांवों में बसे तक़रीबन 65 फीसदी भारत के उन मज़दूरों का ख्याल निश्चित तौर पर रहा होगा, जो खेती के सीजन के बाद अपने गांवों से बाहर निकलकर मज़दूरी करने के लिए अंग्रेज़ों के ज़माने से ही मज़बूर रहे हैं। मौजूदा आर्थिक नीतियों के बाद आए बदलाव ने उनकी दुश्वारियां बढ़ा दी हैं, लिहाज़ा अपने गांवों को छोड़कर शहरों की ओर राज़गार के लिए पलायन करने की प्रवृत्ति में पिछले दो दशकों में कुछ ज्यादा ही इज़ाफ़ा हुआ है। सरकार की इन योजनाओं ने देश को नयी गति दी तो असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों को रोज़गार का नया ज़रिया भी दिया। लेकिन इस दिशा में सबसे ज्यादा क्रांति दिख रही है राष्ट्रीय रोज़गार गारंटी अधिनियम यानी नरेगा से, जिसने ग़रीबी रेखा से नीचे जीवन गुज़ार रहे ग्रामीण मज़दूरों को उनके घर के आसपास ही साल में कम-से-कम 100 दिनों के रोज़गार की गारंटी दी है। इस योजना में भ्रष्टाचार की ख़बरें आ रही हों, लेकिन यह भी सच है कि इस योजना के लागू होने के चलते बिहार जैसे राज्यों के मज़दूरों ने इस बार पंजाब का रुख कम ही किया। भारतीय किसान संघ के महासचिव अतुल कुमार अनजान के मुताबिक नरेगा के चलते देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में नयी तरह की तेज़ी भी आई है। बहरहाल, कुछ आर्थिक जानकार तो यह भी मानते हैं कि आर्थिक मंदी के दौर में देसी त्यौहारों और नरेगा ने देश की अर्थव्यवस्था को अमरीकी और यूरोपीय अर्थव्यवस्था की तर्ज़ पर तबाह नहीं होने दिया। अर्थशास्त्रियों का मानना है कि नरेगा के ज़रिये गांव-गांव तक पहुंची रक़म से समाज के कमज़ोर तबके के लोगों की क्रय क्षमता बढ़ी, जिसका फायदा ग्रामीण बाज़ारों ने उठाया और उस पूरी प्रक्रिया ने अर्थव्यवस्था को नयी गति दी।

संगठित क्षेत्र के कर्मचारियों को अपने नियोक्ताओं के ज़रिये चिकित्सा और सालाना परिवार समेत छुट्टी पर जाने के लिए एलटीए समेत कई सहूलियतें मिलती हैं। निजी क्षेत्र की कई कंपनियां तो अपने कर्मचारियों को रेस्तरां, क्लब और होटलों तक की सदस्यता मुहैया करा रही हैं। इसके साथ ही आए दिन कभी फैमिली डे तो कभी पिकनिक के नाम पर कई तरह की सहूलियतें कर्मचारियों को मुहैया कराई जा रही हैं। असंगठित क्षेत्र के कामगार यहां भी मार खा जाते हैं। उन्हें ज़रूरी ट्रांसपोर्ट और चिकित्सा सुविधाएं भी नहीं मिल पातीं। इसके लिए कई बार नियोक्ता भी जिम्मेदार होता है। लेकिन अधिकांश मामलों में नियोक्ता की आर्थिक ताक़त ही इतनी नहीं होती कि वह अपने कर्मचारियों को ये सुविधाएं मुहैया करा सके। होना तो यह चाहिए था कि देश के सकल घरेलू उत्पाद में सबसे ज्यादा भागीदारी करने वाले इस क्षेत्र को कम-से-कम चिकित्सा की सहूलियत मुहैया कराई जातीं। यह काम नियोक्ताओं के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता है। लिहाज़ा केंद्र सरकार ने तीन योजनाएं लागू करके एक तरह से इस क्षेत्र को राहत देने की नयी शुरुआत की है।

असंगठित क्षेत्र के लोगों के लिए केंद्र सरकार ने इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना शुरू की है। इसके तहत गरीबी रेखा से नीचे गुज़र-बरस कर रहे क़रीब पैंसठ साल की उम्र की सीमा पार कर चुके एक क़रोड़ लोगों को फ़ायदा पहुंचाने की योजना है। इसके तहत हर महीने 200 रुपये ही पेंशन मिलती थी, उसे बढ़ाकर अब पांच सौ रुपये कर दिया गया है। इसमें भ्रष्टाचार न हो, इसके लिए पेंशनरों को सीधे डाकघर में खुले ख़ाते में पेंशन दी जा रही है। हालांकि राज्य सरकारों की लाख कोशिशों के बावजूद भ्रष्टाचार के मामलों पर रोक लगती नज़र नहीं आ रही है।

असंगठित क्षेत्र में एक बड़ा वर्ग शिल्पियों और कारीगरों का भी है जिन्हें अपनी मेहनत के बूते ही अपनी कला को तो साधना ही पड़ता है, अपने और अपने परिवार का पेट भी पालना पड़ता है। सबसे ज्यादा ध्यान देने की बात यह है कि शिल्पी राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना में शामिल नहीं किए गए थे। लेकिन यह भी सच है कि उन्हें भी ग़रीबी रेखा से नीचे ज़िंदगी गुजार रहे लोगों की तरह स्वास्थ्य और चिकित्सा की तमाम दिक्क़तों का सामना करना पड़ता है। शायद यही वजह है कि केंद्र सरकार ने पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी की याद में राजीव गांधी शिल्पी स्वास्थ्य परिवार योजना शुरू की है। इसके तहत हथकरघा कारीगरों और उनके परिवारों को सहायता मुहैया कराने की दिशा में काम किया जा रहा है और उन्हें बीमा कवर के दायरे में लाया गया है।

असंगठित क्षेत्र के कामगारों को सामाजिक सुरक्षा मुहैया कराने के लिए केंद्र सरकार की कोशिशों से असंगठित क्षेत्र कामगार सामाजिक सुरक्षा विधेयक, 2008 संसद ने पारित कर दिया गया है। इसके तहत असंगठित क्षेत्र के कामगार की नयी परिभाषा तय करने और उनकी ज़िंदगी और विकलांगता से जुड़े मामलों को हल करने की कोशिश की गई है। इसके साथ ही असंगठित क्षेत्र के कामगारों को स्वास्थ्य और मातृत्व लाभ देने, वृद्धावस्था की सुरक्षा के साथ ही केंद्र सरकार से मिलने वाले फ़ायदे का कानूनी हक़ देने की कोशिश की जा रही है। अब तक असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों के मामलों को देखने के लिए स्वतंत्र रूप से कोई बोर्ड नहीं है। इस विधेयक में राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा सलाहकार बोर्ड और ऐसे ही बोर्ड राज्य स्तर पर भी बनाने का प्रावधान है। केंद्र की इस कोशिश के बाद यह तय है कि समाज कल्याण बोर्ड और महिला आयोग की तरह एक संवैधानिक संस्था होगी, जो देश के सकल घरेलू उत्पाद में सबसे ज्यादा योगदान करने वाले इस वंचित वर्ग की समस्याओं पर ध्यान दे सकेगी।

केंद्र सरकार और राज्य सरकारों ने भी अपनी-अपनी तरह से असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों के लिए कई योजनाएं शुरू की हैं। इनमें कोयला ख़दानों के मज़दूरों, बीड़ी मज़दूरों आदि की सहूलियतों के लिए योजनाएं शामिल हैं। हालांकि सिर्फ़ असंगठित क्षेत्र के कामगारों के नाम पर चल रही ये योजनाएं भी सही तरीक़े से लागू कर दी जाएं तो हाड़-तोड़ मेहनत के ज़रिये देश की तस्वीर बदलने वाले इस वर्ग के भी चेहरे पर मोहक और संतोषप्रद मुस्कान लाई जा सकती है, जिसका सपना कभी गांधीजी ने देखा था। ❑

(लेखक पत्रकार हैं।
ई-मेल : uchaturvedi@gmail.com)

आर्थिक मंदी में विकास का आधार खाद्य प्रसंस्करण उद्योग

● विजय लक्ष्मी कसौरिया

भारत एक ऐसा देश है जिसकी धरती शस्यश्यामला है। आज भी हम दुनिया के सबसे बड़े दुग्ध उत्पादक देश की श्रेणी में हैं और फल और सब्ज़ियों के उत्पादन में दूसरे स्थान पर हैं। हमारे किसान रात-दिन की मेहनत से खेतों में सोना उपजाते हैं ताकि हमारी भोजन की थाली हमेशा भरी रहे। लेकिन यह भी सच है कि 35 फीसदी कृषि उत्पाद खाद्य प्रसंस्करण के अभाव में ख़राब हो जाते हैं। यदि आज दुनिया में आर्थिक मंदी के माहौल को देखें तो यह एकमात्र ऐसा क्षेत्र है जहां कभी मंदी हो ही नहीं सकती, यदि हम अपने उत्पादों का सही प्रसंस्करण करें, उनका रखरखाव करें तो किसान को उसकी खेती का सही मूल्य मिलेगा और उनका जीवनस्तर उन्नत होगा, विकास की बयार खेत-खलिहानों से बहती दिखाई देगी और विकासदर बढ़ेगी। अगर हम विश्व परिदृश्य पर नज़र डालें तो वहां उत्पादन कम होता है लेकिन जितना खाद्य उत्पादन होता है उसका लगभग 80 फीसदी भाग प्रसंस्कृत किया जाता है। भोजन, पेय और स्नेक्स डिब्बों में उपलब्ध हैं, केन में उपलब्ध हैं और आसानी से इस्तेमाल योग्य हैं।

आर्थिक मंदी के कारण अनेक क्षेत्रों में नौकरियों में कमी आई है और इससे कई समस्याएं भी उत्पन्न हो रही हैं। लेकिन कृषि प्रधान देश भारत में यदि उत्पादों का सही प्रसंस्करण होता है तो यह ऐसा उद्योग है जहां आर्थिक मंदी की छाया तक नहीं पड़ सकती। क्षमता के मामले में हम वाकई दुनिया की फूड फैक्ट्री (खाद्य संयंत्र) बन सकते हैं। वैश्विक आर्थिक मंदी के बावजूद भारत में खाद्य प्रसंस्करण उद्योग 13.7 फीसदी की दर से बढ़ रहा है। भारत का खाद्य बाज़ार 182 अरब डॉलर से अधिक का है और भारतीय खुदरा बाज़ार में इसकी भागीदारी क़रीब दो तिहाई है। यह अनुमान लगाया जा रहा है कि भारत में खुदरा खाद्य उद्योग वर्ष 2008 के क़रीब 70 अरब डॉलर से बढ़कर 2025 तक 150 अरब डॉलर के बिंदु पर पहुंच जाएगा और इस तरह यह विश्व खाद्य मौजूदा 175 अरब डॉलर से बढ़कर 400 अरब डॉलर का हो जाएगा।

भारत एक विशाल देश है। खेती योग्य ज़मीन की उपलब्धता के मामले में हम चीन के बाद दूसरे स्थान पर हैं और डेरी उत्पादों की श्रेणी में हम अग्रणी हैं। तीसरे सबसे बड़े अनाज उत्पादक और मछली उत्पादक देश का सम्मान भारत को प्राप्त है। खाद्य प्रसंस्करण मंत्री सुबोधकांत सहाय इस उद्योग को आर्थिक मंदी के माहौल में शक्ति का संचार कहते हैं। उनके अनुसार यह उद्योग ऐसा है जो भारत की तस्वीर बदल कर रख देगा। क्योंकि यह किसानों को उनके उत्पादों का ज्यादा लाभकर मूल्य दिलाकर और शीघ्र नष्ट होने वाले उत्पादों की बरबादी को नियंत्रित करके अधिक आय सुनिश्चित करेगा जिससे निश्चित तौर पर रोज़गार उपलब्ध होगा और ग़रीबी दूर होगी।

हालात चाहे जैसे भी हों भोजन तो ज़रूरी है। इसलिए यह उद्योग कभी भी बंद नहीं होगा। जब तक इस संसार में मानव मात्र का अस्तित्व होगा तब तक भोजन की आवश्यकता बनी रहेगी। यानी मंदी किसी भी तरह की क्यों न आ जाए लेकिन खाद्य क्षेत्र में मंदी कभी नहीं आ सकती। अगर हम अपने उपलब्ध उत्पादों को सही तरीक़े से प्रस्तुत करें, उनकी बरबादी रोकें और लंबे समय के लिए उन्हें सुरक्षित रखें तो न अन्न की कमी होगी और न ही धन की। जब यह उद्योग कमाई करने लगेगा तो किसानों के साथ साझेदारी होगी और उनका जीवन निर्बाध चलेगा। उद्योग और किसान को एक-दूसरे को समझना होगा, ग्राहकों की मांग के अनुसार खेती वक्त की मांग है। कृषि और बाज़ार का संचालन ज़रूरी है। इसके लिए खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय किसानों से संपर्क करने की योजना बना रहा है। इस दौरान किसानों को यह जानकारी दी जाएगी कि उन्हें क्या उपजाना चाहिए, किस उत्पाद की बाज़ार में अधिक ज़रूरत है और कौन से उत्पादों को हम अंतरराष्ट्रीय स्तर पर निर्यात कर सकते हैं। कृषि आपूर्ति निर्देशित न होकर मांग-निर्देशित और बाज़ार निर्देशित होगी तभी आज के बदलते हुए वक्त में किसान अपनी उपज का सही मूल्य हासिल कर सकेगा और उसका जीवन स्तर उन्नत हो सकेगा। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय इस योजना के तहत देश के विभिन्न हिस्सों में 10 मेगा फूड पार्क स्थापित करेगा और प्रत्येक के दायरे में 3 से 5 ज़िलों के कृषि और बागवानी क्षेत्रों का समावेश होगा। खेतों से उत्पादों को फूड पार्कों में भेजा जाएगा जहां खाद्य प्रसंस्करण पैकेजिंग, व्यापार, विपणन की पर्याप्त सुविधाएं होंगी। ये पार्क खेतों और खुदरा दुकानों के बीच एक सेतु की भूमिका निभाएंगे। आंध्र प्रदेश के चित्तूर, तमिलनाडु के धर्मपुरी, कर्नाटक के चिकमंगलूर, महाराष्ट्र के शिरवाल, असम के नलबाड़ी, पश्चिम बंगाल के जंगीपुर, झारखंड के रांची, उत्तर प्रदेश के रायबरेली, उत्तराखंड के हरिद्वार और पंजाब के जालंधर में

इन फूड पार्कों की स्थापना की जाएगी। हर फूड पार्क में 30 से 35 खाद्य प्रसंस्करण इकाइयां होंगी। इससे लगभग 40 हज़ार लोगों के लिए रोज़गार के अवसर सृजित होंगे और लगभग 1 लाख परिवारों की आर्थिक स्थिति बेहतर होगी। किसानों को फ़सल का लाभकारी मूल्य मिलेगा और बिचौलियों से मुक्ति मिलेगी।

सुरक्षा और गुणवत्ता खाद्य पदार्थों के लिए सर्वोपरि है। जब खाद्य पदार्थ पौष्टिक तत्वों के साथ-साथ गुणवत्ता की दृष्टि से भी संपन्न होते हैं तो इनकी मांग न केवल देश में बल्कि विदेशों में भी बढ़ती है। भारत में अलग-अलग प्रदेशों में कई ऐसी प्रसिद्ध चटोरी गलियां हैं जो परंपरागत खाने के लिए मशहूर हैं। राजधानी के चांदनी चौक में पराठे वाली गली, कोलकाता की छेने की मिठाई या मछली से बने व्यंजन जयपुर में मावे की मिठाई, हैदराबाद में बिरयानी और दक्षिण के राज्यों में इडली, डोसा, उत्पम के साथ-साथ महाराष्ट्र और पूर्वोत्तर के राज्यों में खान-पान की समृद्ध परंपरा रही है। सुरक्षित स्ट्रीट फूड सुनिश्चित करने के लिए एक राष्ट्रीय कार्यक्रम तैयार किया जा रहा है ताकि यहां परोसे जाने वाले भोजन की गुणवत्ता बनी रहे और यह परंपरा भी कायम रहे। कई बार ऐसा भी होता है कि हम अपने खाद्य पदार्थ विदेशों में भेजते हैं लेकिन वहां के खाद्य पैमाने के आधार पर उन्हें लौटा दिया जाता है। यूरोपीय संघ में खाद्य मानकों के लिए अलग कानून है। इस पर यूरोपीय संघ में भी काफी विवाद है। हर देश और हर शहर का अपना मापदंड होता है। इसलिए यह आवश्यक है कि खाद्य गुणवत्ता और मानकों के लिए पैमाना समान हो और शोध और विकास के लिए भारत अन्य देशों के साथ संयुक्त प्रयोगशालायें भी खोले। आज के बदलते हुए परिदृश्य में कई क्षेत्र ऐसे हैं जहां सुधार की आवश्यकता है, नीतियां बदलने की ज़रूरत है। भारत की शहरी आबादी का दो फीसदी हिस्सा अपनी आजीविका के लिए गली-कूचों में बिकने वाले व्यंजनों पर निर्भर है। यहां मिलने वाले व्यंजनों की गुणवत्ता में सुधार के लिए फुटकर कारोबारियों को सामान्य पंजीकरण प्रक्रिया के जरिये पहचान दी जाएगी। निगम प्रशासन और पुलिस समेत सभी स्थानीय निकायों को इस परियोजना को लागू कराने में शामिल किया जाएगा। विक्रेताओं को सुरक्षा और स्वच्छता के विभिन्न पहलुओं पर प्रशिक्षण दिया जाएगा। खाद्य उत्पादों की तैयारी, भंडारण और प्रस्तुति के लिए भी प्रशिक्षित किया जाएगा। इन कारोबारियों और उनके पारिवारिक सदस्यों की स्वास्थ्य जांच, परिवार के अधिकतम चार सदस्यों को बीमा और स्वास्थ्य बीमा सुरक्षा के दायरे में लाया जाएगा। खाद्य प्रशिक्षण प्रयोगशालाओं की स्थापना आज वक्त की मांग है। इससे भारतीय भागीदारों को विश्व उद्योग संगठन के बाद आर्थिक व्यवस्था में वैश्विक प्रतियोगिता से सामना करने और गुणवत्ता और स्वच्छता मानकों पर अमल करने में मदद मिलेगी और विदेशी ख़रीदारों की संख्या बढ़ेगी। खाद्य सुरक्षा और गुणवत्ता एक ऐसा विषय है जिस पर विश्व में सभी देश एकमत हैं क्योंकि यह स्वास्थ्य से संबंधित है। हमें उपभोगताओं को यह विश्वास दिलाना होगा कि डिब्बाबंद भोजन स्वास्थ्य के सभी मानकों के अनुरूप है। विश्व बाज़ार में 'रेडी टू ईट' और 'रेडी टू सर्व भोजन' को गुणवत्ता की दृष्टि से अपनी एक पहचान बनानी होगी। इसमें कोई संदेह नहीं कि खाद्य सुरक्षा और गुणवत्ता के मामले में हम आगे बढ़ रहे हैं। देश में गुणवत्ता परिषद जैसी संस्थानों की स्थापना हो रही है। खाद्य सुरक्षा और गुणवत्ता के लिए वैज्ञानिक जानकारी मुहैया कराई जा रही है। अलग-अलग प्रदेशों में राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रमों का आयोजन एक और पहल है।

विश्व के विभिन्न देशों में आर्थिक मंदी के बावजूद खाने की दुकानें बंद नहीं हुई हैं। विदेशों में हर गली में छोटी-बड़ी दुकानें हैं। वहां उत्पादन का स्तर न्यूनतम होने के बावजूद प्रसंस्करण का स्तर 80 फीसदी से भी अधिक है, इसीलिए किसान भी समृद्ध हैं और लोग भी। आज ज़रूरत इस बात की है कि हम खाद्य प्रसंस्करण के महत्व को समझें और इस तकनीक को खेतों तक ले जाएं ताकि हमारा किसान वैज्ञानिक जानकारी हासिल कर सके और अपने उत्पादों का तत्काल ही उपयोग न करे बल्कि उन्हें भविष्य के लिए सुरक्षित भी रखे तभी किसान का जीवन उन्नत होगा और देश भी प्रगति के पथ पर दिन-दूनी रात-चौगुनी उन्नति करेगा। ❑

(लेखिका पीआईबी में उपनिदेशक (मीडिया एवं संचार) हैं।
ई-मेल : vlaxmi20@yahoo.com**)**

अर्थशास्त्र का नोबेल पहली बार महिला को

अमरीकी अर्थशास्त्री इलिनर ओस्ट्रम और ओलिवर विलियमसन को संयुक्त रूप से वर्ष 2009 का अर्थशास्त्र का नोबेल पुरस्कार दिया जाएगा। ओस्ट्रम अर्थशास्त्र का नोबेल जीतने वाली पहली महिला हैं। इन्हें साझी संपत्ति के बेहतर प्रबंधन से जुड़ा नया सिद्धांत प्रतिपादित करने के लिए यह पुरस्कार देने का फैसला किया गया।

पुरस्कार के लिए इलिनर और ओलिवर का चयन करने वाली समिति ने कहा कि इन दोनों के शोध से यह साबित होता है कि आर्थिक विश्लेषण के जरिये सामाजिक संगठनों से जुड़े अधिकांश पहलुओं पर रोशनी डाली जा सकती है। ओस्ट्रम को आर्थिक प्रशासन का विश्लेषण करने के लिए यह पुरस्कार मिलेगा। उनका यह विश्लेषण खासकर साझे नियंत्रण वाली साझी संपत्ति को लेकर है। आम मान्यता यही है कि साझा नियंत्रण वाली साझी संपत्ति का प्रबंधन आसान नहीं होता और इसके अच्छे आर्थिक परिणाम नहीं मिलते। ओस्ट्रम ने अपने शोध से इस मान्यता को गलत साबित किया है। इसके लिए उन्हें नोबेल पुरस्कार के रूप में मिलने वाली रकम का आधा हिस्सा, यानी 7.1 लाख डॉलर (करीब साढ़े तीन करोड़ रुपये) मिलेगा। ओस्ट्रम इंडियाना विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं। नोबेल पुरस्कार की घोषणा के बाद उहोंने कहा कि यह सम्मान पाने और इसे पाने वाली पहली महिला बनने की खबर सुनकर वह स्तब्ध रह गईं। विलियमसन को आर्थिक प्रशासन के उनके विश्लेषण के लिए पुरस्कार की शेष आधी राशि मिलेगी।

अर्थशास्त्र का नोबेल

नोबेल पुरस्कार स्वीडिश उद्योगपति और डायनामाइट के आविष्कारक अल्फ्रेड नोबेल की वसीयत के अनुरूप शुरू किए गए थे। 1896 में नोबेल की मौत हुई और 1901 में पहली बार उनके नाम पर पुरस्कार दिए गए। ❑

सूक्ष्म, लघु और मझोले उद्योग क्या हैं?

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में एमएसएमई के योगदान को व्यापक रूप से स्वीकार्य बनाने के लिए, यह ज़रूरी है कि अधिक से अधिक लोग इससे प्रेरित होकर स्वयं का उद्योग शुरू करें। यह एमएसएमई क्षेत्र के लिए तो अच्छा होगा ही, देश के लिए भी लाभदायी होगा। इस क्षेत्र से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण जानकारियों की बानगी इस प्रकार है:

- **सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम किसे कहते हैं?**

एमएसएमई अधिनियम 2006 में उद्यमों की दो श्रेणियों को मान्यता दी गई है– विनिर्माण और सेवा। इनको निवेश के स्तर के आधार पर सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। विनिर्माण उद्योग को संयंत्र और मशीनरी में निवेश के आधार पर सूक्ष्म, लघु और माध्यम उद्यम के रूप में परिभाषित किया जाता है। 25 लाख रुपये के निवेश वाले उद्योग को सूक्ष्म, 25 लाख रुपये से 5 करोड़ रुपये तक के निवेश वाले को लघु और 5 करोड़ रुपये से 10 करोड़ रुपये तक के निवेश वाले उद्योगों को मध्यम उद्यम कहा जाता है। सेवा क्षेत्र के उद्यम के लिए 10 लाख रुपये के निवेश वाले उद्यम को सूक्ष्म, 10 लाख रुपये से 2 करोड़ रुपये तक के निवेश वाले को लघु और 2 करोड़ रुपये से 5 करोड़ रुपये तक के निवेश वाले को मध्यम उद्यम कहा जाता है।

- **एमएसएमई कौन स्थापित कर सकता है?**

कोई भी व्यक्ति अपनी पसंद के उत्पाद अथवा सेवा से संबंधित एमएसएमई की स्थापना कर सकता है।

- **एमएसएमई की स्थापना करते समय किन-किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए?**

सबसे पहली बात तो उत्पाद अथवा सेवा का सही चयन करना है। इसे ऐसा होना चाहिए जिसमें लोगों की दिलचस्पी हो और जिसका अच्छा बाज़ार हो। बाज़ार में स्वीकार्यता के बारे में बाज़ार के बढ़िया सर्वे और बाज़ार संबंधी सूचना के गहरे अध्ययन से पता लगाया जा सकता है। ज़मीन, भवन, कच्चा माल, कुशल जनशक्ति, उपयुक्त प्रौद्योगिकी, मशीनरी और उपकरणों, पानी, बिजली आदि की आवश्यकता का आकलन करना होता है, उनकी उपलब्धता बनी रहे यह सुनिश्चित करना होता है, प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी होती है, वित्त पूंजी का प्रबंध करना पड़ता है और उपयुक्त विपणन योजना तैयार करनी होती है।

- **एमएसएमई की स्थापना में क्या कदम तय करने होते हैं?**

एमएएएमई की स्थापना के प्रमुख कदम हैं– परियोजना का चयन, प्रौद्योगिकी और मशीनरी

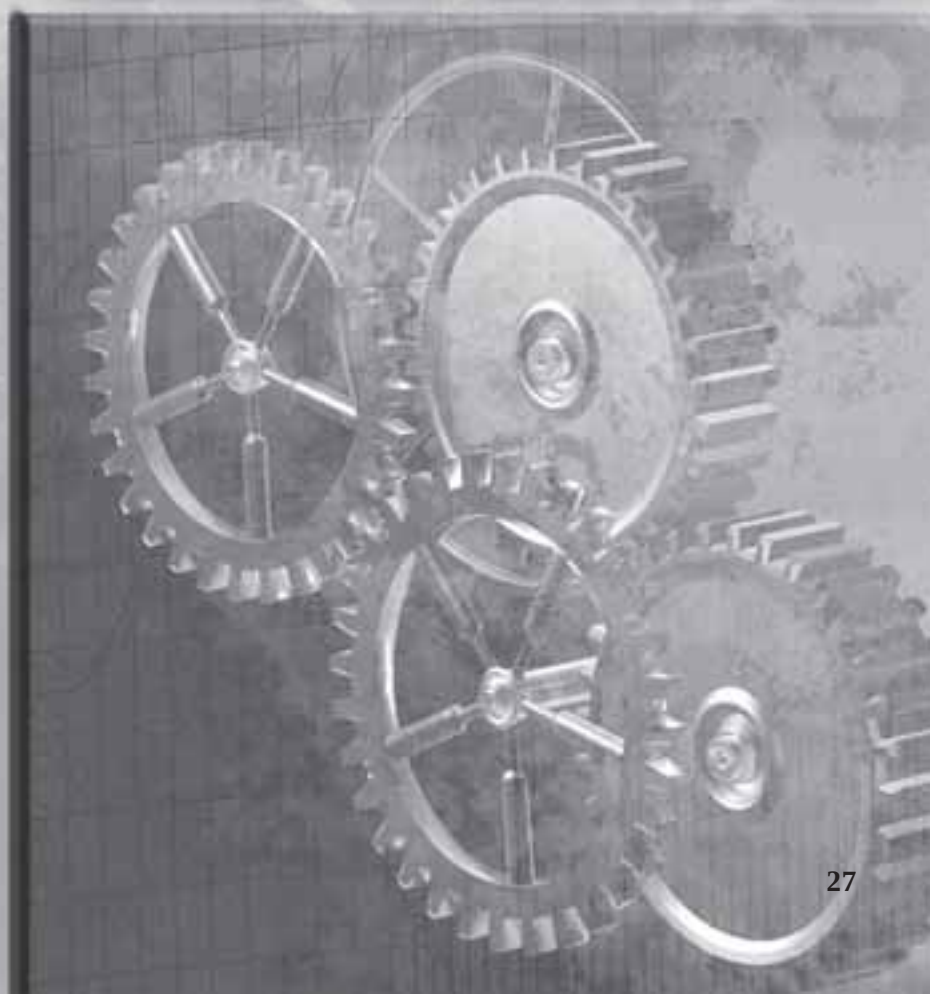

के बारे में निर्णय, पूंजी (वित्त) का प्रबंध, इकाई का विकास, उद्यमी के ज्ञापनों (मेमोरेंडम), अनुमोदनों, स्वीकृतियों, गुणवत्ता प्रमाणन संबंधी प्रपत्रों को भरना।

- **उपर्युक्त विवरणों को तय करने में उद्यमी की सहायता कौन कर सकता है?**

एमएसएमई विकास संस्थान, जिला उद्योग केंद्र और राज्यों के उद्योग निदेशालय उद्यमियों को सूक्ष्म, लघु और माध्यम उद्यमों के संवर्धन और विकास के लिए तकनीकी, आर्थिक तथा प्रबंधन परामर्श प्रदान करते हैं। वे विभिन्न उत्पादों और सेवाओं से जुड़ी बाज़ार की जानकारी देकर उद्यमियों की सहायता करते हैं, प्रशिक्षण देते हैं, परियोजना रिपोर्ट तैयार करने में मदद करते हैं और विषय से संबंधित व्यापक मार्गदर्शन करते हैं। राज्यों के वित्तीय निगम और राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम (एनएसआईसी) भी उद्यमियों को लाभप्रद जानकारी प्रदान करते हैं। एमएसएमई प्रौद्योगिकी विकास केंद्र साधनकक्ष एनआरडीसी और क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशालाएं उपयोगी प्रौद्योगिकी और उत्पादन प्रक्रिया के चयन संबंधी निर्णय लेने में सहायता प्रदान कर सकती हैं। राजीव गांधी उद्यमी मित्र योजना के तहत सरकार उद्यमियों को सहारा देने का काम कर रही है। सरकारी एजेंसियों के अलावा, व्यापार और उद्योग संघ तथा अन्य निजी एजेंसियां भी अनेक विशिष्टता प्राप्त निजी एजेंसियों की भांति उद्यमियों की सहायता करती हैं।

- **एमएसएमई के लिए वित्तीय स्रोत कौन-से हो सकते हैं?**

राष्ट्रीयकृत बैंक और भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, राष्ट्रीय लघु उद्योग नियम और राज्य वित्तीय निगमों जैसी वित्तीय संस्थाएं एमएसएमई के लिए वित्त के प्रमुख स्रोत हैं। ऋणों की स्वीकृति परियोजना की तकनीकी/आर्थिक संभाव्यता, ऋण वापसी, गिरवी प्रतिभूति की क्षमता के आधार पर दी जाती है। हाल के वर्षों में एमएसएमई इकाइयों को प्राथमिक/गौण प्रतिभूति बाज़ारों, वेंचर पूंजी और निजी हिस्सेदारी, बाह्य वाणिज्यिक कर्ज़ आदि जैसे स्रोतों से भी बड़ी तादाद में पैसा मिलता रहा है।

- **एमएसएमई की स्थापना हेतु किस प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता है और इसे कौन एजेंसियां दे सकती हैं?**

टूल रूम, टूल डिज़ाइन इंस्टीट्यूट, केंद्रीय पादुका (फुटवियर) प्रशिक्षण संस्थान आदि जैसे केंद्रीय और राज्य सरकारों के विभिन्न संस्थान विशिष्ट तकनीकी प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। उद्यमिता विकास कार्यक्रम और प्रबंधन विकास कार्यक्रम तथा कौशल विकास कार्यक्रमों का आयोजन एमएसएमई, राष्ट्रीय उद्यमिता और लघु व्यापार विकास (एनआईईएसबीयूडी), राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम (एनएसआईसी), आईआईई, राष्ट्रीय एमएसएमई संस्थान (एनआईएमएसएमई) पूर्व में एनआईएसआईईटी, उद्यमिता विकास संस्थायें आदि द्वारा किया जाता है। पूर्वोत्तर के उद्यमियों को नि:शुल्क प्रशिक्षण दिया जाता है और अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिला, पूर्व सैन्यकर्मियों और विकलांग व्यक्तियों को वरीयता दी जाती है। प्रदूषण नियंत्रण समस्याओं के निराकरण के लिए राज्यों के उद्योग निदेशालय, प्रदूषण नियंत्रण समितियों, एमएसएमई इकाइयों और जिला उद्योग केंद्रों द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है।

- **उद्यमी के उत्पाद के विपणन में कौन मदद कर सकता है?**

अनेक सरकारी और गैर-सरकारी एजेंसियां उत्पादों के विपणन और प्रचार में उद्यमी की सहायता करती है। एमएसएमई और एनएसआईसी व्यापार मेलों और प्रदर्शनियों के माध्यम से उत्पादों को लोकप्रिय बनाने का काम करते हैं। आईटीपीओ, डीजीएफटी, एफआईईओ और व्यापार/ उद्योग जगत की संस्थायें उत्पादों के निर्यात में मदद करती हैं। एमएसएमई इकाइयों को पूंजीगत सामग्री और कच्चे माल के आयात पर ड्यूटी ड्रा-बैक, अग्रिम लाइसेंस जैसे विशेष लाभ प्राप्त होते हैं। निर्यात आदेश के विरुद्ध माल लदान से पूर्व और बाद में ऋण भी दिया जाता है। खादी और ग्रामोद्योग आयोग (केवीआईसी) और एनएसआईसी, एमएसएमई इकाइयों के उत्पादों की सीधी बिक्री करते हैं। इसके अलावा, अनेक गैर-सरकारी संगठन भी हैं जो एमएसएमई उत्पादित वस्तुओं की देशभर में बिक्री को प्रोत्साहित करते हैं।

- **एमएसएमई के प्रोत्साहन हेतु सरकार की क्या नीति है?**

सरकार एमएसएमई इकाइयों के फलने-फूलने के लिए उपयुक्त नीति और आधारभूत ढांचा प्रदान करती है। एमएसएमईडी अधिनियम, 2006 उद्यम को मान्यता प्रदान करने वाला वैधानिक ढांचा प्रदान करता है, जिससे इस क्षेत्र के विकास और इसकी प्रतिस्पर्धात्मकता में वृद्धि हुई है। अधिनियम में इस क्षेत्र के विकास के लिए धन की व्यवस्था है, इन योजनाओं के लिए प्रगतिशील ऋण नीतियां और कार्यप्रणाली, विपणन सहयोग प्रदान करने के बारे में अधिसूचना जारी करना और विलंबित भुगतान की समस्याओं का निबटाना आदि की व्यवस्था की गई है। अधिनियम ने उद्यमियों का मेमोरेंडम भरकर देने के बाद अब नये उद्यमों के लिए दो स्तरों पर पंजीकरण की व्यवस्था समाप्त कर दी है। अधिनियम में राष्ट्रीय स्तर पर एक परामर्श तंत्र का प्रावधान भी किया गया है, जिसमें सभी हितसाधकों के संतुलित प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की गई है। अधिनियम में जो व्यापक दृष्टिकोण अपनाया गया है, उसके अंतर्गत केंद्र और राज्य सरकारों ने प्रशिक्षण, ऋण प्रवाह में सुधार, मार्गदर्शन और नये उद्यमियों को सहारा, गुणवत्ता उन्नयन हेतु प्रोत्साहन, औद्योगिक क्षेत्रों का विकास और प्रबंधन, विक्रय कर का निलंबन/तारीख बढ़ाना, विद्युत/पूंजी निवेश सब्सिडी, मार्जिन मनी सहायता, विद्युत/पानी कनेक्शनों के आवंटन में वरीयता तकनीकी परामर्श और सहयाता आदि जैसे क्षेत्रों में एमएसएमई क्षेत्र की मदद के लिए अनेक नीतियां और कार्यक्रम लागू किए हैं। सरकार ग्यारह चुनिंदा उद्योग समूहों में गुणवत्ता उत्पादों का उत्पादन करने वाली एमएसएमई इकाइयों को राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्रदान करती है। ❑

वनों को संरक्षित करता लाख उद्योग

● निमिष कपूर

भारत की जैव विविधता में लाख कीट एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अब तक ज्ञात लाख कीट प्रजातियों की 21 प्रतिशत विविधता भारत में पाई जाती है। लाख उद्योग, जैसाकि नाम से स्पष्ट है, लाख कीट और उसके संवर्धन पर आधारित है। लाख एक प्राकृतिक राल है जो एक जटिल पदार्थ है। लाख उद्योग में लाख कीट का संवर्धन लाख के साथ ही मोम व रंग प्राप्त करने के लिए किया जाता है। भारत में लाख उद्योग का एक लंबा इतिहास रहा है। प्राचीन ग्रंथों जैसे– *महाभारत* में भी लाख के भवन यानी लाक्षागृह का उल्लेख मिलता है, जिसका निर्माण कौरवों ने पांडवों के विनाश के लिए किया था। अबुल फ़जल ने सन् 1590 में अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *आईन-ए-अकबरी* में भारत के लाख उद्योग का जिक्र किया है। इसके पश्चात लाख कीट उत्पादन एवं लाख के उत्पादों की जानकारी सन् 1782 में वोर एवं ग्लोबर द्वारा इतिहास में दर्ज़ की गई है।

भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद संस्थान, रांची के अनुसार विश्वभर में भारत सबसे बड़ा लाख उत्पादक देश है। यहां विश्व के कुल लाख उत्पादन का लगभग 50-60 प्रतिशत उत्पादन होता है। वर्तमान में भारत में क़रीब 20,000 मीट्रिक टन लाख उत्पादन प्रतिवर्ष किया जा रहा है। देश में लाख का सर्वाधिक उत्पादन छोटानागपुर के पठारी क्षेत्रों में होता है। छोटानागपुर का पठारी क्षेत्र मुख्यत: झारखंड राज्य में आता है एवं इसकी सीमाएं बिहार, प. बंगाल व उड़ीसा आदि राज्यों को छूती हैं। देश का सर्वाधिक लाख उत्पादन करने वाला राज्य झारखंड देश के कुल लाख का क़रीब 57 प्रतिशत, छत्तीसगढ़ 23 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल 12 प्रतिशत जबकि उड़ीसा, गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश और असम अपेक्षाकृत छोटे उत्पादक राज्यों में आते हैं। इन राज्यों में रहने वाले क़रीब 30 लाख आदिवासी लाख उद्योग के माध्यम से जीवनयापन कर रहे हैं। झारखंड के आदिवासियों की संपूर्ण कृषि संबंधी आय का लगभग 35 प्रतिशत लाख उद्योग द्वारा संपूरित होता है। लाख उत्पादन में प्रतिवर्ष लगभग 10 लाख मानव दिवस लाख संवर्धन में संलग्न उद्योगों द्वारा सृजित किए जाते हैं। हर वर्ष लाख के निर्यात से भारत लगभग 120 से 130 करोड़ तक की विदेशी मुद्रा अर्जित करता है। लाख का राल (रेजिन) पूर्णत: प्राकृतिक, जैव अपघटनकारी होने के साथ ज़हरीला भी नहीं है अत: इसकी मांग भोजन, कपड़ा और औषधि उद्योग में अधिक है। इसके साथ ही इलेक्ट्रॉनिक्स व अन्य क्षेत्रों में लाख से जुड़ी रोज़गार की बड़ी संभावनाएं हैं। देश में लाख शोध कार्यों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा रांची में 'इंडियन लाख रिसर्च इंस्टीट्यूट' (आईएलआरआई) स्थापित किया गया है, जो लाख कीट के संरक्षण एवं लाख उद्योग के प्रोत्साहन के लिए कार्यरत है। आईएलआरआई का गठन अंग्रेज़ों द्वारा 20 सितंबर, 1924 को रांची में किया गया था। अप्रैल 1966 से भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने आईएलआरआई को अपने नियंत्रण में ले लिया। इस प्रकार यह संस्थान पिछले 85 वर्षों से लाख के क्षेत्र में अपनी सफल सेवाएं दे रहा है। 20 सितंबर, 2007 को इस संस्थान को नया नाम दिया गया। अब यह संस्थान इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ नेचुरल रेजिन एंड गम्म (भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद संस्थान) के नाम से जाना जाता है। वर्ष 1951 एवं 1956 के दौरान देश में लाख पैदावार को बढ़ावा देने के उद्देश्य से चार रीज़नल फील्ड रिसर्च स्टेशनों का गठन झालदा (पश्चिम बंगाल), दमोह, उमरिया (महाराष्ट्र) और मिर्जापुर (उत्तर प्रदेश) में किया गया।

लाख उद्यमियों को सलाह

लाख उद्योग आरंभ करने से पूर्व विशेषज्ञ वैज्ञानिकों से सलाह-मशविरा करना न भूलें। निम्नांकित बिंदु भी लाख उद्योग में सहायक हो सकते हैं:

- अपने क्षेत्र में बेहतर पोषक वृक्षों को चिह्नित करें एवं लाख कीट की प्रजाति के विषय में भी संबंधित प्रयोगशालाओं से सलाह लें ताकि आपको बेहतर लाख पैदावार मिल सके।
- लाख कीट को आर्थिक दृष्टि से संपन्न वृक्षों जैसे लीची, आम, आंवला, अमरूद, सेब आदि के साथ लेमेन्जिया पर पोषित करें, जिससे अतिरिक्त आय हो।
- सूखा संभावित क्षेत्रों जैसे– गुजरात और राजस्थान में विपरीत परिस्थितियों में लाख के पोषक वृक्षों की टहनियां पशुओं को खिला दी जाती हैं। ऐसी स्थिति लाख उद्योग के सामने संकट ला देती है।
- ब्रूडलाख एक सप्ताह से अधिक एकत्र नहीं किया जा सकता और इसकी उपलब्धता लाख संवर्धन की शुरुआत का महत्वपूर्ण पड़ाव है।
- शोध संस्थानों द्वारा उपलब्ध कराई जा रही तकनीकी जानकारी व संसाधनों की विस्तृत जानकारी आवश्यक है इसे हासिल कर लें।

भारत पूरे विश्व की लाख मांग के 55-60 प्रतिशत की आपूर्ति करता है। भारत में उत्पादित 80 प्रतिशत लाख उत्पादन का निर्यात दस बड़े देशों जैसे- इंडोनेशिया, पाकिस्तान, अमरीका, मिस्र, बांग्लादेश, जर्मनी, स्पेन, इटली, लंदन, यूएई और एआरपी में किया जाता है। यहां से बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है। भारतीय लाख कीट की प्रजाति केरिया लैक्का अन्य लाख उत्पादक देशों, जैसे- चीन, इंडोनेशिया व थाइलैंड से प्राप्त लाख की तुलना में उच्च गुणवत्ता वाला होता है। भारतीय लाख में उत्कृष्टता के मानक पाए जाते हैं। यहां के लाख का बहाव, ठंडे व गर्म अल्कोहल में अघुलनशीलता, रंग सूचकांक, ताप बहुलता, विरंजन सूचकांक, चमक व चिकनाई का गुण शामिल होता है जो चीन, इंडोनेशिया व थाइलैंड के लाख में नहीं है।

देश में लाख के प्रसंस्करण में पश्चिम बंगाल अग्रणी भूमिका निभाते हुए कुल लाख उत्पादन में 32.6 प्रतिशत का योगदान कर रहा है। दूसरे स्थान पर झारखंड 21.3 प्रतिशत तथा महाराष्ट्र 5.37 प्रतिशत के योगदान के साथ हैं। वर्ष 2006-07 में लाख एवं इसके मूल्यवर्धित उत्पादों का कुल निर्यात 7,525.46 टन रहा, जिसका मूल्य 147.72 करोड़ था। लाख उद्योग कम लागत में अधिक आय देने वाला, पर्यावरण के लिए अनुकूल एवं जल, वायु, मिट्टी, वनों व वृक्षों का संरक्षण करने वाला एक आदर्श उद्योग साबित हुआ है।

ग्लोबल वार्मिंग पर गठित अंतर सरकारी पैनल (आईपीसीसी) की रिपोर्ट के अनुसार आज मानवीय गतिविधियों से उत्पन्न कार्बन डाई-ऑक्साइड वैश्विक तापमान में वृद्धि का मुख्य कारण है। एक अन्य अनुमान के अनुसार एक व्यक्ति सालभर में 4 टन कार्बन डाई-ऑक्साइड की मात्रा वातावरण में छोड़ता है और एक वृक्ष वर्षभर में एक टन कार्बन डाई-ऑक्साइड को अवशोषित करता है। इस प्रकार लाख की खेती से जहां वर्ष में एक वृक्ष से अच्छी आमदनी हो रही है वहीं कई हज़ार टन कार्बन डाई-ऑक्साइड की मात्रा प्रतिवर्ष वातावरण से अवशोषित होती है। आज लाख उद्योग के बढ़ते आकर्षण से न केवल पेड़ों का कटना रुका है बल्कि वनों का स्वत: संरक्षण होने लगा है। पलाश का एक वृक्ष अपनी जड़ों में दो लीटर पानी संग्रहित करता है। इस प्रकार लाख की खेती से बड़ी मात्रा में जल का संचय हो रहा है। लाख उद्योग में संलग्न बायोवेद शोध संस्थान, इलाहाबाद द्वारा आयोजित लाख की खेती के प्रशिक्षण के पश्चात कोई भी किसान अथवा साधनहीन व्यक्ति प्रतिमाह 3,000 से 5,000 रुपये आसानी से कमा सकता है।

क्यों बेहतर है लाख उद्योग

बायोवेद शोध संस्थान के अनुसार आज एक आम किसान को सिंचाई आदि के साधन उपलब्ध होने के बाद, दो मौसमी फ़सलें उगाने के बाद एक एकड़ खेत से मात्र 800 रुपये की औसत मासिक आमदनी होती है जबकि तेज़ी से बढ़ने वाले लाख पोषक वृक्ष लेमेन्जिया के एक एकड़ में मेड़ के किनारे लगने वाले 1,000 वृक्षों से 4 से 5 हज़ार रुपये प्रतिएकड़ की मासिक औसत आमदनी होती है और यह लगातार सात वर्षों या इससे भी अधिक समय तक बगैर किसी लागत के होती रहती है। एक सर्वेक्षण के मुताबिक 50 प्रतिशत किसान आर्थिक रूप से कमज़ोर होने के कारण खेती छोड़ना चाहते हैं, लेकिन लाख की खेती एक उम्मीद की किरण बनकर सामने आई है जो खेती भी है और उद्योग भी। आज लाख उद्योग में छोटे, बड़े, बूढ़े, महिला, पुरुष, साधनहीन सबके लिए संभावनाओं के द्वारा खुले हैं। गांव के नवयुवक खेती में अधिक श्रम के कारण शहरों में नौकरी ढूंढ रहे हैं लेकिन लाख उद्योग में कम लागत, अल्प श्रम व अधिक आय एवं सालाना व्यस्तता यानी पूरे वर्ष रोज़गार की उपलब्धता से भी लाख उद्योग एक बेहतर उद्योग साबित हुआ है। लाख की खेती स्वयं में तो एक उद्योग है ही, साथ ही इससे कई कुटीर उद्योगों के रास्ते खुल जाते हैं। लाख की खेती से वन संरक्षण, जल संरक्षण और पर्यावरण संतुलन के साथ इमारती व ईंधन की लकड़ी भी उपलब्ध होती है। लाख उद्योग में लाख उत्पादन के साथ ही मोम, रंग एवं शहद के उत्पादन से दोहरे लाभ के अवसर रहते हैं। लाख के खेत में मधुमक्खी पालन से शहद का अधिक उत्पादन होता है साथ ही मधुमक्खियों से स्वपरागण बढ़ने से अन्य फ़सलों का उत्पादन भी बढ़ता जाता है।

लाख उद्योग की आधारीय प्रक्रिया : लाख संवर्धन

लाख कीट की कई प्रजातियां पाई जाती हैं जैसे मेटाकार्डिया, लेसिफर, टेकोडिएला, ऑस्ट्रोटाकारिडिया, टेकाडिना लेकिन इन सभी में जो प्रजाति लाख उद्योग में साधारणत: प्रयुक्त होती है, वह है केरिया लैक्का। केरिया लैक्का कीट विशेष वृक्षों की टहनियों पर पलते हैं और वृक्ष के लोयम रस या सैप को अपना भोजन बनाते हैं इस दौरान प्राकृतिक राल निकलता है। लाख कीट अपने शरीर को सुरक्षित रखने के लिए भी तरल पदार्थ (राल) निकालता है, जो सूखकर कवच बना लेता है और उसी कवच के भीतर कीट जीवित रहता है। इसी कवच को लाख या लाह कहते हैं। इसके साथ ही मादा कीट द्वारा मुख्य रूप से प्रजनन के पश्चात निकलने वाला स्राव भी राल बनाता है। इस प्रकार हज़ारों-लाखों नन्हें-नन्हें लाख के कीड़े अपने आश्रयदाता वृक्ष या पोषक वृक्ष की टहनी पर एक घनी कॉलोनी बनाकर रहते हैं और राल रंजक स्रावित करते हैं।

लाख संवर्धन में लाख कीट या निम्फ को पोषण देने वाले आश्रयदाता वृक्षों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। लाख की गुणवत्ता मुख्यत: इन्ही आश्रयदाता वृक्षों पर निर्भर करती है, जो लाख कीट को पोषण प्रदान करते हैं। कुसुम, बबूल, पलाश और बेर के साथ लेमेन्जिया वृक्षों से प्राप्त उत्कृष्ट कोटि का भारतीय लाख आज विश्व में अपनी एक अलग पहचान और

लाख उद्योग एक ऐसा मुनाफ़े का उद्योग है जो कम लागत के साथ आरंभ किया जा सकता है। इस उद्योग के जरिये जहां लाखों ग्रामीणों बेराज़गारों को रोज़गार के अवसर सुलभ होते हैं, वहीं पर्यावरण का भी संरक्षण होता है। लाख उद्योग जैसा कि नाम से स्पष्ट है लाख कीट और उसके संवर्धन पर आधारित है। लाख एक प्राकृतिक राल है, जो मादा कीट के प्रजनन के पश्चात हुए स्राव के फलस्वरूप बनता है। लाख में अनेक प्रकार के तत्व पाए जाते हैं जैसे- राल 68-90 प्रतिशत, मोम 6 प्रतिशत, रांगा 2-10 प्रतिशत, खनिज तत्व 3-7 प्रतिशत, जल 3 प्रतिशत एवं एल्बुमिन 5-10 प्रतिशत आदि। लाख जल में अघुलनशील है किंतु एल्कोहल में शीघ्रता से घुल जाता है। यह उष्मा का कुचालक है। लाख गर्म करने पर आसानी से पिघल जाता है तथा इसमें चिपकने का भी विशेष गुण पाया जाता है।

स्थान रखता है।

लाख संवर्धन प्रक्रिया विभिन्न चरणों वाली एक जटिल प्रक्रिया होने के साथ-साथ प्रकृति की प्रयोगशाला का एक रोचक अनुभव भी कराती है, ऐसा मानना है लाख संवर्धन से जुड़े विशेषज्ञों का। आश्रयदाता वृक्ष पर लाख कीट का स्थापित होना लाख संवर्धन का पहला चरण है। यह प्राकृतिक व कृत्रिम दो तरह से होता है। प्राकृतिक प्रक्रिया एक सामान्य प्रक्रिया है, जिसमें लाख के निम्फ झुंड बनाकर बार-बार एक ही वृक्ष पर एकत्रित होते हैं और वृक्ष की टहनियों की लोयम कोशिकाओं से लोयम रस या सैप को चूसते हैं। इस प्राकृतिक प्रक्रिया में अनेक कमियां हैं, जैसेकि यह प्रक्रिया एक अनियमित प्रक्रिया है, इसमें अनेक प्रकार के वातावरणीय कारकों जैसे तेज़ वर्षा, तीव्र प्रकाश और वायु आदि के कारण निम्फ पोषक वृक्षों पर ठीक प्रकार स्थापित नहीं हो पाते। लाख के कीट लगातार एक पौधे की टहनी से पोषक पदार्थों को ग्रहण करते हैं, जिसमें कुछ समय पश्चात पोषक वृक्षों का विकास रुक जाता है। इस प्रकार आश्रयदाता वृक्ष में पोषक पदार्थों के अभाव से न तो लाख के कीट का विकास हो पाता है और न ही लाख का उत्पादन हो पाता है। लाख के कीट पर अनेक परजीवी पाए जाते हैं, यदि समय पर लाख का उत्पादन नहीं किया जाता, तो लाख पर अनेक परभक्षी आक्रमण करके लाख के कीट के विकास को प्रभावित करते हैं।

लाख संवर्धन की कृत्रिम प्रक्रिया में पोषक वृक्षों की टहनियों को निम्फ एकत्रित होने से पूर्व करीब 20-30 सेंटीमीटर की लंबाई में काट लिया जाता है, फिर इन कटी हुई टहनियों को वृक्ष से इस प्रकार बांधा जाता है, जिससे कि हर टहनी वृक्ष की अन्य शाखाओं से संबद्ध हो जाए और एक प्रकार के सेतु का निर्माण करे। इस प्रकार निम्फ आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं और अलग-अलग शाखा या टहनी पर उचित फैलाव हो जाता है। कीटों के एकत्रित होने के पश्चात इन टहनियों को पोषक वृक्ष से अलग कर लिया जाता है। इस प्रक्रिया में इस बात की बहुत सावधानी रखी जाती है कि उनमें उचित मात्रा में निम्फ हो और वे पूर्ण रूप से स्वस्थ हों एवं टहनियां परजीवियों से पूरी तरह मुक्त हों। कुछ समयांतरालों पर पोषक वृक्ष को भी बदलते रहना उचित होता है ताकि निम्फ को उचित पोषक पदार्थ प्राप्त हो सकें।

आश्रयदाता पोषक वृक्षों से मुख्यत: दो प्रकार की लाख- परिपक्व लाख एवं अपरिपक्व लाख एकत्रित की जाती है। अपरिपक्व लाख को लाख कीटों के झुंड में एकत्रित होने से पूर्व ही इकट्ठा कर लिया जाता है। इस प्रकार की लाख एरी लाख कहलाती है। परिवक्व लाख को लाख कीटों के झुंड बनाकर एकत्रित होने के पश्चात इकट्ठा किया जाता है। इस प्रकार की लाख को परिपक्व लाख कहते हैं। बड़े पैमाने पर लाख के उच्चकोटि के उत्पादन के लिए परिपक्व लाख को ही प्रोत्साहित किया जाता है।

लाख की फ़सल जब पूरी तरह परिपक्व हो जाती है, तब लाख को पोषक वृक्ष से अलग कर लिया जाता है। लाख का कुछ भाग पोषक वृक्ष पर ही लगा रह जाता है। जिस टहनी में अंडों सहित लाख पाया जाता है, उस टहनी को ब्रूड लाख टहनी कहा जाता है और इससे प्राप्त लाख ब्रूड लाख या स्टिक लाख कहलाता है। इस लाख को टहनी से अलग कर विभिन्न प्रकार की अशुद्धियों को लाख से अलग करके लाख को शुद्ध बनाया जाता है। यह छोटी-छोटी गोलियों के रूप में होता है, अत: इस लाख को सीड लाख के नाम से जानते हैं। इसका उपयोग वार्निश आदि के उत्पादन में किया जाता है। इस प्रकार की लाख का उपयोग अमरीका में 18वीं शताब्दी की शिकारी बंदूकों को तैयार करने में या उन्हें अंतिम रूप देने में किया जाता था। सीड लाख में 3 से 5 प्रतिशत अशुद्धियां होती हैं। इस सीड लाख को जल में धोकर, सूर्य के प्रकाश में सुखाकर, एक झोले में रखकर, गर्म करके पिघला लिया जाता है। तत्पश्चात लाख को ठंडा करके ठोस रूप में एकत्र कर लिया जाता है। इस प्रकार की लाख को बटन लाख कहते हैं। जब इस शुद्ध लाख को एक परत पर बिछाया जाता है तो यह शेल लाख कहलाता है। लाख की गुणवत्ता मुख्य रूप से उसके पोषक वृक्ष पर निर्भर करती हैं। कुसुमी लाख सबसे उत्तम प्रकार का लाख माना जाता है।

लघु उद्योग के रूप में लाख उद्योग

लघु उद्योग के रूप में लाख उद्योग में अपार संभावनाएं हैं। लाख का उपयोग अनेक प्रकार के खिलौने एवं कृत्रिम चमड़े आदि के निर्माण में किया जाता है। सुनार लाख का उपयोग विभिन्न प्रकार के स्वर्ण आभूषणों जैसे कंगन एवं हार आदि को भरने के लिए भी करते हैं। आज ही नहीं बल्कि सदियों से महिलाओं को लाख की चूड़ियां पसंद आती रही हैं। लाख का प्रयोग पॉलिश, वार्निश एवं रंग आदि बनाने के लिए भी होता है, जिसका प्रयोग फर्नीचर और दरवाजों की चमक को बढ़ाने में किया जाता है। लाख का उपयोग फोटोग्राफिक पदार्थों के निर्माण एवं विद्युत के ऐसे उपकरणों के निर्माण में होता है, जिसमें विद्युत प्रवाह से करंट लगने का ख़तरा न हो। आज लाख उद्योग या लाख की खेती परोक्ष रूप से कई शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों के लघु उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध करा रही है। लाख सौंदर्य उद्योग, इलेक्ट्रिकल वस्तुओं से जुड़े उद्योग, चमड़ा, भोजन, वार्निश, रंगीन इंक, चिपकाने वाले सामान आदि के उद्योगों से सीधा जुड़ा हुआ है। आज लाख पर कलाकारी से सौंदर्य वस्तुओं के अलावा सजावटी व दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुएं भी बनाई जा रही हैं और एक बड़ा बाज़ार लाख उद्यमियों के कुटीर उद्योगों की प्रतीक्षा कर रहा है। हीरे को काटने से लेकर आभूषण, पॉलिश किए गए पत्थर, बायोफर्टिलाइजर व बायोयेस्टीसाइड्स, सीलिंग वैक्स और पॉलिश आदि के निर्माण में उपयोग किया जा रहा है यानी लाख लाखों की बात कर रहा है।

लाख उद्योग में बड़े पैमाने पर लाख संवर्धन उद्योग की संभावनाएं हैं। लाख की खेती से कटाई के बाद उसकी साफ़-सफ़ाई का काम कई चरणों में होता है और संवर्धन के उद्योगों में हज़ारों की तादाद में ग्रामीण महिलाएं व पुरुष अपनी आजीविका चला रहे हैं।

लाख के कीट अनेक ऐसे वृक्षों पर पलते हैं जो आर्थिक, औषधीय व सामाजिक महत्व के होते हैं। लाख उद्योग को बढ़ाने और प्रोत्साहित करने से हम हरियाली के संरक्षण में बहुत कुछ योगदान कर सकते हैं। आज भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद संस्थान, रांची द्वारा लाख संवर्धन पर प्रौद्योगिकी स्थानातंरण कार्यक्रमों एवं अन्य प्रशिक्षण कार्यक्रमों में शामिल होकर एवं संस्थान से संपर्क करके लाख उद्योग को स्थापित करने की दिशा में एक ठोस कदम उठाया जा सकता है। ❑

(लेखक विज्ञान प्रसार,
नोएडा में वरिष्ठ वैज्ञानिक (विज्ञान संचार) हैं।
ई-मेल : nimish2k@rediffmail.com)

Ranked best school in imparting training in IAS Exam.*

*(Business Sphere, Feb. 2009)

KSG

Passionate about your success...

G.S.

with

DR. Khan

(पूर्व में, भूगोल विभाग दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स, दिल्ली विश्वविद्यालय में लैक्चरर)

पी.ओ.डी. तकनीक* द्वारा नागरिक अध्ययन की तैयारी

सामान्य अध्ययन में 18 वर्षों के अध्यापन अनुभव से डॉ. खान द्वारा विकसित एक अनुपम विधि

सामान्य अध्ययन

आपके व्यक्तिगत लक्ष्य में सहभागी

● इतिहास ● मनोविज्ञान ● लोक प्रशासन

बैच प्रारंभ

नवम्बर 2009

नामांकन प्रारंभ

प्रारंभिक एवं मुख्य परीक्षा हेतु उपलब्ध पत्राचार कोर्स

- सामान्य अध्ययन (English/हिन्दी)
- भूगोल (English/हिन्दी)
- इतिहास (English/हिन्दी)
- लोक प्रशासन (English/हिन्दी)
- समाजशास्त्र (English/हिन्दी)
- मनोविज्ञान (English/हिन्दी)

प्रारंभिक परीक्षा सीरीज
29 नवम्बर 2009 से प्रारंभ
नामांकन प्रारंभ

छात्र-छात्राओं के लिए पृथक होस्टल की सुविधा से सामोग

विवरण पुस्तिका हेतु रु.50/- का डी.डी./एमओ भेजें

Separate Batches for English & Hindi Medium

KSG छात्र स्टाई हुए सार्थ कोचिंग प्रोग्राम में विश्वास रखता है; हमें यह अपेक्षा है कि छात्र ने प्रत्येक ही प्रोग्राम ने जो कोचिंग प्रोग्राम के लिए तैयार हो। ध्यान रहे: हमें सफलता के किसी शॉर्ट-कट की जानकारी नहीं है।

KHAN STUDY GROUP

2521, Hudson Line, Vijay Nagar Chowk, Near G.T.B. Nagar Metro Station, New Delhi - 110 009

Ph: 011-45552607, 45552608, 27130786, 27131786, 09717380832, send us mail: drkhan@ksgindia.com

You can also download Registration Form from our Website: www.ksgindia.com

YH-11/09/1

लघु एवं मझोले उद्योग

खादी एवं ग्रामोद्योग उत्पादों की निर्यात संभावनाएं

● बृजेन्द्र कुमार निगम
करुणा शंकर कनौजिया

आज की विश्व बाज़ार व्यवस्था में निर्यात एक बड़ी संभावना के रूप में उभरा है। एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र की सीमाओं से परे बाज़ार की खोज एक ऐसी लाभप्रद प्रक्रिया के रूप में देखा जा रहा है, जिसमें विपणन आधारित लाभ, रोज़गार वृद्धि, बाज़ार विस्तार, तकनीकी उन्नति आदि की परिकल्पनाओं को सरलता से साकार किया जा सकता है। इन्हीं परिकल्पनाओं के आधार पर, विश्व व्यापार संगठन (डब्लूटीओ) की मुक्त व्यापार व्यवस्था का लाभ उठाकर व्यवहार में यह आसानी से देखा जा सकता है कि दूसरे राष्ट्रों में निर्मित रोज़मर्रा की वस्तुएं तथा कुछ विशेष मौकों (जैसे भारतीय त्योहारों/पर्वों) से संबंधित कुछ विशिष्ट उत्पाद हमारे घरेलू उद्योगों के बाज़ारों पर आसानी से कब्ज़ा जमा रहे हैं और हम सिवाय तमाशबीन बनने के कुछ कर पाने में असमर्थ हैं। खास कर खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों के संबंध में अपनाई जा रही निर्यात नीति बिल्कुल भी उत्साहवर्धक व आशानुरूप नहीं है। अर्थात हम अपने खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों को विश्वस्तरीय बनाने में सिवाय पुरानी व परंपरागत नीति (वह चाहे इन उपायों के उत्पादन तकनीक से संबंधित हो अथवा विपणन नीति से) के अतिरिक्त, नयी विश्व बाज़ार व्यवस्था के अनुरूप आधुनिक उपायों का प्रयोग नहीं कर पा रहे हैं। जबकि अन्य विकसित देशों में वह चाहे बड़ी कंपनियां हो अथवा वहां के लघु व कुटीर उद्योग, समय व मांग के अनुरूप अपने उत्पादों में आवश्यक परिवर्तन लाते रहते हैं। इसी कारण इनके उत्पादों की मांग इनके अपने बाज़ारों में तो बनी ही रहती है, साथ ही विदेशी बाज़ारों में खासकर अल्पविकसित व विकासशील देशों के बाज़ारों में भी इनकी मांग लगातार बनी हुई है। कुल मिलाकर इनके निर्यात को प्रोत्साहन मिलता है।

तालिका

भारत का निर्यात व खादी ग्रामोद्योग का निर्यात एक तुलनात्मक विवरण

(करोड़ रुपये में)

वर्ष	भारत का निर्यात	खा०ग्रा० वस्तुओं का निर्यात	वृद्धि प्रतिशत में	कुल निर्यात में खादी ग्रामोद्योग का भाग प्रतिशत में
1995-96	106353	11.92	-	0.011
1996-97	118817	13.83	16.02	0.010
1997-98	130100	12.26	-11.35	0.009
1998-99	139752	24.69	101.39	0.018
1999-2000	159561	29.65	20.09	0.019
2000-01	203571	18.40	-37.94	0.009
2001-02	209018	21.62	17.5	0.010
2002-03	255137	45.94	112.49	0.018
2003-04	293367	52.00	13.19	0.018
2004-05	361879	39.08	-24.85	0.011

स्रोत- आर्थिक सवेक्षण, 2005-06, वार्षिक रिपोर्ट, केवीआईसी, 1995-96, 2000-2001, 2004-2005.

भारत में खादी व ग्रामीण उद्योगों के उत्पादों के निर्यात की बात करें तो खादी और ग्रामोद्योग आयोग, मुंबई की वार्षिक रिपोर्ट के आधार पर पिछले कुछ वर्षों के दौरान निर्यात संबंधी आंकड़ों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1995-96 में सिर्फ़ 11.92 करोड़ रुपये के खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों का निर्यात किया गया, वहीं वर्ष 2004-05 में लगभग तीन गुना से अधिक वृद्धि के साथ 39.08 करोड़ रुपये के खादी व ग्रामोद्योग वस्तुओं का निर्यात किया गया, जबकि वर्ष 2003-04 में 52 करोड़ रुपये के उत्पादों का निर्यात हुआ (देखें तालिका)। वर्ष 2004-05 में वर्ष 2003-04 की अपेक्षा 24.85 प्रतिशत कम निर्यात हुआ। तालिका से यह भी स्पष्ट है कि पिछले 10-11 वर्षों के

दौरान एक-दो वर्षों को छोड़कर शेष सभी वर्षों में पिछले वर्ष की अपेक्षा अधिक निर्यात हुआ है। दो वर्षों के दौरान निर्यात में वृद्धिदर तो सौ प्रतिशत से भी अधिक रही है। लेकिन पिछले 12-13 वर्षों में न्यूनतम वर्ग पद्धति के आधार पर 'सर्वोत्तम उपयुक्त रेखा यह बताती है कि खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों के निर्यात की औसत वृद्धि मात्र 2.99 करोड़ रुपये प्रतिवर्ष रही है जो कम है। यदि इन्हीं आंकड़ों व पद्धति के आधार पर अगले 5 वर्षों तक के निर्यात का पूर्वानुमान लगाया जाए तो खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों के निर्यात में प्रतिवर्ष 2.99 करोड़ रुपये की वृद्धि के साथ वर्ष 2005-06, 2006-07, 2007-08, 2008-09 व वर्ष 2009-10 में निर्यात क्रमशः 44.61 करोड़ रुपये, 47.60 करोड़ रुपये, 50.59 करोड़ रुपये, 53.58 करोड़ रुपये व 56.57 करोड़ रुपये का होगा (देखें रेखाचित्र)।

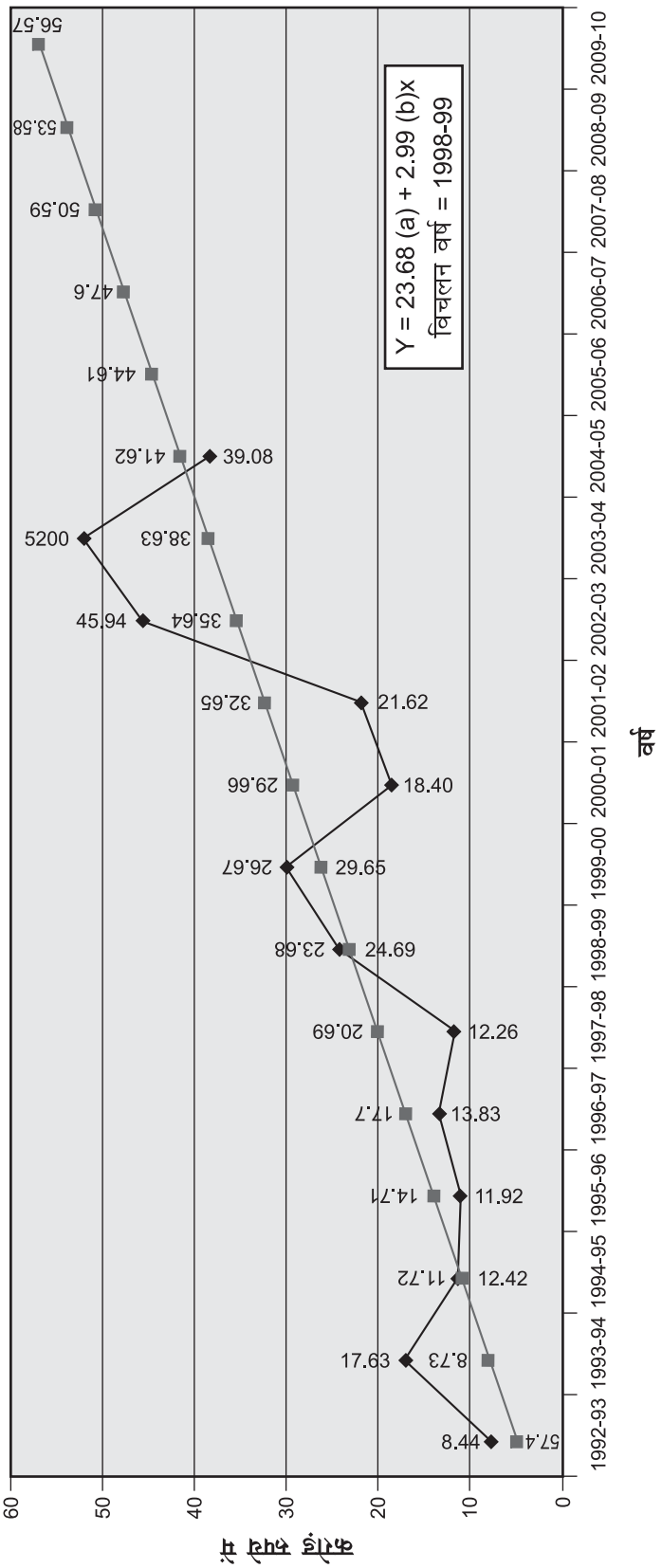

रेखाचित्र-1
खादी ग्रामोद्योग का निर्यात

इसी प्रकार देश के कुल निर्यात में खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों के निर्यात का प्रतिशत में हिस्सा देखें तो, वर्ष 1995-96 में यह हिस्सा 0.011 प्रतिशत था जोकि घटते-बढ़ते हुए वर्ष 2004-05 में भी उसी स्तर पर अर्थात 0.011 प्रतिशत पर बना हुआ है (देखें तालिका)। पिछले दस वर्षों से देश के कुल निर्यात में खादी व ग्रामोद्योग वस्तुओं का औसत निर्यात हिस्सा देखें तो यह भी 0.013 प्रतिशत ही रहा है। देश के कुल निर्यात में खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों का इतना कम हिस्सा होना इस बात की पुष्टि करता है कि इन उत्पादों के निर्यात हेतु सरकार व इनसे संबंधित संगठनों द्वारा पर्याप्त प्रयास नहीं किया जा रहा है।

खादी व ग्रामोद्योग के कुल उत्पादन व इसके निर्यात के मध्य तुलनात्मक विश्लेषण करने पर यह तथ्य सामने आता है कि वर्ष 1995-96 में खादी ग्रामोद्योग के कुल उत्पादन का मात्र 0.30 प्रतिशत हिस्सा ही निर्यात हुआ, जबकि वर्ष 2004-05 में थोड़ी-सी वृद्धि के साथ कुल उत्पादन का मात्र 0.36 प्रतिशत भाग निर्यात किया गया है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि खादी ग्रामोद्योग का जितना उत्पादन होता है, उसका आधा प्रतिशत अर्थात 0.5 प्रतिशत हिस्सा भी निर्यात नहीं हो पा रहा है। खादी और ग्रामोद्योग आयोग की वार्षिक रिपोर्ट 2004-05 के अनुसार इस वर्ष खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों का जो निर्यात किया गया, उसमें केवल खादी का निर्यात किए गए कुल निर्यात अर्थात 39.08 करोड़ रुपये का मात्र 1.5 प्रतिशत अर्थात 0.59 करोड़ रुपये है जबकि अन्य ग्रामोद्योग वस्तुओं के निर्यात का हिस्सा 38.48 करोड़ रुपये अर्थात 98.5 प्रतिशत है। इससे यह साफ़ है कि खादी का निर्यात अन्य ग्रामोद्योग वस्तुओं के निर्यात की अपेक्षा बहुत कम है। जबकि दक्षिण अफ्रीका के कई देशों व ब्रिटेन जैसे देशों में उच्चस्तरीय विपणन व्यवस्था द्वारा खादी के निर्यात को आसानी से

बढ़ाया जा सकता है क्योंकि इन देशों में गांधीजी के समय चरखा, खादी आदि को काफी समर्थन प्राप्त हुआ व प्रचार भी हुआ। इसलिए इन देशों में खादी व ग्रामोद्योगी वस्तुओं के निर्यात पर विशेष ध्यान दिया जा सकता है। यहां पर एक महत्वपूर्ण बात का उल्लेख करना आवश्यक है। वह यह कि गांधीजी को चरखा के संबंध में जानकारी सर्वप्रथम इंग्लैंड में ही भारत से आए एक प्रतिनिधि मंडल के साथ हुई सभा के दौरान प्राप्त हुई थी और तभी उन्हें चरखा के माध्यम से ग्रामोत्थान की बात ध्यान में आई थी।

निर्यात में आवश्यक वृद्धि न होने का प्रमुख कारण खादी व ग्रामोद्योगी वस्तुओं की गुणवत्ता हो सकती है, क्योंकि हमारे उत्पाद विदेशी उत्पादों की गुणवत्ता से प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाते हैं। अगर यह कहा जाए कि निर्यात कम होने का एक कारण इन उत्पादों का मूल्य अधिक होना है तो यह सही नहीं होगा, क्योंकि विदेशी वस्तुओं की तुलना में इन उत्पादों के मूल्य विदेशों में ही काफी कम होते हैं। साथ ही भारत में भी विदेशी उत्पादों की तुलना में खादी उत्पादों के दाम अधिक नहीं होते हैं। हां, यह अवश्य है कि यह उत्पाद ग्रामीणों व निम्न आय वालों की पहुंच से बाहर होते जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त निर्यात हेतु हमारे उत्पादों में उच्चस्तरीय तकनीक व आधुनिकीकरण की कमी होने के साथ इन उत्पादों के निर्यात के लिए प्रभावी कदमों का न उठाया जाना है। अभी तक सरकार/खादी और ग्रामोद्योग आयोग द्वारा खादी व ग्रामोद्योग वस्तुओं के लिए एक अलग निर्यात निदेशालय न बनाया जाना, विदेशों में इन उत्पादों को प्रभावी व अच्छी तरह से प्रस्तुत न कर पाना और उत्पादों का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विपणन करने के लिए किसी राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय एजेंसी/कंपनी से समझौता न करना आदि है। कुल मिलाकर इन वस्तुओं के निर्यात पर पर्याप्त ध्यान न दिए जाने के कारण ही इनका निर्यात निम्नस्तर पर बना हुआ है।

खादी व ग्रामोद्योगी उत्पादों की देश-विदेश में पहुंच सुनिश्चित करने व बाज़ार में इनकी मांग में बढ़ोतरी हेतु इनसे जुड़े उद्यमियों/संस्थाओं द्वारा योजनाबद्ध कदम उठाए जाने की आवश्यकता है। यदि खादी और ग्रामोद्योगी उत्पादों के निर्यात में प्रभावपूर्ण वृद्धि होती है तो इससे निम्नलिखित लाभ होने की संभावना है :

- विश्व बाज़ार में खादी ग्रामोद्योगी उत्पादों व इससे जुड़े लघु उद्यमियों की सहभागिता सुनिश्चित होगी।
- अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्धात्मक चुनौतियों को स्वीकार कर संभावनाओं का लाभ प्राप्त होगा।
- निर्यात व इसमें लगातार बढ़ोतरी से अधिक विदेशी मुद्रा प्राप्त होगी।
- विभिन्न प्रकार के उत्पादों एवं उनकी जानकारी प्राप्त होने से लघु उद्यमियों को अपने उत्पादों की गुणवत्ता आदि में सुधार करने व इन्हें विश्वस्तरीय बनाने हेतु प्रोत्साहन मिलेगा।
- निर्यात अधिक होने से मांग व उत्पादन में वृद्धि होने के साथ-साथ रोज़गार में भी वृद्धि होगी, जो हमारे देश की प्रमुख आवश्यकता है।

ये उपर्युक्त लाभ हमें तभी प्राप्त हो सकेंगे, जब हम खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों से संबंधित अपनी वर्तमान विदेश नीति पर गंभीरतापूर्वक विचार कर बदलाव लाएंगे। अर्थात बदलते माहौल में यह अनिवार्य है कि गुणवत्ता व लागत प्रतिस्पर्धा दोनों पर ध्यान केंद्रित किया जाए। आज के युग में बाज़ार का सर्वेक्षण करना आवश्यक है। यह देश के आंतरिक भागों व विदेशों में भी कराया जा सकता है। इससे खादी व ग्रामोद्योग वस्तुओं की उत्पादन तकनीक, गुणवत्ता, पैकेज़िंग आदि में मांग के अनुसार परिवर्तन करने में सहायता प्राप्त होगी। क्योंकि देशी-विदेशी बाज़ारों में किस प्रकार के उत्पादों की मांग उपभोक्ताओं द्वारा की जा रही है, उनकी रुचियों व फ़ैशन आदि में कैसे बदलाव आ रहे हैं, भविष्य में किस तरह का परिवर्तन आने वाला है तथा किस तरह के उत्पादों की मांग अधिक होगी आदि की पर्याप्त जानकारी न होने के कारण हमारे ग्रामीण उत्पादों में नवीनता नहीं ला पाते हैं और न ही इस संबंध में पूर्वानुमान लगा पाते हैं।

इन वस्तुओं का निर्यात बढ़ाने के संदर्भ में यह भी प्रयास किया जा सकता है कि विश्व के लगभग प्रत्येक देश में स्थित भारतीय दूतावासों को खादी व ग्रामोद्योग कार्यक्रमों से जोड़ा जाए। इससे 'गांधीवादी अर्थशास्त्र' को विश्वभर में पहचान मिलेगी। साथ ही एक महत्वपूर्ण लाभ यह होगा कि विश्वभर में खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों की पहुंच सुनिश्चित हो सकेगी। कुल मिलाकर इन उत्पादों के निर्यात में वृद्धि होगी और इसका लाभ हमारे ग्रामीण उद्यमियों को मिलेगा। यहां पर विदेशों में स्थित भारतीय दूतावासों को इन कार्यक्रमों से जोड़ने का तात्पर्य सिर्फ़ यह नहीं कि वहां पर बिक्री आउटलेट्स खोले जाएं, बल्कि यह भी है कि भारतीय दूतावासों को खादी व ग्रामोद्योगी उत्पादों जैसे- मिट्टी के बर्तन, खादी के बने पर्दे, चादरें, कागज़ से बने उत्पाद व अन्य सामान आदि के प्रयोग पर ध्यान दिलाना चाहिए। इससे भारतीय दूतावासों में आगंतुकों को खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों की विशिष्टता तथा प्राचीन भारतीय संस्कृति की पहचान होगी। ऐसा हो सकता है कि जिस देश में भारतीय दूतावासों द्वारा इस संबंध में कार्य किया जाए तो उस देश के नियम-कानून इसमें बाधक बनें अथवा वहां इसका विरोध हो, परंतु ऐसा भी हो सकता है कि हर देश में इस तरह की बाधा उत्पन्न न हो। खासकर इस तरह की संभावना उन देशों में बहुत कम होगी जहां पूर्व में गांधीजी का गहरा संबंध रहा है और जहां आज भी गांधीवादी विचारधारा के अनुयायी मौजूद हैं। डब्ल्यूटीओं के सदस्य देशों में इसके प्रवर्धन की संभावना और मजबूत होगी।

भारतीय दूतावासों को खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों के प्रयोग हेतु प्रोत्साहित करने के संबंध में यह बात अवश्य ध्यान में रखनी चाहिए कि इनके द्वारा प्रयोग हेतु भेजे जाने वाले खादी व ग्रामोद्योग उत्पादों में सिर्फ़ कुछ बड़ी संस्थाओं के ही उत्पाद शामिल न हों, बल्कि छोटी एवं ग्रामीण खादी व ग्रामोद्योग संस्थाओं के उत्पादों को प्राथमिकता दी जाए।

इस संबंध में खादी और ग्रामोद्योग आयोग को चाहिए कि वह अपने स्तर पर भी विदेशों में स्थित भारतीय दूतावासों से संपर्क स्थापित करे तथा इसके लिए प्रोत्साहित करे।

यदि यह कहा जाए कि हम खादी व ग्रामोद्योग वस्तुओं के निर्यात पर इतना अधिक ध्यान क्यों केंद्रित करें जबकि अपना उपभोक्ता बाज़ार ही काफी बड़ा है और इस बड़े उपभोक्ता बाज़ार के कारण ही विश्व की तमाम विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियां व देश भारत की तरफ आकर्षित हो रहे हैं तो इस संबंध में यह बात अवश्य ध्यान रखनी चाहिए कि आज पूरे विश्व में मुक्त व्यापार लागू हो जाने से विदेशी वस्तुएं हमारे उपभोक्ता बाज़ारों में अपनी उच्च तकनीकी व गुणवत्ता के साथ कम क़ीमत पर उपस्थिति दर्ज़ करा रही हैं तो हमें भी आवश्यक सुधार करके अपने ग्रामीण कौशल से बनी खादी व ग्रामोद्योग वस्तुओं की पहुंच विदेशी उपभोक्ता बाज़ारों तक सुनिश्चित करनी चाहिए। ताकि स्वतंत्र व्यापार नीति का लाभ अपने ग्रामीण व छोटे उद्यमियों को भी प्राप्त हो सके। ❑

(लेखकद्वय में पहले लखनऊ विश्वविद्यालय के व्यवहारिक अर्थशास्त्र विभाग के सेवानिवृत्त प्रोफेसर और दूसरे इसी विभाग में शोधछात्र हैं)

श्रमिकों के लिए एक नयी आशा

● एम.एल. धर

इक्कीसवीं सदी के आरंभ से भारत विश्व की सर्वाधिक गतिमान अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। लेकिन अभी भी देश में बहुत बड़ी जनसंख्या ग़रीबी रेखा के नीचे निवास करती है। वर्ष 2004-05 के लिए राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के 61वें दौर के ताज़े आंकड़ों के अनुसार लगभग 22 फीसदी लोग ग़रीबी रेखा से नीचे अपना जीवन व्यतीत करते हैं। ये विशेषत: ऐसे श्रमिक हैं जो असंगठित क्षेत्र से संबद्ध हैं और किसी प्रकार की उचित सामाजिक सुरक्षा से वंचित हैं।

सामाजिक सुरक्षा किसी भी विकास का केंद्रीय मुद्दा होती है। इसके बग़ैर विकास की बात करना बेमानी है। हमें ऐसी योजनाओं और कार्यक्रमों में पूंजी निवेश करना होगा जिनके द्वारा लोगों की क्षमता बढ़ाने, उनके स्वास्थ्य स्तर में सुधार करने तथा उनमें आत्मविश्वास पैदा करने के लिए अवसर मुहैया कराने में सहायक हो।

गांधीजी ने कहा था, "मुझे ऐसे भारत के लिए कार्य करना चाहिए जिसमें निर्धनतम व्यक्ति यह महसूस कर सके कि यह उसका देश है, जिसके निर्माण में उनकी आवाज़ प्रभावशाली है, ऐसे भारत में जिसमें न उच्च वर्ग हो और न निम्न वर्ग के लोग हों।" स्वतंत्रता प्राप्ति के छह दशकों के बाद भी गांधीजी के सपनों का भारत बनना अभी बाकी है। इसने ग़रीबों के लिए बुनियादी सामाजिक सुरक्षा उपाय सुझाने के वास्ते देश के पांच दशक चर्चा करने में ही गुज़ार दिए। असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों को सामाजिक सुरक्षा मुहैया कराने के लिए सरकार ने संसद के पिछले सत्र के आखिरी दिन एक बिल पेश किया था। अभी इस बिल पर क़ानून निर्माताओं की बहस होना बाक़ी है। सरकार ने तीन सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की घोषणा की है। इन तीन योजनाओं में से 'राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना' और 'आम आदमी बीमा योजना' नाम की दो योजनाएं गांधी जयंती के अवसर पर आरंभ कर दी गईं ताकि संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सरकार द्वारा घोषित राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में किए गए दो महत्वपूर्ण वायदों को पूरा किया जा सके।

वर्ष 2006-07 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार स्वास्थ्य देखभाल न केवल जनसंख्या समूहों से लाभ लेने, कुशल उत्पादक कार्यबल उपलब्ध होने तथा जनकल्याण के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि जनसंख्या स्थिरीकरण के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए भी महत्वपूर्ण है। सर्वेक्षण इस बात की ओर भी ध्यान दिलाता है कि पड़ोसी मुल्कों के मुक़ाबले भारत की स्थिति स्वास्थ्य पैमानों पर अभी भी संतोषजनक नहीं है। इस परिदृश्य में सबसे ज़्यादा नुक़सान जिसे होता है वह है ग़रीब श्रमिक क्योंकि उसके पास पर्याप्त और उचित इलाज कराने की क्षमता नहीं होती। इसके परिणामस्वरूप आमदनी में अच्छी-ख़ासी कमी और स्वास्थ्य स्तर में लगातार गिरावट होती है। अत: असंगठित क्षेत्रों के श्रमिकों को स्वास्थ्य बीमा योजना में शामिल किया जाए। ग़रीब श्रमिकों को अच्छी स्वास्थ्य सुरक्षा उपलब्ध कराने के लिए यह योजना एक लंबा रास्ता तय करेगी। इस योजना के कारण इनमें कार्यक्षमता और उत्पादन क्षमता में वृद्धि होगी तथा ग़रीबी कम करने में सहायता मिलेगी। इसमें बड़ी संख्या में श्रमिकों को शामिल करना होगा। इसके लिए स्वास्थ्य बीमा योजना को चरणबद्ध तरीक़े से लागू किया जाएगा। पांच वर्षों के दौरान सबसे पहले ग़रीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले श्रमिकों को शामिल किया जा रहा है। योजनाओं के शुभारंभ पर केंद्रीय वित्तमंत्री पी. चिदंबरम ने कहा कि वर्ष 2008-09 के दौरान इसके कार्यान्वयन के लिए सरकार ने 750 करोड़ रुपये से अधिक राशि आवंटित की है। ज़िलों में अस्पतालों और स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता के साथ-साथ मध्यवर्ती क्षमताओं के आधार पर राज्य सरकारें प्रत्येक वर्ष देशभर में से 120 ज़िलों का चयन करेगी ताकि इन जिलों में इस योजना के कार्यान्वयन के विभिन्न पहलुओं में लाभार्थियों का प्रभावी बुनियादी सहयोग सुनिश्चित किया जा सके। इस योजना की ध्यान देने वाली बात यह है कि इसमें सीधे तौर पर पांच सदस्यों वाले परिवार के लाभार्थी सदस्य अधिसूचित अस्पताओं में से किसी भी अस्पताल में जाकर प्रतिवर्ष 30 हज़ार तक का मुफ़्त इलाज करा सकता है। इसके साथ-साथ ग़रीब लाभार्थी को योजना के प्रीमियम के रूप में कोई पैसा भी नहीं देना पड़ेगा। स्वास्थ्य बीमा उपलब्ध कराने वाली कंपनी को लगभग 750 रुपये का प्रीमियम दिया जाएगा। इस भुगतान का 75 फीसदी हिस्सा केंद्र सरकार द्वारा और 25 फीसदी हिस्सा राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाएगा। प्रत्येक लाभार्थी को 60 रुपये का एक स्मार्ट कार्ड जारी किया जाएगा। इसकी लागत केंद्र सरकार वहन करेगी। यदि लाभार्थी एक राज्य से दूसरे राज्य में चला जाता है तो भी इस कार्ड पर सेवाएं मिलती रहेंगी। हालांकि लाभार्थी को इस कार्ड के पंजीकरण एवं नवीकरण के लिए प्रतिवर्ष 30 रुपये का भुगतान करना होगा। इस क़ीमत की अदायगी का उद्देश्य केवल लाभार्थी में इस योजना में भागीदारी की चेतना उत्पन्न करना है ताकि वह इस योजना के तहत मिलने वाली सेवाओं को अपने अधिकार के रूप में मांग सके। इस योजना की ख़ास बात यह भी है कि इसमें पहले से ही मौजूद सभी बीमारियों का इलाज करना शामिल है।

(शेषांश पृष्ठ 56 पर)

जहां चाह वहां राह

बायोवेद शोध संस्थान द्वारा लाख क्रांति

● रीति थापर कपूर

भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद शोध संस्थान, रांची द्वारा सन् 1951 में लाख की खेती के विस्तार एवं प्रचार-प्रसार हेतु देश में चार क्षेत्रीय शोध केंद्र बनाए गए जिसमें महाराष्ट्र में दो, दमोह व उमरिया में तथा पश्चिम बंगाल और उत्तर प्रदेश में एक-एक केंद्र बनाए गए। उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर में लाख शोध केंद्र स्थापित तो हो गया पर वह लाख उत्पादन में पिछड़ता चला गया।

कई वर्षों तक उत्तर प्रदेश का नाम लाख उत्पादक क्षेत्रों से गायब रहा, लेकिन लाख उद्योग की खूबियों और उसके पर्यावरण हितैषी होने की बात उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद शहर में रहने वाले कृषि वैज्ञानिक डॉ. बी.के. द्विवेदी को पता थी। डॉ. द्विवेदी के प्रयासों से उत्तर प्रदेश के कई जिलों में लाख का पुनः उत्पादन प्रारंभ हुआ और उत्तर प्रदेश का नाम भारत के लाख उत्पादक प्रदेशों में जुड़ गया। इसके साथ ही गायब हो चुके लाख उद्योग को पुनः फलने-फूलने का अवसर मिला। डॉ. द्विवेदी की संस्था बायोवेद कृषि एवं प्रौद्योगिकी शोध संस्थान, इलाहाबाद में स्थित है और डॉ. द्विवेदी पिछले 6 वर्षों से लाख उद्योग को सफलतापूर्वक संचालित कर रहे हैं।

भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा प्राप्त वित्तीय सहायता से उत्तर प्रदेश में सन् 2008 में प्रथम लाख प्रसंस्करण इकाई की स्थापना भी इलाहाबाद के श्रृंगवेरपुर क्षेत्र के बायोवेद कृषि प्रौद्योगिकी ग्राम में की गई है। बायोवेद शोध संस्थान के लाख संवर्धन के प्रयासों से वृक्षों का कटना रुक गया और पेड़ काटकर होने वाली 50-100 रुपये की आमदनी के स्थान पर आज पेड़ संरक्षित कर 4-5 महीने में एक पेड़ से 500-1,000 रुपये की आमदनी होने लगी है। बायोवेद शोध संस्थान द्वारा इलाहाबाद, प्रतापगढ़, मिर्जापुर, सोनभद्र एवं बुंदेलखंड के कई जिलों में पलाश, बेर, कुसुम, जंगल जलेबी, पापुलर, लेमेंजिया, पीपल, गूलर, खैर, शिरीष, पाकुर आदि वृक्षों पर लाख की खेती आरंभ की गई है। यहां ऊसर, बंजर एवं बेकार पड़ी भूमि पर लाख पोषक वृक्षों को लगाकर उपजाऊ बनाया गया है एवं इन वृक्षों पर लाख की खेती से कम लागत में 100 वृक्षों से सालाना 50,000 से 1,00,000 रुपये तक लाभ मिलने के कारण लाख उद्योग से जुड़ कर लोग वृक्षों के रक्षक बन गए हैं।

इस संस्थान द्वारा सन् 2003 में इलाहाबाद जिले के मेजा, कारांव, शंकरगढ़, बढ़गढ़, मिर्जापुर, सोनभद्र के साथ चित्रकूट और बुंदेलखंड क्षेत्र के विभिन्न गांवों में वैज्ञानिक पद्धति से लाख की खेती आरंभ कराई गई। लाख की खेती से कृषकों को 15,000-20,000 प्रतिमाह की आय हो रही है। 2008 में डॉ. द्विवेदी के प्रयासों से 69,552 लाख पोषक वृक्षों पर इलाहाबाद के 20 गांवों के लोगों ने लाख की खेती आरंभ की। इस वर्ष 993 परिवारों ने 1,00,137 पोषक वृक्षों पर लाख की खेती का आगाज़ किया है। डॉ. द्विवेदी का कहना है कि लाख की खेती से 10 दिन के प्रशिक्षण के बाद कोई भी व्यक्ति चाहे वह किसान हो, आयहीन या साधनहीन हो, प्रतिमाह 3 से 5 हज़ार रुपये अर्जित कर सकता है।

आज उत्तर प्रदेश में लाख उद्योग को पुनर्जीवन देने वाले डॉ. बी.के. द्विवेदी और उनके निर्देशन में बायोवेद शोध संस्थान लाख की खेती से संबंधित संपूर्ण संसाधन जैसे- बीज, यंत्र, दवा, प्रशिक्षण, प्रदर्शन आदि उपलब्ध करा रहा है। यह संस्थान लाख की मूल्य संवर्धित विभिन्न वस्तुओं के निर्माण एवं उनकी बिक्री का प्रबंधन भी कर रहा है। इस संस्थान द्वारा लेमेंजिया नामक झाड़ी पर लाख की खेती को प्रोत्साहित किया जा रहा है। इस पेड़ की जड़ों में नाइट्रोजन पैदा करने की क्षमता होती है, जिस कारण खेत में यूरिया की आपूर्ति स्वत: होने लगती है। आज बायोवेद शोध संस्थान से जुड़े लाख संवर्धन में संलग्न उत्तर प्रदेश के सैकड़ों किसान परिवार अपनी सफलता की कहानी बयां कर रहे हैं। उत्तर प्रदेश में सोते हुए लाख उद्योग को जगाकर संस्थान ने प्रदेश को एक बार फिर लाख उत्पादक क्षेत्रों के साथ ला खड़ा किया है।

बायोवेद शोध संस्थान लाख के 350 विभिन्न प्रकार के मूल्यवर्धित वस्तुओं के निर्माण का प्रशिक्षण देकर कई हज़ार परिवारों को रोज़गार के साथ अतिरिक्त आय का साधन उपलब्ध करा रहे हैं। डॉ. बी.के. द्विवेदी बताते हैं कि जानवरों के गोबर, मूत्र में लाख के प्रयोग से कई मूल्यवर्धित वस्तुएं बनाई जा रही हैं। इन वस्तुओं में- गोबर का गमला, लक्ष्मी-गणेश, कलमदान, कूड़ादान, मच्छर भगाने वाली अगरबत्ती, जैव रसायनों का निर्माण, मोमबत्ती एवं अगरबत्ती स्टैंड व पुरस्कार में दी जाने वाली ट्रॉफियों का निर्माण आदि शामिल हैं। इन सभी वस्तुओं का निर्माण बायोवेद शोध संस्थान करा रहा है।

उत्तर प्रदेश में 1951 से 1960 तक लाख उद्योग बेहतर प्रदर्शन कर रहा था एवं प्रदेश में 45 कारखाने कार्यरत थे किंतु उस दौरान 95 प्रतिशत लाख का निर्यात विदेशों में किया जाता था, केवल 5 प्रतिशत लाख की खपत भारत में होती थी। यानी आरंभ में लाख उद्योग विदेशी बाज़ारों पर टिका था। विदेशी निर्यात पर आश्रित होने के कारण एवं भाव में उतार-चढ़ाव के कारण व कुटीर उद्योगों की स्थापना न हो पाने के कारण लाख उद्योग उत्तर प्रदेश से गायब हो गया। बायोवेद शोध संस्थान, इलाहाबाद ने हाशिये पर आ चुके लाख उद्योग को एक बार फिर बुलंदियों की ओर ले जाने का प्रयास किया है।

भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद शोध संस्थान, रांची ने अपने 86वें स्थापना दिवस के अवसर पर 20 सितंबर, 2009 को बायोवेद शोध संस्थान के साथ लाख उद्योग को बढ़ावा देने के लिए एक सहमति-पत्र पर हस्ताक्षर किया है।

आज इलाहाबाद के प्रयाग स्टेशन के निकट स्थित बायोवेद शोध संस्थान में सजावटी व शृंगार के सामान में लाख की कलात्मक साज-सज्जा और साथ ही कलाकारों के बुलंद हौसले देखते ही बनते हैं। ❑

(लेखिका एमिटी इंस्टीट्यूट ऑफ बायोटेक्नोलॉजी, एमिटी विश्वविद्यालय, नोएडा में प्रवक्ता हैं।
ई-मेल : drriti_bhu@yahoo.co.in)

राह रोके न पानी

अक्सर, सड़क पर गाड़ी चलाने से मन उचट जाता है और सहसा पड़ोस की नदी अथवा झील में नौका-कार चलाने की इच्छा होने लगती है। ज़मीन और पानी दोनों में समान रूप से आने-जाने की क्षमता रखने वाले वाहन की इच्छा लंबे समय से लोगों के मन में उठती रही है और कई लोगों ने इस दिशा में प्रयास भी किए हैं। अनेक प्रकार से इस समस्या का समाधान पाने का प्रयास किया गया है।

ऐसे उभयमार्गी वाहन, जो धरती और जल दोनों ही सतहों पर दौड़ सकते हैं, अट्ठारवीं शताब्दी के प्रारंभ से ही अस्तित्व में रहे हैं। परंतु इनके विकास का गंभीर प्रयास 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही प्रारंभ हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान, अमरीका ने डीयूकेडब्ल्यू नाम के उभयचर (जल-थल दोनों पर चलने वाले) ट्रकों का विकास सैनिकों और सैन्य सामग्री को लाने-ले जाने के लिए किया। तदनंतर, परिवहन जैसे असैन्य कार्यों के लिए भी ऐसे वाहनों के इस्तेमाल के अनेक प्रयास किए गए। भारत में भी, अनेक साधारण नवाचारियों ने जल-थल पर चलायमान वाहनों का विकास किया है। इस संबंध में जो सबसे पहली अधिकृत जानकारी हनी-बी नेटवर्क के डेटाबेस में मिलती है, वह 'वालैंड' के बारे में है, जिसका विकास मुर्शिदाबाद (पं. बंगाल) के निताई दासगुप्ता ने 1954 में किया था। नाव के आकार का यह रिक्शा मोटर (इंजन) से चलता है और इस पर चार लोग सवारी कर सकते हैं। इसका स्टीयरिंग हैंडल के आकार का है, जो आगे वाले पहिये से जुड़ा हुआ है। पानी में इसकी गति 8 किलोमीटर प्रतिघंटा है जबकि ज़मीन पर 30 किलोमीटर प्रतिघंटे।

उत्तर प्रदेश के मिर्ज़ापुर के 70 वर्षीय द्वारिका प्रसाद चौरसिया ने सत्तर के दशक के मध्य में उभयचर साइकिल का विकास किया। यह साइकिल अभी भी काम कर रही है और इसके मुख्य भाग के दोनों ओर दो फ्लोर (तैरने वाला पुर्जा) समांतर रूप से लगे हुए हैं। दो दशक से भी पहले उन्होंने अपनी इस साइकिल का करतब मुंबई में नरीमन प्वाइंट से चौपाटी तक चलाकर दिखाया था। उन्होंने अपने नवाचारी विचार का विस्तार करते हुए थर्मोकोल से पानी पर चलने वाले ऐसे जूतों का विकास किया, जो पानी पर चलने वाले व्यक्ति को पर्याप्त तरण क्षमता और संचलन शक्ति प्रदान करते हैं। लगभग इसी समय, सैकड़ों किलोमीटर दूर, बिहार के मोतिहारी में आई बाढ़ के दौरान मोहम्मद सैदुल्ला 'नूर' ने जल-थल दोनों पर चलने वाली उभयचर साइकिल का नमूना पेश किया। मूल रूप से यह पारंपरिक साइकिल ही है, जिसमें चार आयताकार फ्लोर लगाए गए हैं। पानी में चलते समय ये फ्लोर साइकिल को सहारा देते हैं और जब ज़मीन पर इसे चलाना होता है तो उन्हें मोड़कर साइकिल से जोड़ दिया जाता है। सैदुल्ला ने एक उभयचर रिक्शा भी बनाया है, जिस पर वह अपने नाती-पोतों को बिठाकर पास की एक झील में घुमाने ले जाते हैं। मोहम्मद सैदुल्ला और द्वारिका प्रसाद चौरसिया, दोनों को राष्ट्रीय नवाचार फाउंडेशन ने क्रमशः अपने तीसरे और चौथे राष्ट्रीय पुरस्कार समारोहों में सम्मानित किया। हमारे पास भोपाल, मध्य प्रदेश के छोटू उस्ताद की भी जानकारी है, जिन्होंने हवा वाले टायर-ट्यूब के इस्तेमाल से एक और प्रकार की उभयचर साइकिल का विकास किया है। राष्ट्रीय नवाचार फाउंडेशन (एनएफआई) ने छात्रों के विचारों और नवाचारों के लिए राष्ट्रीय प्रतियोगिता का आयोजन इग्नाइट 2007 के दौरान किया था, उसमें भी इसी प्रकार की एक प्रविष्टि चेन्नई, तमिलनाडु से वी. मोहन कुमार और उनके साथियों ने भी भेजी थी।

जल और थल में चलायमान ये उभयचर साइकिलें, रिक्शा और जूते जलीय खरपतवार को समाप्त करने में, जलीय निकायों के आस-पास रहकर फुटकर सौदा बेचने वाले लोगों के लिए बिक्री साधन मुहैया कराने में, नयी जलक्रीड़ाओं, पानी से चीज़ों को खींचने के लिए और बाढ़ के दौरान काफी उपयोगी साबित हो सकते हैं। केरल के तिरुअनंतपुरम के निवासी विनोद नाम के एक मिस्त्री ने एक ऐसी संशोधित कार बनाई है जो कि पानी में भी चल सकती है। उनका कहना है कि इस कार का उपयोग नौसेना और तटरक्षक बल द्वारा निगरानी के लिए भी किया जा सकता है। टायरों के ऊपर नाव जैसे फ्लोर पर स्थित इस कार को पानी में चलते समय अपने मुख्य इंजन का उपयोग नहीं करना होता, बल्कि पीछे की ओर लगे दूसरे (गौण) इंजन का उपयोग किया जाता है। कामरूप (असम) के कनक गोगोई ने एकल सीट वाले उभयचर विमान का आविष्कार किया है। एनआईएफ को उभयचर कार का एक और विचार 2005 में अंबाला (हरियाणा) के प्रेमसिंह से भी प्राप्त हुआ था। केरल के एक पेशेवर पॉल एस. अलेक्ज़ेन्डर ने 1990 के दशक में उभयचर मोटरसाइकिल का विकास किया था, जो इंजन के काम न कर पाने की स्थिति में पैडल से चलाई जा सकती थी।

जनसाधारण की सृजनात्मकता के ऐसे दृष्टांत विश्व के अन्य भागों से भी प्राप्त हुए हैं। चीन में हुआन प्रांत के किसान हू एन ने 'हैपी बोट' नाम के अपने उभयचर वाहन को प्रदर्शित किया है। पांच अश्वशक्ति के इंजन और एक अश्वशक्ति की इलेक्ट्रिक मोटर वाली एक गाड़ी पहली बार सितंबर 2006 में पानी में उतारी गई थी और इसका उपयोग लियानशुई नदी में यात्रियों को लाने-ले जाने के लिए हो रहा है। यद्यपि उभयचर वाहनों का उपयोग कोई नयी बात नहीं है। परंतु बिना किसी बाह्य सहायता के आम स्थानीय लोगों की प्रतिभा और कौशल के इस तरह के उदाहरण, मुश्किल से देखने को मिलते हैं। इससे यह बात एक बार सिद्ध हो जाती है कि आर्थिक रूप से संपन्न न होने के बावजूद साधारण लोगों में औरों जैसे ज्ञान-सृजनात्मकता और नवाचारिता की कोई कमी नहीं होती। एनआईएफ के पास, देश के विभिन्न भागों से प्राप्त इस तरह के रचनात्मक समाधानों के अनेक उदाहरणों से परिपूर्ण डेटाबेस उपलब्ध हैं। अपनी राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा के लिए एनआईएफ इस तरह की और प्रविष्टियों को आमंत्रित करता है। ❑

उत्तर बिहार में बाढ़ के दौरान
पीने का पानी सुरक्षित

● एकलव्य प्रसाद

उत्तर बिहार का मौसम कई अर्थों में देश के दूसरे हिस्सों के मौसम से अलग है। भले ही इस मौसम में यहां मुश्किलें, तबाही और मौत के दृश्य दिखाई देते हों, लेकिन बाढ़ का मौसम इस इलाके के लोगों के लिए हर साल आने वाली ऋतु बन गई। सदियों से इन हालात का सामना करते-करते स्थानीय लोगों ने अब इसे अपनी नियति मान ली है और इसे जीवन का एक हिस्सा समझने लगे हैं। हर साल पेश आने वाली यह तबाही स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी बनी हुई है। उत्तर बिहार के मैदानी इलाकों में जो आत्मनिर्भर समुदाय रहते हैं, उन्हें भी अब बाहरी तत्वों पर निर्भर करना पड़ रहा है। बाढ़ के दौरान जिंदा रहने के लिए इसके अलावा कोई रास्ता भी नहीं है।

इस इलाके में बाढ़ का परिदृश्य जारी है। बार-बार तटबंध टूट जाते हैं और क्षेत्र में तबाही फैल जाती है। इस प्राकृतिक आपदा के कारण होने वाली बरबादी का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि शुरू-शुरू में 1952 में बिहार में 160 किलोमीटर लंबे तटबंध थे, जिनसे 25 लाख हेक्टेयर जमीन का बचाव होता था। वर्ष 2002 तक तटबंधों की लंबाई बढ़कर 3,430 किलोमीटर हो गई और बाढ़ की आशंका वाला क्षेत्र बढ़कर 68,80,000 हेक्टेयर हो गया। बार-बार बाढ़ आने से जुटाई गई सुविधाएं बरबाद हुईं और स्थानीय निवासियों में ग़रीबी, निर्भरता और अकर्मण्यता बढ़ गई। 2007 में आई बाढ़ से 2 करोड़ 50 लाख लोग तबाही के शिकार बने जबकि 2004 में इसके कारण दो करोड़ 10 लाख लोग मुश्किलों में घिर गए थे। 1987 में बाढ़ के कारण दो करोड़ 82 लाख जनता विस्थापित हुई। 2008 में बाढ़ की चपेट में 993 गांव और सुपौल, मधेपुरा, अररिया, सहरसा और पूर्णिया जिले के 35 ब्लाकों की 412 पंचायतें प्रभावित हुईं। कुल मिलाकर तीन करोड़ 30 लाख लोग इस बरबादी के शिकार हुए।

भौतिक और आर्थिक नुक़सान के अलावा बाढ़ के कारण लोगों के स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है जो बाढ़ की अवधि के बाद भी जारी रहता है। लोगों के स्वास्थ्य में आई परेशानियां लंबे समय तक जारी रहती हैं, जिससे उनकी कार्यक्षमता कम होती है और पहले से ही परेशान गृहस्थी की वित्तीय जिम्मेदारियां बढ़ जाती हैं। नतीज़ा यह होता है कि लोग ऋण के दुश्चक्र में फंस जाते हैं और सीमित आमदनी के चलते ऊंची ब्याज वाला कर्ज़ अदा न कर पाने की चिंता में घुलते रहते हैं। दुर्भाग्य की बात है कि यह उत्तर बिहार के लोगों की नियति बन गई है और इस क्षेत्र के लोगों को इन्हीं परेशानियों के साथ जीना पड़ता है।

स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के कारण

बाढ़ के दौरान लोगों को तटबंध या काम चलाऊ शरणस्थलों में जाना पड़ता है, जिनमें लोगों को अपने मवेशियों के साथ रहना पड़ता है। स्वास्थ्य और सफ़ाई संबंधी समुचित सुविधाओं के अभाव में ग्रामवासियों को अमानवीय दशा में तब तक रहने को मजबूर होना पड़ता जब तक बाढ़ रहती है। पानी उतरने में कम से कम तीन महीने लग जाते हैं।

लोगों के अनुसार उन्हें जिस सबसे गंभीर समस्या का सामना करना पड़ता है वह है सुरक्षित पेयजल की प्राप्ति। हैंडपंप पीने के पानी के मुख्य स्रोत हैं। ज्यादातर मौजूदा हैंडपंप बाढ़ के दिनों पानी में डूब जाते हैं या फिर गाद जमने के कारण उनका पानी पीने लायक नहीं रहता। तटबंधों पर पानी से घिरी अवस्था में भारी संख्या में लोगों को इकट्ठा रहना पड़ता है जिसके कारण उन्हें हैंडपंप का पानी भी मिलना दूभर हो जाता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार बाढ़ के कारण निम्नलिखित बीमारियों के फैलने की आशंका होती है :

- जलजनित बीमारियां जैसे- मियादी बुखार, हैजा और हेपाटाइटिस-ए।
- मच्छरों से पैदा होने वाली बीमारियां जैसे- मलेरिया, डेंगू और डेंगू सहित हेमरहेजिक बुखार, पीतज्वर और वेस्ट नाइल फीवर।

बैक्टीरिया के कारण पैदा होने वाली बीमारी हैजा बाढ़ के दौरान फैलने वाली सबसे घातक बीमारी है। इसके कारण उल्टी-दस्त और निर्जलीकरण हो जाता है। कई गंभीर मामलों में लोगों की मौत भी हो जाती है। हैजा एक खास तरह के बैक्टीरिया से फैलता है। यह मुख और मलमार्ग के जरिये जोर पकड़ता है। प्रभावित लोगों के मल में बड़ी संख्या में इस बीमारी के जीवाणु पाए जाते हैं। अगर यह मल बाढ़ के पानी में मिल गया, तो इसके कारण बड़े पैमाने पर संक्रमण फैल जाता है और बहुत तेज़ी से लोग हैजा के शिकार बन जाते हैं। शरणस्थल के शिविरों में पहले ही साफ़-सफ़ाई की कमी होती है, जिससे तीव्र संक्रमणशील यह बीमारी जल्दी ही महामारी बन जाती है।

उत्तर बिहार में बाढ़ के दौरान लोगों को तटबंधों पर रहना पड़ता है और वे आसानी से जलजनित बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। नतीज़ा होता है बड़े पैमाने पर जन-धन की हानि। छोटे बच्चे, महिलाएं और बुजुर्ग आसानी से इन बीमारियों के शिकार बन जाते हैं।

असुरक्षित रहन-सहन की अवस्था में पौष्टिक और साफ़-सुथरा भोजन नहीं मिल पाता, जिसके कारण स्वास्थ्य की समस्या और बढ़ती है। कुपोषण और रक्ताल्पता के कारण पहले से ही कमजोर बच्चे और गर्भवती महिलाएं इसकी चपेट में आ जाती हैं। इस बीमारी के कारण स्थानीय जनसंख्या को जिस हद तक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है उसकी जानकारी वर्ष 2004 की बाढ़ के दौरान खगड़िया जिले के दिगनी गांव के निम्नलिखित अध्ययन से मिल जाती है :

गांव में आवासों की संख्या	200
गांव के बाढ़ प्रभावित आवास	200
बाढ़ के दौरान पेयजल का स्रोत	नदी और मुश्किल से चलने वाले हैंड पंप
जलजनित बीमारियों के प्रकार	कालाजार, विषाणु संक्रमण
बीमार लोगों की कुल संख्या	43 (शिशु और अवयस्क) 28 प्रौढ़
मरने वालों की संख्या	6 (पांच मौतें उल्टीदस्त और एक कालाजार के कारण)
कुल स्वास्थ्य व्यय	65,000 रुपये

सरकारी एजेंसियां, विकास संगठन और समाज के अन्य लोग इस समस्या पर विचार करते रहते हैं और इसके निवारण के लिए पानी साफ करने वाली गोलियां बांटते रहे हैं। उथले हैंडपंप और पैक किए हुए पानी के वितरण की भी व्यवस्था की गई थी। लेकिन यह उपाय बाहरी लोगों ने किए और बाढ़ के दौरान इस सामग्री को लाने-ले जाने और वितरित करने के काम में बहुत कठिनाई आई। दूसरे, दूरदराज के इलाकों तक पहुंचना बाढ़ के कारण मुश्किल हो गया, जिससे काफी बड़े इलाके में इन उपायों के लाभ नहीं पहुंचे। दूसरी ओर बाहरी सहायता के कारण ग्रामीण समुदाय उन पर बहुत ज्यादा निर्भर हो गया और बाढ़ में जिंदा रहने की अपनी क्षमता खो बैठा। किसी जमाने में बाढ़ में भी जिंदा रहने को स्थानीय लोग जीवट का काम समझते थे और इसे वे बाढ़ का सामना करने की क्षमता का भाग मानते थे।

पेयजल की समस्या का स्थानीय समाधान

उत्तर बिहार में हर साल औसतन 1,250 मिलीमीटर वर्षा होने का अनुमान है। यहां वर्षा की ऋतु 120 दिन रहती है और आमतौर पर इस इलाके में 56 दिनों तक बारिश होती है। यह अवधि जून और सितंबर के बीच पड़ती है। सामान्य रूप से इन्हीं दिनों बाढ़ भी आती है। दुर्भाग्य की बात है कि वर्षा का पानी पूरी तरह बेकार बह जाता है और पानी से घिरे ग्रामवासियों को जिंदा रहने के लिए दूषित जल का इस्तेमाल करने पर मजबूर होना पड़ता है। औसतन सालाना बारिश से संकेत मिलता है कि पीने के लिए वर्षा जलसंचयन और भंडारण करना वर्षा ऋतु में भी संभव है और इसके कारण ग्रामवासी पूरे सीजन के लिए काफी पेयजल इकट्ठा कर सकते हैं। इस इलाके के 5 जिलों में औद्योगिक बुनियादी सुविधाएं नहीं हैं और उद्योगों के कारण वर्षा के पानी को दूषित होने का कम-से-कम ख़तरा है। इस क्षेत्र में औसत वार्षिक वर्षा और वर्षा ऋतु के कुल दिनों, कम लागत और अस्थायी वर्षा जलसंचयन तकनीक को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि बाढ़ के दिनों में भी सुरक्षित रूप से पेयजल की व्यवस्था की जा सकती है।

मेघ पाइने अभियान एक ऐसा संगठन है जो उत्तर बिहार के बाढ़ संभावित इलाकों में इस समस्या को हल करने में लगा हुआ है। इस अभियान की शुरुआत मई 2006 में हुई और अब यह सुपौल, सहरसा, खगड़िया, मधुबनी और पश्चिमी चंपारण जिलों के 22 पंचायती इलाकों में काम कर रहा है। शुरुआती चरण के दौरान इस अभियान का सारा जोर लोगों में यह भरोसा पैदा करने पर था कि वर्षा जलसंचयन के जरिये पीने के सुरक्षित पानी का इंतजाम किया जा सकता है। बाद में इस अभियान में एक अतिरिक्त घटक जोड़ा गया। यह था वर्षा जल का भंडारण और इसे वर्षा जलसंचयन नीति का एक अंग बना दिया गया। इस अभियान के तहत निम्नलिखित सिद्धांतों का ध्यान रखा गया जिनका उद्देश्य बाढ़ वाले इलाकों में वर्षा जलसंचयन के काम में तेज़ी लाना था :

- अपनी सहायता खुद करो की अवधारणा को मजबूत करना।
- लोगों को यह भरोसा दिलाना कि उनके प्रयासों से अच्छे नतीजे मिलेंगे।
- सामूहिक प्रयासों पर जोर देना।
- निर्भरता से ध्यान हटाकर लोगों में नवाचार और व्यवहार में परिवर्तन लाने वाले स्वयं सिद्ध उपायों की सोच पैदा करना।
- बदलाव के प्रक्रिया शुरू करने के लिए जन समर्थन जुटाना।
- सामूहिक कार्य के लिए एक ऐसा नया कार्यकारी मॉडल विकसित करना, जिसका इस्तेमाल अन्य विकास अभियानों में भी किया जा सके।

वर्षा जल संचयन-संभावनाएं और तकनीक

मेघ पाइने अभियान 2006 से ही उत्तर बिहार के बाढ़ प्रभावित क्षेत्र में कम निवेश और ज्यादा लाभ वाली वर्षा जलसंचयन तकनीक का प्रचार करता रहा है। यह तकनीक बहुत आसान है। सफ़ाई के साथ वर्षा जलसंचय और भंडारण करने के लिए पॉलिथीन शीट, बांस, रस्सी और भंडारण सुविधा (मिट्टी या प्लास्टिक का बर्तन) की जरूरत पड़ती है जो अधिकांशत: स्थानीय रूप से उपलब्ध होते हैं।

घटक	इकाई
हर आवास में लोगों की संख्या	5
पेयजल की रोजाना मांग	2 लीटर प्रति व्यक्ति प्रति दिन
प्रतिदिन पानी की कुल मांग	10 लीटर (2 लीटर ग 5 सदस्य)
हर महीने पीने के पानी की मांग	300 लीटर (10 लीटर ग 30 दिन)
महीने में बारिश वाले दिनों की संख्या	15
सूखे दिनों की संख्या	15
वर्षा वाले दिनों में पेयजल की जरूरत जिसे किसी बर्तन में रोज-रोज इकट्ठा किया जा सकता है	10 लीटर प्रतिदिन (2 लीटर × 5 सदस्य)
बारिश वाले महीने में सूखे दिनों के दौरान भंडारण किए जाने वाले पेयजल की जरूरत	2 लीटर × 5 सदस्य × 15 दिन (सूखे दिन यानी 150 लीटर)

तटबंधों या ऊंचाई वाले इलाकों में वर्षा जलसंचयन

बाढ़ के दिनों में लोग तटबंधों या इसी तरह के ऊंचाई वाले इलाकों में चले जाते हैं। ऐसी स्थिति में जब जगह की कमी हो, वर्षा जलसंचयन के लिए अतिरिक्त ढांचे के निर्माण की बात करना व्यर्थ होगी। अत: ऐसी स्थिति में छतों पर

पॉलिथीन शीट के सहारे वर्षा जल का संचय किया जाए। अधिकांश ग्रामीण इन शीटों का इस्तेमाल अस्थायी निवास बनाने के लिए करते हैं।

गांव के अंदर अलग-थलग घरों में वर्षा जल संचयन

बाढ़ के दिनों में जब लोग ऊंचाई वाले इलाकों को चले जाते हैं अथवा अपने ही घरों में रहना जारी रखते हैं तो बाढ़ की तीव्रता या भरे हुए पानी की गहराई निर्णायक कारक बन जाती है। जब ग्रामवासी घरों में रह रहे हों तो वे अधिकांशत: बाढ़ के पानी से घिरे होते हैं। अत: पीने का पानी जुटाना उनके लिए भी एक बड़ी समस्या बन जाती है।

बाढ़ के दौरान आवास की व्यवस्था करना मौजूदा तटबंधों पर रहने की अपेक्षा कुछ मुश्किल काम होता है। जो लोग गांवों में ही रहना जारी रखते हैं उनके लिए तब तक अस्थायी शिविरों में जाना जरूरी नहीं होता जब तक कि बाढ़ का पानी बहुत ज्यादा न हो जाए और उनके घरों में न घुस जाए। अत: ऐसे लोगों के लिए अस्थाई तौर पर वर्षा जलसंचयन के लिए एक ढांचा बना लेना संभव होता है।

इस तरह की अस्थायी व्यवस्था किसी खुली जगह- अहाते या घर के बाहर अथवा छत पर (यदि मकान पक्का है) या मकान के सामने कोई चबूतरा बनाकर की जा सकती है। इसके ऊपर पॉलीथीन की एक शीट फैलाई जा सकती है ताकि उस पर गिरने वाला वर्षा का पानी नीचे रखे गए भंडारण पात्र में गिरे।

वर्षा जलसंचयन उपायों के परिणाम–वर्षा जलसंचयन के उपायों के लिए चलाए गए अभियान के कारण निम्नलिखित नतीज़े प्राप्त हुए :

- वर्षा जल को बहुत बड़े जनसमुदाय ने पीने के सुरक्षित पानी के रूप में स्वीकार किया। वर्ष 2006 में 4 पंचायतों के 46,000 में से क़रीब 13,000 लोगों ने वर्षा का पानी पिया। वर्ष 2007 के दौरान 5 जिलों में कुल 36,352 आवासों ने वर्षा जल का इस्तेमाल किया। खगड़िया में लगभग 6,255 लोगों ने, जो अभियान में शामिल नहीं थे, बाढ़ के दिनों वर्षा जलसंचयन से लाभ उठाया। वर्ष 2007 में बाढ़ के बाद खगड़िया जिले में किए गए मूल्यांकन से जाहिर हुआ कि बाढ़ के दौरान प्रभावित लोगों ने वर्षा का पानी इस्तेमाल किया जिसका उनके स्वास्थ्य पर काफी अच्छा असर पड़ा। उदाहरण के लिए दिगनी गांव में जलजनित बीमारियों के कारण काफी कम लोग बीमार पड़े।
- बाढ़ के दौरान विस्थापित लोगों में होने वाली तकलीफ़ों की तीव्रता और बारंबारता में काफी कमी आई। पहले वे बदहजमी, पेट की ख़राबी आदि सहित जटिल गैस्ट्रिक समस्याओं और पेट की बीमारियों से पीड़ित होते थे।
- आमतौर पर लोगों की राय है कि अगर भोजन वर्षा जल में बनाया जाए या वर्षा जल के साथ किया जाए तो वह आसानी से हज़्म होता है। इस अभियान से जुड़े लोगों ने पाया कि वर्षा जल में तैयार किया गया भोजन बहुत अच्छा था।
- दुखती आंखों में वर्षा का पानी डालने से राहत मिलती है। यह जानकारी सहरसा जिले के महिशी गांव की रंजना देवी ने दी।
- निम्नलिखित पंचायतों के विभिन्न लोगों ने खबर दी कि वर्षा जल के इस्तेमाल के बाद अतिसार, उल्टी-दस्त और आंतों की अन्य बीमारियों से अपेक्षाकृत कम लोग पीड़ित हुए। पहले बाढ़ के दिनों इनके कारण ज्यादा लोग बीमार होते थे। जिन पंचायत क्षेत्रों में यह बात देखी गई वे हैं- दक्षिण तेलहुआ पंचायत (पश्चिम चंपारण), दहमा खैरी खुटहा पंचायत (खगरिया), महशी उत्तरी पंचायत (सहरसा), और बलवा पंचायत (सुपौल)।
- बाढ़ के दिनों खगड़िया की सरसावा पंचायत की रामदुलारी देवी ने सूचना दी कि उन्हें और उनके परिवार को वर्षा का संचित पानी पीना हैंडपंप के पानी से स्वाद में बेहतर लगा और इसको पीने की आदत डालना भी आसान है। बाढ़ के दिनों रामदुलारी देवी को अपने परिवार के साथ मकान की छत पर रहना पड़ा था। मेघ पाइने अभियान के साथ बातचीत करते हुए उन्होंने कहा कि उनके परिवार ने वर्षा का पानी इकट्ठा करके पिया और तब से उन्होंने लगातार 10 दिनों तक वर्षा के पानी से काम चलाया। लगातार वर्षा हो रही थी अत: उन्हें काफी मात्रा में पानी मिल गया और ज्यादा दिन तक चला। जब यह पानी खत्म हो गया तो उनके परिवार के बच्चे वर्षा के पानी का इंतजार करने लगे।
- खगड़िया जिले की सरसावा पंचायत के खर्रा टोल के धनराज सादा ने बताया कि आमतौर पर बाढ़ के बाद उनके गांव के क़रीब सभी 75 परिवारों के कम से कम दो तीन लोग बीमार पड़ते थे लेकिन ताज्जुब की बात है कि इस वर्ष बाढ़ की तबाही के बावजूद कोई भी बीमार नहीं हुआ। उन्होंने इसका कारण बाढ़ के बीत जाने के बाद भी वर्षा के संचित पानी को पीना बताया। उन्होंने कहा कि बाढ़ के बाद भी उन्हें इसका लाभ जान पड़ा।
- सहरसा जिले की एक महिला द्रौपदी देवी ने कहा कि वर्षा जलसंचयन पर उन्होंने जो पैसा और समय लगाया, उसके अच्छे नतीज़े रहे। उन्होंने कहा कि इसके लिए उन्हें अपने पति को विश्वास दिलाने में काफी समय लगाना पड़ा। लेकिन बाद में वह भी इस बात से खुश थे कि लगाया गया धन बेकार नहीं गया। उन्होंने यह जवाब मेघ पाइने अभियान द्वारा यह पूछने पर दिया कि क्या वह वर्षा जलसंचयन को बाढ़ के दिनों सुरक्षित पेयजल पाने की व्यावहारिक और लागत प्रभावी तकनीक मानती हैं।

आवासों की संख्या	200
गांव के बाढ़ प्रभावित आवासों की संख्या	200
बाढ़ के दौरान पेयजल का स्रोत	वर्षा जल
जलजनित बीमारियों के प्रकार	-
अन्य बीमारियां	वायरल इनफेक्शन
बीमार लोगों की कुल संख्या	7 (बच्चे/अवयस्क) 2 प्रौढ
मृतकों की संख्या	1
स्वास्थ्य पर कुल ख़र्च	5,000 रुपये

लोगों की सोच में आए इस बदलाव को दो कारणों से मेघ पाइने अभियान ने महत्वपूर्ण माना। एक, यह कि वर्षा जलसंचयन को 2006 से पहले लोग पीने का सुरक्षित पानी प्राप्त करने का कोई विकल्प नहीं मानते थे। दूसरे यह कि लोगों में फैला यह भ्रम टूट गया कि संचित किए गए वर्षा जल को पीने से घेघा की बीमारी हो जाती है। ❑

(**लेखक** मेघ पाइने अभियान **से सबद्ध हैं।**
ई-मेल : graminunatti@gmail.com)

बच्चों के लिए हानिकर खाद्य व्यापार

● सचिन यादव

'बच्चों के लिए हानिकर खाद्य व्यापार' शीर्षक निबंध प्रतियोगिता में पहले, दूसरे और तीसरे पुरस्कार के लिए चयनित निबंधों को एक-एक कर हम योजना के अंकों में प्रकाशित कर रहे हैं। इस कड़ी में यहां प्रस्तुत है द्वितीय पुरस्कार प्राप्त प्रविष्टि- वरिष्ठ संपादक

मंहगाई के इस दौर में सभी का मनमुताबिक पेट भर पाना कोसों दूर की बात दिखाई पड़ती है। साथ ही खाद्य पदार्थों में तरह-तरह की मिलावट भी आम आदमी के लिए कंगाली में आटा गीला होने वाली बात साबित हो रही है। जब कभी व्यापार में लाभ और हानि की बात की जाती है, तो प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों लाभ-हानि देखे जाते हैं। व्यापार में लाभ कमाने के दो तरीक़े दिखते हैं- या तो किसी उत्पाद, जिसकी मांग अधिक है, उसके मूल्य में बढ़ोतरी कर दी जाए या फिर मूल्य स्थिर रखा जाए और सामान की गुणवत्ता को कम कर दिया जाए।

दोनों ही तरीक़े आम आदमी के लिए तथा देश के स्वस्थ विकास के लिए हानिकर हैं। बच्चों को देश का भविष्य कहा जाता है। बच्चों तथा अन्य सभी पर यह बात लागू होती है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ दिमाग बसता है। लेकिन क्या आज बच्चों को ऐसे खाद्य पदार्थ मिल पाते हैं जिससे उनके अच्छे तथा स्वस्थ भविष्य की कामना की जा सके?

बच्चों के लिए होने वाला खाद्य व्यापार आज अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में 50 से 60 हज़ार करोड़ डॉलर तक पहुंच गया है। खुले बाज़ार के दौर में भारत एक विश्व बाज़ार के रूप में सभी देशों के लिए खुल गया है। अधिक से अधिक लाभ उठाने के लिए विश्व के सभी देशों में होड़ लगी है।

शहरी तथा ग्रामीण बच्चों के बीच का अंतर साफ़ देखने को मिलता है। इन दोनों वर्गों के बच्चों की अपनी-अपनी श्रेणियां होती हैं :

1. उच्चवर्गीय श्रेणी
2. मध्यमवर्गीय श्रेणी
3. निम्नवर्गीय श्रेणी

विश्व की आबादी का 40 प्रतिशत से अधिक बच्चे हैं। अगर 14 वर्ष तक के बच्चों का आकलन किया जाए, तो भारत में 20 करोड़ से ऊपर बच्चे इस आयु वर्ग के होंगे। जबकि 0 से 18 वर्ष तक के बच्चों की संख्या 40 करोड़ होगी। हमारे देश में ज्यादा बड़ी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है तो बच्चों का अधिक प्रतिशत भी गांवों में ही होगा। जबकि शहरी क्षेत्रों की जनसख्ंया में हाल के वर्षों में बेतहाशा वृद्धि नज़र आई है।

विश्व बाज़ार में बच्चों को टारगेट ऑडियंस के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। शहरी क्षेत्र के बच्चे इस बाज़ारवाद की चपेट में आ चुके हैं। किंतु आज भी बाज़ारवाद की इस लहर से गांवों के अधिकतम क्षेत्र मीलों दूर हैं।

जहां तक हानिकर खाद्य पदार्थों के व्यापार की बात है तो इसमें सबसे पहले शहरी क्षेत्र के बच्चे ही आते हैं। माता-पिता के ध्यान न देने के कारण बच्चे चना तक पचा नहीं पाते। बच्चों का ध्यान फास्ट फूड सेंटर पर ही केंद्रित होता जा रहा है। माता-पिता भी समय के अभाव या फिर जल्दी छुट्टी पाने के लिए कुछ भी हो, बस डिब्बाबंद या फिर पॉलीथीन पैक में हो, खाने की छूट दे देते हैं। बच्चों ने चना छोड़ पिज्जा, बर्गर को अपना लिया है। दूध पीना छोड़ दिया है अब उनकी मांग कोल्ड ड्रिंक की रहती है। जैसे-जैसे बच्चों पर बाज़ारवाद हावी होता जा रहा है उनके सोचने का ढंग भी बदलता जा रहा है। धीरे-धीरे करोड़ों बच्चों की पसंद-नापसंद टेलीविजन के माध्यम से विज्ञापन ने तय कर दी है। विज्ञापन बच्चों को जल्द प्रभावित करता है, जिससे बच्चा उस उत्पाद की मांग करता है। शहरी क्षेत्र में उच्च श्रेणी में आने वाले बच्चों में फास्ट फूड की लत बहुत अधिक पाई जाती है। स्कूल जाते समय उन्हें टिफिन नहीं बल्कि पॉकेट मनी मिलती है जिससे वे स्कूल की कैंटीन से समोसे, बर्गर, पेटीज तथा कोल्ड ड्रिंक ख़रीद कर लंच करते हैं।

बच्चों के दिनभर की चर्या एकदम अस्त-व्यस्त हो गई है। उनके सुबह से लेकर रात तक के खाने का पूरा नियम भी बिगड़ा हुआ है। बच्चों को चीज़ें देखने में अच्छी तथा खाने में स्वादिष्ट लगनी चाहिए भले ही वह कैसे भी बनी हुई हो। उसके बारे में उनकी जिज्ञासा एकदम क्षीण होती है। इसी का फायदा उठाकर खाद्य पदार्थों में बच्चों को गुणवत्ता के नाम पर कंपनी का नाम बेचा जाता है। बच्चों को विटामिन ए, बी, सी, डी के साथ-साथ कैल्सियम, फास्फोरस तथा आयरन जैसे तत्वों से रहित खाद्य पदार्थों की आपूर्ति की जाती है।

उदाहरणस्वरूप फास्ट फूड में बच्चों के सिर पर मैगी का भूत सवार है। बस दो मिनट में तैयार, बच्चों की मम्मी के लिए जैसे वह जादू की छड़ी हो। माताएं भी मेहनत से बचने के लिए बच्चों को फास्ट फूड खिला रही हैं। कंपनी घोषणा कर रही है कि इसे खाने से

बच्चों की हड्डियां मज़बूत हो जाती हैं। लेकिन उनकी इन घोषणाओं पर किसी का ध्यान नहीं गया। क्या वास्तव में फास्ट फूड या नूडल्स खाने से बच्चों की हड्डियां मज़बूत हो जाती हैं? क्या नूडल्स का व्यापार करने वाली कंपनी का दावा सही है? या फिर बिना किसी जांच के ही इन उत्पादों को हरी झंडी दे दी गई?

बच्चों को दूध से बनी चीज़ें काफी पसंद आती हैं। गांवों की अपेक्षा शहर में दूध की मांग अधिक रहती है। मांग की पूर्ति के लिए सिंथेटिक दूध, चावल से निर्मित तथा क्लोरीन घोलकर मौत का सौदा किया जा रहा है। खोया, पनीर, मट्ठा, मक्खन सभी मिलावटी हैं। मिलावटी घी का धंधा भी ज़ोरों पर है। प्राथमिक स्कूलों में बच्चों को दिया जाने वाला मिड-डे मील व्यवस्था ठेकेदारी की भेंट चढ़ गया है। प्राथमिक स्कूलों के प्रधानाचार्य भी ठेकेदारों के दवाब में रहते हैं। चाहे जैसा भी भोजन बच्चों को मिड-डे मील में दिया जाए, उसे वे सही मान लेते हैं। प्राथमिक विद्यालयों में दलिया, दाल, चावल आदि की आपूर्ति करने में धांधली होती है। दैनिक पत्रों के माध्यम से समय-समय पर ख़बरें आती रहती हैं। कुछ दिनों पहले लखनऊ के काकोरी क्षेत्र में स्थित एक प्राथमिक विद्यालय में छात्राओं के खाना खाने के बाद बेहोश होने की ख़बर आई थी। जिसमें क़रीब 60 छात्राएं बेहोश हो गई थीं। आखिर उस खाने की गुणवत्ता क्या थी? इसका परीक्षण करने वाला कोई भी नहीं है। यही हाल देशभर के प्राथमिक स्कूलों की मिड-डे मील व्यवस्था का है। सरकार ने बच्चों के लिए मिड-डे मील के जो भी मानक तय किए हैं उनका कितना प्रतिशत बच्चों तक पहुंच पाता है यह आज भी एक प्रश्न है।

बच्चों में बढ़ते मोटापे को लेकर राष्ट्रीय बाल अधिकार सुरक्षा आयोग ने कुछ समय पूर्व राज्य सरकारों से कहा था कि वे स्कूलों में जंक फूड तथा कोकाकोला, पेप्सी जैसे ड्रिंक पर प्रतिबंध लगाएं। इस संबंध में आयोग ने राज्यों को दिशानिर्देश दिए थे कि राज्य अपने यहां निजी तथा सरकारी स्कूलों को निर्देशित करेंगे कि जंक फूड तथा शीतल पेयों की बिक्री बंद की जाए। आयोग ने राज्य सरकारों से यह भी कहा कि बच्चों के लिए पोषण मानक भी तय करें और स्कूलों को इस बात की जानकारी दें कि वे इन मानकों के अनुरूप बच्चों को खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराएं। आयोग की सदस्य संध्या बजाज ने कहा कि बच्चों को दिया जाने वाला खाद्य पदार्थ ताज़ा बना हुआ होना चाहिए और यह पदार्थ स्थानीय तौर-तरीक़ों के अनुरूप होना चाहिए। सुश्री बजाज ने बताया कि आयोग ने जंक फूड पर अतिरिक्त कर लगाने तथा शीतल पेयों के स्थान पर दूध तथा फलों का रस उपलब्ध कराने की सिफ़ारिश की थी। यह दिशानिर्देश छात्रों में लगातार बढ़ रहे मोटापे पर किए गए एक शोध के बाद जारी किया गया।

इससे पूर्व 2006 में भी पर्यावरण संगठन सेंटर फॉर साइंस एंड इंवायरनमेंट ने अपने अध्ययन में दावा किया था कि कोका कोला और पेप्सिको के 11 ब्रांडों में कीटनाशकों का जबरदस्त कॉकटेल है। यह भी कहा गया था कि पिछले तीन वर्षों में इन शीतल पेयों में कीटनाशकों की मात्रा जस की तस है। सीएसई की रिपोर्ट के अनुसार देश के 12 राज्यों में स्थित कोका कोला और पेप्सिको कंपनियों के 25 उत्पादन केंद्रों से 11 ब्रांडों के 57 नमूने लिए गए। इन नमूनों की जांच के बाद सभी कीटनाशक की मात्रा बीआईएस मानकों से 22 से 25 गुना अधिक पाई गई। कोलकाता से लिए गए कोका कोला के नमूने में कैंसर पैदा करने वाले पदार्थ लिंडेन की मात्रा बीआईएस मानकों से 140 गुना अधिक थी। इसी प्रकार महाराष्ट्र के ठाणे से लिए गए कोका कोला के नमूने में क्लोरपाईरीफोस (एक प्रकार का विष) मानकों की तुलना 200 गुना अधिक पाई गई। सीएसई की निदेशक सुनीता नारायण ने कहा कि पेय पदार्थों में कीटनाशकों की मात्रा के बारे में भारतीय मानक ब्यूरो ने मानक तो निर्धारित किए हैं लेकिन उन्हें आज तक अधिसूचित नहीं किया गया है। सीएसई ने 2003 में शीतल पेयों में कीटनाशक होने के बारे में रिपोर्ट जारी की थी। सरकार ने मामले की जांच के लिए एक संयुक्त संसदीय समिति का गठन किया था। समिति ने फरवरी 2004 में कीटनाशकों के बारे में आवश्यक मानक बनाने की सिफ़ारिश की थी। बीआईएस ने काफी जद्दोजहद के बाद आखिरकार अक्तूबर 2005 में मानकों का निर्धारण कर लिया। लेकिन सीएसई के मुताबिक, समिति के निर्देशों की अनदेखी की जा रही है। केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय ने पिछले तीन सालों में इस दिशा में कोई भी ठोस कदम नहीं उठाए हैं।

ठीक इसी तरह नकली टमाटर तथा चिली केचअप भी तैयार किया जा रहा है। केचअप का नाम लेते ही जेहन में ताज़े लाल टमाटर उतर आते हैं। लेकिन यदि आपको मालूम चल जाए कि केचअप में टमाटर और मिर्च है ही नहीं तो आप क्या करेंगे? छोटे दुकानदार फास्ट फूड के रंग, रसायन और चाशनी से निर्मित केचअप परोस रहे हैं। इसके सेवन से एलर्जी और पेट में गैस बनने के अलावा पेट दर्द भी होता है और अत्याधिक सेवन से यकृत, प्लीहा और गुर्दे ख़राब हो सकते हैं। इन दुष्प्रभावों की सूची यहीं पर समाप्त नहीं होती है। भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान केंद्र के फूड टॉक्सीकोलॉजी के विभागाध्यक्ष डॉ. मुकुल दास रस्तोगी ने बताया कि उनके विभाग द्वारा खोमचों और ढाबेनुमां रेस्त्रां में पिज्जा, बर्गर, कबाब रोल व फ्रैंकी आदि के साथ परोसे जाने वाले केचअप के सर्वेक्षण से उपरोक्त चौंकाने वाला सत्य उज़ागर हुआ। खास बात यह है कि सस्ते केचअप में टमाटर की एक बूंद तक नहीं मिली। उसकी जगह उसमें सस्ता तथा प्रतिबंधित लाल रंग रोडामीन बी और चाशनी मिली। केचअप को लंबे समय तक बचा कर रखने के लिए इसमें अत्यधिक मात्रा में सोडियम बेंजोएट रसायन डाला जाता है। ज्ञात हो कि खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम के तहत केचअप में रंग का प्रयोग वर्जित है। पीएफए के तहत लाल रंग के लिए कारमोइसिन और इरीथ्रोसिन नामक संश्लेषित रंगों को खाने में मिलाया जा सकता है जबकि रोडामीन बी प्रतिबंधित श्रेणी में रखा गया है।

पीएफए नियम 1995 के अनुसार तंबाकू, अल्कोहल तथा निकोटीन का प्रयोग खाद्य पदार्थों में बिल्कुल नहीं होना चाहिए।

कुछ समय पूर्व कैडबरी की चॉकलेट में भी कीड़े निकले थे। क्या अंतरराष्ट्रीय कंपनियों को बच्चों के लिए बनने वाले उत्पादों से सिर्फ़ लाभ ही कमाना है? क्या उनके लिए हमारे देश के बच्चे प्रयोगशाला हैं जहां जैसा चाहा वैसा प्रयोग कर लिया? जहां विश्व में हर पांच सेकंड में एक बच्चे की मौत भूख से होती हो, वैसी स्थिति में विश्व के हर देश को बच्चों की सेहत के बारे में सोचने की ज़रूरत है। सरकारों को अपने स्तर से खाद्य पदार्थ बनाने वाली कंपनियों पर नियंत्रण करने की ज़रूरत है। साथ ही साथ अभिभावकों की यह जिम्मेदारी होनी चाहिए कि वह अपने बच्चों के संतुलित खाद्य पदार्थों के सेवन करने पर ज़ोर दें। ❑

कृषि एवं ग्रामीण विकास में सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका

● जितेन्द्र सिंह

विकास की बाट जोह रहे गांवों में सूचना प्रौद्योगिकी की बयार तेज़ी से बही है। सूचना प्रौद्योगिकी गांवों में दस्तक दे चुकी है। शुरुआत ही सही आज ई-चौपाल, ई-प्रशासन, किसान कॉल सेंटर, टेलीमेडिसिन, ग्राम ज्ञान केंद्र, ई-कॉमर्स, नैनो प्रौद्योगिकी, समुदाय सूचना केंद्र, ग्रामीण आम सुविधा केंद्र आदि का सपना गांवों में बखूबी साकार हो रहा है

आज देश ही नहीं समूची दुनिया सूचना प्रौद्योगिकी क्रांति के जरिये एक गांव/घर के रूप में तब्दील हो गया है। सूचना प्रौद्योगिकी के जरिये सुदूर गांव में बैठा व्यक्ति भी पलक झपकते सारी दुनिया से संपर्क स्थापित कर सकता है और अपनी ज़रूरत के मुताबिक मनचाही जानकारी सहज और सरल तरीक़े से प्राप्त कर सकता है। आज सूचना प्रौद्योगिकी के क़दम तेज़ी के साथ गांवों की ओर बढ़ रहे हैं। सूचना प्रौद्योगिकी मानव जीवन का एक अहम हिस्सा बन चुकी है जिसके बिना विकास की कल्पना नहीं की जा सकती। आज कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा, बैंक, बीमा, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, प्रशासन, सुरक्षा, यातायात, व्यापार आदि क्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी की अहम भूमिका है। यही कारण है कि सूचना प्रौद्योगिकी और समाज एक सिक्के के दो पहलू का रूप ले चुके हैं जिसे अलग करके नहीं देखा जा सकता है। आज सूचना प्रौद्योगिकी हर क्षेत्र के विकास एवं उन्नयन का हथियार बन चुकी है। दुनिया में भारत को जो पहचान और मुक़ाम हासिल हुआ उसके मूल में भी सूचना प्रौद्योगिकी ही है।

हमारा देश सूचना प्रौद्योगिकी में दिन दूना रात चौगुना तरक्की कर रहा है। यही कारण है कि संचार-तंत्र में भारत का विश्व में पांचवां स्थान है। भारत में सूचना प्रौद्योगिकी की रफ़्तार को कुछ इस तरह से समझ सकते हैं। देश में रेडियो को दस लाख लोगों तक पहुंचाने में 43 वर्ष का लंबा समय लगा था। टीवी को भी आम लोगों तक पहुंचने में 27 वर्ष लगे, वहीं पर्सनल कंप्यूटर को मात्र 11 वर्ष और इंटरनेट को तो मात्र 17 माह का समय लगा। देश जब आज़ाद हुआ उस समय मात्र 80 हज़ार टेलीफोन थे। देश में 20.5 लाख फोन का आंकड़ा पहुंचाने में 34 साल ख़र्च हुए। संचार क्रांति ने डेढ़ दशक में ही तस्वीर का रुख बदल दिया। आज हमारे पास 24 करोड़ से अधिक फोन हैं और इन आंकड़ों में हर पल बढ़ोतरी हो रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने नारा दिया है कि वर्ष 2015 तक दुनिया के प्रत्येक गांव को इंटरनेट से जोड़ दिया जाएगा। संचार क्रांति के फलस्वरूप किस प्रकार ग्रामीण जीवन सकारात्मक रूप से प्रभावित हो रहा है और उसके उपकरण क्या हैं, आइए इस पर एक नज़र डालते हैं।

ई-चौपाल : गांवों में कृषि से संबंधित नवीनतम जानकारी के लिए ई-चौपाल केंद्रों की स्थापना तेज़ी से हो रही है। इन ई-चौपाल केंद्रों की स्थापना गांवों में सरकार, निजी कंपनियों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा की जा रही है। ई-चौपाल निजी कंपनियों, विकास संस्थाओं एवं राज्य सरकारों का ऐसा नेटवर्क है जो इंटरनेट के माध्यम से गांवों में ही किसानों को बाज़ार की मांग, विपणन और कृषि संबंधी नयी जानकारी उपलब्ध कराता है। ई-चौपाल केंद्रों का संचालन एक स्थानीय व्यक्ति करता है, जिसे कंप्यूटर की जानकारी होती है। यह व्यक्ति पांच-छह गांवों को मिलाकर एक ई-चौपाल केंद्र का संचालन करता है। इन ई-चौपाल केंद्रों पर किसानों को कृषि की नयी प्रौद्योगिकी अपनाने संबंधी जानकारी, फ़सलों के उत्पादन बढ़ाने की जानकारी, नये उन्नतशील किस्म के बीज, उर्वरकों, दवाओं, फ़सलों के रोग, बीमारियों के निदान के उपाय, बाज़ार मांग आदि की जानकारी मुहैया कराया जाता है जिससे किसानों को एक ही जगह पर ज़रूरत की बहुत-सी जानकारी प्राप्त हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त ई-चौपाल केंद्र ग्रामीण विकास में भी अपनी भूमिका निभा रहे हैं। ये पशुधन संबंधी जानकारी, नस्ल सुधार, दुग्ध उत्पादन बढ़ाने, जल संरक्षण, स्वयं सहायता समूहों के विकास के लिए भी कार्य कर रहे हैं। आज

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, एवं आंध्र प्रदेश आदि राज्यों में 5 हज़ार से अधिक ई-चौपाल केंद्रों की स्थापना हो चुकी है जो ग्रामीण एवं ग्रामीण विकास के कार्यों में भी अपनी महती भूमिका अदा कर रहे हैं।

ग्राम ज्ञान केंद्र : केंद्र सरकार ने वर्ष 2005-2006 के बजट में 100 करोड़ की लागत से ग्राम ज्ञान केंद्र स्थापित करने की घोषणा की थी। सरकार का यह कदम गांवों और शहरों के बीच सूचना प्राप्त करने के लिए पुल का कार्य करेगा। ये सूचना केंद्र ग्रामीणों तथा किसानों को कृषि संबंधी नयी जानकारी, बाज़ार भाव, कृषि उपज के विपणन की जानकारी, बाज़ार की मांग, शिक्षा, सूचना एवं संचार आदि मूलभूत ज़रूरतों को पूरा करेगा। हालांकि गांवों को सूचना प्रौद्योगिकी का लाभ पहुंचाने का कार्य पहले ही कुछ निजी कंपनियां, औद्योगिक प्रतिष्ठानों एवं राज्य सरकारों द्वारा शुरू किया जा चुका है।

किसान कॉल सेंटर : आज के दौर में किसान कॉल सेंटर बदलते ग्रामीण भारत की नयी तस्वीर पेश करते हैं। इन केंद्रों से ग्रामीणों और किसानों को कृषि, पशुपालन, मत्स्यपालन, मधुमक्खी पालन, रेशमकीट पालन एवं कृषि से संबंधित अन्य व्यवसायों की आधुनिकतम जानकारी प्रदान करने के साथ ही इन क्षेत्रों में आने वाली कठिनाइयों एवं समस्याओं के उचित समाधान भी सुझाए जाते हैं। किसान कॉल सेंटर उत्तर प्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु और महाराष्ट्र सहित देश के आठ प्रांतों में ग्रामीणों की सहायता और मार्गदर्शन कर रहे हैं। इन केंद्रों पर उपलब्ध टोल फ्री नंबर 1551 पर देश के किसी भी कोने से फोन कर आवश्यक जानकारी मुफ्त में प्राप्त की जा सकती है।

ग्रामीण आम सुविधा केंद्र : सरकार का प्रयास है कि गांवों में विभिन्न संचार सुविधाएं ग्रामीणों को एक ही स्थान पर उपलब्ध कराया जाए। इसके लिए सरकार ने एक लाख ग्रामीण आम सुविधा केंद्रों की स्थापना की मंजूरी दी है। इन केंद्रों के मार्च 2008 तक चालू हो जाने की संभावना है। सरकार की योजना है कि 6 लाख गांवों में 1 लाख ग्रामीण आम सुविधा केंद्र खोले जाएं जिससे 6 गांवों के समूह में एक केंद्र अवश्य हो। इससे देश के गांव राष्ट्रीय संचार नेटवर्क से ही नहीं सारी दुनिया से जुड़ जाएंगे।

समुदाय सूचना केंद्र : सूचना प्रौद्योगिकी विभाग ने पूर्वोत्तर और सिक्किम के 487 विकास खंडों में समुदाय सूचना केंद्र (कम्युनिटी इंफॉरमेशन सेंटर) स्थापित किया है, ताकि क्षेत्र के लोगों का सामाजिक और आर्थिक विकास हो सके एवं ब्लॉक स्तर पर लोगों की भागीदारी बढ़ सके। इन केंद्रों की मदद से स्वास्थ्य, ऊर्जा, शिक्षा, जल, साक्षरता तथा ग़रीबी आदि की समस्याओं से आसानी से निपटा जा सके।

नैनो तकनीक : आने वाले समय में नैनो तकनीक आधुनिक प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अलादीन का चिराग़ साबित होगी। इस तकनीक के जरिये कृषि, पशुपालन एवं खाद्य प्रसंस्करण में चामत्कारिक परिवर्तन आएगा। इस तरह से ग्रामीण विकास में नैनो तकनीक अहम भूमिका निभाएगी। इस तकनीक के जरिये पराजीनी फ़सलें या ट्रांसजेनिक फ़सलें तैयार की जा सकेंगी। अभी तक एक प्रजाति की दो अच्छी किस्मों से बेहतरीन जीन निकाल कर उम्दा किस्म तैयार की जाती है। लेकिन नैनो तकनीक ने इन सबको चामत्कारिक रूप से कर दिखाया है। इस तकनीक ने वनस्पति जगत में जंतु जगत की घुसपैठ को संभव कर दिखाया है। इसके द्वारा मनचाहे स्वाद, रंग, सुगंध एवं पौष्टिकता से भरपूर फ़सलों की प्रजातियां तैयार की जा सकेंगी। यही नहीं, पौधे पोषक तत्व, खाद-पानी की कमी एवं रोग-बीमारियों को खुद ब खुद बयां करेंगे। फ़सलों को खरपतवारों के आक्रमण से बचाना हो या फिर मिट्टी की उर्वरा शक्ति की जांच-पड़ताल करनी हो, सब कुछ इस तकनीक से संभव है। नैनो तकनीक से पशुओं में मनचाही नस्ल एवं उम्दा गुणों के पशुओं को तैयार करना संभव हुआ है। प्रकृति जो करिश्मा हज़ारों-लाखों साल में करती थी, वह जेनेटिक इंजीनियरी के जरिये पलक झपकते ही संभव हो गया है। पराजीनी फ़सलों के उत्पादन में चीन नंबर एक पर है। अभी पराजीनी फ़सनों में सोयाबीन, मक्का, कपास और केनोल का प्रमुख स्थान है।

ई-प्रशासन : ई-प्रशासन अभी व्यावहारिक रूप से भले ही दूर की कौड़ी लगे, लेकिन जिस रफ्तार से देश में सूचना प्रौद्योगिकी का विकास हो रहा है, भविष्य में ग्रामीणों को सबसे अधिक फायदा ई-प्रशासन से होगा। इंटरनेट का दायरा दूरदराज के ग्रामीण क्षेत्रों तक फैलेगा, तब ई-प्रशासन से सरकार और ग्रामीणों के बीच सीधा संपर्क कायम होगा। अभी उनको अपनी भूमि संबंधी अभिलेख, बिजली, पानी, आवास प्रमाणपत्र और भुगतान की जानकारी हासिल करने के लिए दफ्तर के जो चक्कर काटने पड़ते हैं वह उन्हें घर बैठे हासिल हो जाएंगी। यही नहीं, उनको समय और पैसे की बर्बादी के साथ-साथ बिचौलियों से भी मुक्ति मिल जाएगी। प्रायोगिक तौर पर ई-प्रशासन को भू-अभिलेख, सड़क परिवहन, वाणिज्य कर, रोज़गार केंद्र, कोषागार, भू-पंजीयन, पुलिस प्रशासन एवं शिक्षा आदि महत्वपूर्ण क्षेत्रों से प्रारंभ किया जा रहा है।

ई-कॉमर्स - सूचना प्रौद्योगिकी आज हर उद्यम का अभिन्न अंग बन चुकी है। ई-कॉमर्स व्यापार और वाणिज्य की ऑनलाइन लेन-देन की कुशल प्रक्रिया है। ई-कॉमर्स आज विश्वभर में उभर रहा है। आज प्रगतिशील किसान, ग्रामीण और व्यवसायी ई-कॉमर्स के जरिये घर बैठे ही कुशलतापूर्वक व्यवसाय कर रहे हैं। भविष्य में ई-कॉमर्स के फलने-फूलने की बहुत संभावनाएं हैं।

वाई-फाई तकनीक : आज के दौर में इंटरनेट का चलन और उपयोग एक अनिवार्य अंग बन गया है। इंटरनेट के प्रयोग करने वालों के लिए इंटरनेट की वाई-फाई तकनीक वरदान साबित हो रही है। वाई-फाई वायरलेस फाईडलिटी का संक्षिप्त नाम है। इंटरनेट की सुविधाएं सामान्यत: टेलीफोन, केबल और ब्रॉडबैंड के जरिये लोगों को उपलब्ध कराई जाती हैं। आजकल बहुत-सी निजी कंपनियां छोटे से मोडम के जरिये भी इंटरनेट की सुविधा लोगों को उपलब्ध करा रही हैं। इंटरनेट के उपयोग के लिए डेस्कटॉप या लैपटॉप कंप्यूटर उपयोग में लाए जाते हैं। इंटरनेट की सुविधा लेने के लिए इन कंप्यूटरों को उपर्युक्त माध्यमों से किसी एक से जुड़ा होना चाहिए। लेकिन इंटरनेट की वाई-फाई तकनीक में डेस्कटॉप या लैपटॉप कंप्यूटर को टेलीफोन, केबल और ब्रॉडबैंड आदि की आवश्यकता नहीं पड़ती। वाई-फाई तकनीक से जुड़े क्षेत्र में कंप्यूटर स्वत: इंटरनेट से जुड़ जाते हैं जिससे कंप्यूटर को अलग से किसी कनेक्टिविटी की ज़रूरत नहीं होती। दूरदराज के क्षेत्रों के लिए जहां भौतिक कनेक्टिविटी संभव न हो उन क्षेत्रों के लिए यह तकनीक किसी वरदान से कम नहीं।

टेली-मेडिसिन - यह संचार और सूचना

प्रौद्योगिकी, चिकित्सा विज्ञान, इंजीनियरिंग एवं आयुर्विज्ञान का समन्वय है। टेली-मेडिसिन प्रणाली के अंतर्गत विशेष रूप से तैयार किए गए हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर, रोगी तथा चिकित्सक दोनों छोरों पर प्रदान किए जाते हैं। इनके जरिये रोग निवारण के उपकरण, एक्स-रे, ईसीजी, जांच रिपोर्ट आदि रोगी तक पहुंचाए जाते हैं। यह जानकारी इनसैट के माध्यम से प्राप्त की जाती है। अमूमन रोगी की बीमारी से संबंधित समस्त जानकारी विशेषज्ञ चिकित्सक को भेजी जाती है। इसके बाद डॉक्टर जांच-पड़ताल के बाद रोगी से सीधे वीडियो कांफ्रेंसिंग के द्वारा बातचीत करके रोग का निदान और उपचार करते हैं। इस कार्य के लिए सरकारी अस्तपाल, कुछ गैर-सरकारी संगठन या ट्रस्टी अस्पताल चुने जाते हैं ताकि टेलीमेडिसिन को राष्ट्रीय स्तर पर चलाया जा सके। अभी हाल ही में कर्नाटक के सभी जिला चिकित्सालयों में सैटकॉम पर आधारित टेली-मेडिसिन सुविधा स्थापित करने का कार्य आरंभ कर दिया है। हमारे देश में तो टेली-मेडिसिन जैसी चिकित्सा प्रणाली की बहुत ही उपयोगिता और सार्थकता है क्योंकि हमारा देश गांवों का देश है जहां पर आवागमन के साधन के साथ-साथ पर्याप्त चिकित्सा के साधन भी उपलब्ध नहीं हैं। ग्रामीण क्षेत्रों की लगभग 70 फीसदी आबादी के स्वास्थ्य का दारोमदार मात्र 2 फीसदी चिकित्सकों पर टिका है।

मीडिया लैब एशिया : यह राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय लोगों, परियोजनाओं एवं प्रयोगशालाओं का एक प्रस्तावित नेटवर्क है जो अत्याधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी के लाभों को ज़रूरतमंद लोगों तक पहुंचाने के उद्देश्य से बनाया गया है। मीडिया लैब दुनिया में सबसे पहले अमरीका के मासाचुसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के रूप में 1985 में स्थापित हुई थी। अपनी स्थापना के बाद से इसने इलेक्ट्रॉनिक पेपर, डेटा सुरक्षा के नये तरीक़े, शरीर पर धारण किए जा सकने वाले कंप्यूटर, म्यूजिकल जैकेट जैसे सूचना प्रौद्योगिकी के नये-नये तरीक़े खोजे हैं। भारत में मीडिया लैब का आधार बहुत ही विस्तृत और विशाल बनाने की जरूरत है। इस कार्य के लिए गांवों, शिक्षण संस्थानों एवं उद्यमियों तीनों के बीच समन्वय स्थापित किया जाएगा। मीडिया लैब के लिए भारत-अमरीका संयुक्त कार्यबल बनाया जा चुका है। यह कार्यबल उन गांवों को चिह्नित करेगा जो मीडिया लैब के स्थानीय केंद्रों की स्थापना हेतु भूमि एवं बुनियादी ढांचा उपलब्ध कराएंगे।

निष्कर्ष

कल तक विकास की बाट जोह रहे गांवों में सूचना प्रौद्योगिकी की बयार तेज़ी से बही है। आज हमारे गांव भी विकास से अछूते नहीं हैं बल्कि विकास का पर्याय बन गए हैं। सूचना प्रौद्योगिकी गांवों में दस्तक दे चुकी है। शुरुआत ही सही आज ई-चौपाल, ई-प्रशासन, किसान कॉल सेंटर, टेलीमेडिसिन, ग्राम ज्ञान केंद्र, ई-कॉमर्स, नैनो प्रौद्योगिकी, समुदाय सूचना केंद्र, ग्रामीण आम सुविधा केंद्र आदि का सपना गांवों में बखूबी साकार हो रहा है। इससे ग्रामीणों का जीवन खुशहाल बन रहा है। आज दूरस्थ क्षेत्र में बैठा ग्रामीण भी सूचना प्रौद्योगिकी के जरिये मनमाफिक सूचनाएं और जानकारियां हासिल कर सकता है। भारत जैसे विशाल भौगोलिक संरचना एवं विविधता वाले देश में सूचना प्रौद्योगिकी का महत्व और भी बढ़ जाता है। देश के दूरदराज के क्षेत्रों में जहां भौतिक संपर्क बनाना कठिन है सूचना प्रौद्योगिकी कारगर भूमिका निभा सकती है। ❑

(लेखक उदय प्रताप स्वायत्तशासी महाविद्यालय, वाराणसी में कृषि प्रसार के प्रवक्ता हैं।)

एससी/एसटी मामलों को प्राथमिकता दें : प्रधानमंत्री

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने इस बात पर स्तब्धता जताई है कि अनुसूचित जाति और जनजाति के ख़िलाफ अत्याचार के मामलों में केवल तीस प्रतिशत दोषियों को ही सज़ा हो पाती है। उन्होंने कहा कि इस बारे में एक ओर जहां राज्य सरकारों को और अधिक ध्यान दिए जाने की ज़रूरत है वहीं अदालतों को चाहिए कि वे ऐसे मामलों को प्राथमिकता दें। प्रधानमंत्री ने पिछले दिनों राज्यों के कल्याण एवं सामाजिक न्याय मंत्रियों के सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा कि अनुसूचित जाति-जनजाति और बुजुर्गों के ख़िलाफ़ अपराधों की लगातार ख़बरें आना काफी चिंता की बात है। उन्होंने कहा- यह स्तब्ध करने वाली बात है कि अनुसूचित जाति-जनजाति के लोगों के ख़िलाफ़ होने वाले अत्याचारों के मामलों में तीस प्रतिशत को ही सज़ा हो पाती है जबकि भारतीय दंड संहिता के तहत होने वाले सभी तरह के अपराधों में सज़ा का औसत प्रतिशत 42 है। प्रधानमंत्री ने राज्यों से कहा कि स्थिति में सुधार लाने के लिए वे अपनी निगरानी समितियों की राज्य और ज़िलास्तर पर नियमित बैठकें बुलाएं तथा अदालतें ऐसे मामलों को प्राथकिता दें। उन्होंने कहा कि स्थिति बदलने के लिए लोगों की सोच में बदलाव लाने की दिशा में कार्य किए जाने की ज़रूरत है। इसके लिए इस समुदायों के लोगों को विकास की प्रक्रिया में बराबर का भागीदार बनाना होगा। देश के कई इलाक़ों में सूखे जैसी स्थिति के संदर्भ में प्रधानमंत्री ने कहा कि अब तक के अनुभव यही बताते हैं कि प्राकृतिक आपदाओं के हालात में समाज के कमज़ोर तबके ही अधिक प्रभावित होते हैं। उन्होंने कहा कि ऐसे में ग़रीब को ध्यान में रखकर बनाए गए नरेगा, अन्नपूर्णा और बुजुर्ग पेंशन योजना जैसे कार्यक्रमों के कार्यान्वयन और उनकी निगरानी तेज़ करने की जरूरत है। अर्थव्यवस्था के मंदी के दौर से बाहर निकलने के संकेतों के बीच डॉ. मनमोहन सिंह ने निगमित क्षेत्र से आग्रह किया कि वे निजी क्षेत्र में विकलांग लोगों के रोज़गार को प्रोत्साहित करने के लिए बनी स्कीमों पर सकारात्मक रुख अपनाएं। इस मौके पर योजना आयोग के उपाध्यक्ष मोंटेक सिंह आहलुवालिया ने कहा कि 11वीं योजना का फ़ोकस समावेशी विकास है और केंद्र तथा राज्यों को इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए मिलकर काम करना चाहिए ताकि समाज के वंचित वर्गों के लोगों की मदद की जा सके। ❑

IAS 2010

समेध IAS
An Institute for IAS/PCS

इतिहास
द्वारा सुजीत सिंह
WORKSHOP : 6 Nov. 11 AM

सा. अध्ययन
द्वारा
सुजीत सिंह, अनिल श्रीवास्तव
एवं अन्य
WORKSHOP : 18 Nov. 11 AM

हिन्दी साहित्य
द्वारा
रवीन्द्र मिश्रा
WORKSHOP : 3 Nov. 11 AM

नोट : UPPCS एवं अन्य राज्य सिविल सेवा परीक्षाओं के लिए विशेष तैयारी

Ph. : 011-27652138
9540158227, 9310262701

IAS संस्कृत की तैयारी हेतु समर्पित भारत का गौरवमय संस्थान PCS

PANINI CLASSES

Under - Mini Chandani

संस्कृत साहित्य
द्वारा
कैलाश बिहारी एवं एस. कुमार

कक्षागत विशेषताएँ

- प्रारंभिक चरण से व्याकरण की संपूर्ण तैयारी।
- नियमित रूपेण संस्कृत अनुवाद का अभ्यास।
- संस्कृत-निबंध लेखन का आत्मनिष्ठ प्रयास।
- संस्कृत व्याख्या लेखन की नयी वैज्ञानिक पद्धति।
- प्रतिखण्ड पृथक्-पृथक् साप्ताहिक टेस्ट परीक्षा।
- सम्पूर्ण पाठ्यक्रम का संशोधित अध्ययन सामग्री।
- अनदेखा पाठांश (Unseen Passage) का सतत् अभ्यास।
- संभावित बदलती प्रश्नों की प्रवृत्ति पर कक्षा में विशेष परिचर्चा।

बैच प्रारंभ: 4 & 19 Nov. 7.30 AM
नामांकन प्रारंभ

नोट: संस्कृत अभ्यर्थी के परेशानियों को देखते हुए, विगत वर्षों के प्रश्नपत्र (IAS) पाठ्यक्रम में निर्धारित सभी पुस्तकें और निर्देशिका पुस्तिका (IAS Guide Line) "पाणिनि संस्थान" में उपलब्ध, अब बाहर से कुछ भी खरीदने की आवश्यकता नहीं।

अन्य कक्षाएँ NET/JRF, DSSSB, PGT, KV, TGT बैच प्रारम्भ

समयाभाव अथवा किसी कारणवश जो PANINI CLASSES में नहीं आ सकते, वे पत्राचार के माध्यम से नवीन अध्ययन सामग्री प्राप्त कर सकते हैं, इसके लिए दिल्ली में भुगतान योग्य अग्रिम राशि (6000/-) का बैंक ड्राफ्ट "MINI CHANDANI" के नाम भेजें। साथ ही दो फोटो एवं जन्म तिथि सहित पूरा पता।

Contact
PANINI CLASSES
09312100162
09958122675
09311724189

A-18, (BASEMENT) Young Chamber, (Behind Batra Cinema), Dr. Mukherjee Nagar, Delhi - 9

YH-11/09/3

ज़रूरत मुद्रास्फीति के सही आकलन की

● वेद प्रकाश अरोड़ा

वस्तुओं के घटते-बढ़ते मूल्यों का सच जानने के लिए इस समय देश में कई मूल्य सूचकांक प्रचलित हैं तथा इनमें विभिन्न वस्तुओं के मूल्य, महत्व को तोलते हुए यह आकलन किया जाता है कि चीज़ें सस्ती हो रही हैं या महंगी। अगर ये सस्ती या महंगी हो रही हैं तो कितनी और कहां तक। इनकी पूरी तस्वीर प्रत्येक बृहस्पतिवार को प्रिंट मीडिया और प्रसारण चैनलों के संवाददाताओं को दी जाती है।

विभिन्न मूल्य सूचकांकों में सर्वाधिक प्रचलित हैं थोक मूल्य सूचकांक। इसी के आधार पर आजकल मुद्रास्फीति का आकलन किया जाता है। अन्य वस्तु मूल्य सूचकांकों में, सर्वसाधारण का उपभोक्ता मूल्य सूचकांक, खेत मज़दूरों का उपभोक्ता मूल्य सूचकांक, ग्रामीण मज़दूरों का उपभोक्ता मूल्य सूचकांक और औद्योगिक मज़दूरों का उपभोक्ता मूल्य सूचकांक आता है। भारत में विभिन्न वस्तुओं के मूल्य का आकलन थोक मूल्य सूचकांक से किया जाता है जबकि विदेशों में उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के ज़रिये यह काम किया जाता है। थोक मूल्य सूचकांक में विभिन्न वस्तुओं और उनके समूहों का वज़न अथवा प्रतिशत अलग-अलग है। अगर प्राथमिक वस्तुओं का वजन 22.02 प्रतिशत है तो विनिर्मित वस्तुओं का वज़न 63.75 प्रतिशत तथा ईंधन, बिज़ली, रोशनी और बिकने वाली वस्तुओं का वज़न लगभग 14 प्रतिशत निर्धारित किया गया है।

प्राथमिक वस्तु समूह में बाजरा, उड़द, अरहर, फल, सब्जियां, जौ, ज्वार, मूंग और मसाले आदि खाद्य पदार्थ शामिल हैं, जबकि गैर-खाद्य पदार्थों में रेशम और रबड़ जैसी चीज़ें शामिल हैं।

ईंधन, बिजली, प्रकाश और चिकनाई वाली वस्तुओं में हल्का डीज़ल तेल, नैपथा जैसी चीज़ें गिनाई जा सकती हैं। जहां तक विर्निमित उत्पादों का संबंध है इसमें अनेक खाद्य उत्पाद जैसे- खांडसारी, धान की भूसी का तेल, आयातित खाद्य तेल, सूजी, बिनौले का तेल, मैदा, घी और विभिन्न भूसियां शामिल हैं। विनिर्मित उत्पादों के ही अंतर्गत वस्त्र समूह में पटसन का कपड़ा, कृत्रिम धागा जैसी चीज़ें शामिल हैं। रसायन और रसायन उत्पाद समूह में क्लोरिन, सभी तेज़ाब, कॉस्टिक सोडा जैसी वस्तुएं आती हैं। इसके अलावा विनिर्मित उत्पादों में मूल धातु मिश्रण और धातु उत्पादों के साथ-साथ मशीनें और मशीनी औज़ारें भी इसी श्रेणी में आते हैं। विनिर्मित उत्पादों की सूची लंबी होने के कारण इसका मोल-महत्व प्राथमिक वस्तुओं के समूह और ईंधन-बिजली समूह दोनों से डेढ़ गुना से अधिक है।

जब हम मुड़कर कुछ पीछे नज़र डालते हैं तो कह सकते हैं कि भारत में थोक मूल्यों के सूचकांकों का संकलन और प्रसार आर्थिक परामर्शदाता का कार्यालय वर्ष 1942 से साप्ताहिक आधार पर करता चला आ रहा है। थोक मूल्यों के सूचकांकों की वर्तमान शृंखला अप्रैल 1994 से नियमित रूप से ज़ारी और प्रकाशित की जा रही है। इसकी गणना का आधार 1993-94 का 100 का आंकड़ा है। थोक मूल्यों के सूचकांकों के साप्ताहिक अंकों के आधार पर मासिक और वार्षिक सूचकांक तैयार किए जाते हैं। इन्हें साप्ताहिक और मासिक सूचकाकों की सामान्य औसत निकाल कर तैयार किया जाता है।

बहुत कम लोगों को मालूम है कि देश में अभी तक उपभोक्ता मूल्य सूचकांक महानगरों और अन्य चुनिंदा शहरों की दुकानों पर बेचे जाने वाले सामान के बिक्री मूल्य के आधार पर तैयार किए जाते हैं। अब बाज़ारों और संगठित-असंगठित खुदरा दुकानों का जाल बड़े कस्बों और गांवों में तेज़ी से फैलने के कारण इन दुकानों पर बिक रही तरह-तरह की वस्तुओं के मूल्य की जानकारी एकत्र करने का काम डाककर्मियों को सौंपा जा रहा है। इन कस्बों और गांवों में घर-गृहस्थी की चीज़ों के खुदरा मूल्यों को आधार बनाने से मूल्य सूचकांक की वास्तविक तस्वीर उभरकर सामने आ जाएगी। फिलहाल इन वस्तुओं की संख्या लगभग दो सौ है। निस्संदेह ग्रामीण क्षेत्रों की छोटी-बड़ी दुकानों पर खुदरा वस्तुओं के मूल्य संकलन के आधार पर तैयार होने वाला यह उपभोक्ता मूल्य सूचकांक अधिक विश्वसनीय और ज़मीनी हक़ीक़त लिए होगा। इस काम के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में फिलहाल 1,183 डाकघरों का चयन किया गया है। देहाती इलाकों में डाककर्मियों के माध्यम से दो प्रकार का सर्वेक्षण कराया जा रहा है। एक सर्वेक्षण में उचित दर की दुकानों और जनवितरण प्रणाली के ज़रिये ग़रीबी रेखा के नीचे ज़िंदगी बसर करने वाले लोगों और अंत्योदय श्रेणी के ग्राहकों को दिए जा रहे चावल और मिट्टी के तेल आदि के आंकड़े एकत्र किए जाते हैं तथा दूसरे सर्वेक्षण में निर्धारित गांवों के बाज़ारों में और दुकानों में बेचे जा रहे सामान की क़ीमत और गुणवत्ता आदि की पूरी जानकारी हासिल की जाती है। समग्र सर्वेक्षण के अंतर्गत प्रत्येक महीने लगभग 30-31 पृष्ठों में आंकड़े दिए जाते हैं। इस पूरी जानकारी को डाकघर, केंद्रीय सांख्यिकी संगठन की वेबसाइट

पर उपलब्ध करा देते हैं। इस तरह डाक विभाग ज़रूरी उपभोक्ता वस्तुओं की क़ीमत आदि का ब्यौरा प्रत्येक महीने सांख्यिकी संगठन को उपलब्ध करा देता है। यह संगठन इस जानकारी के आधार पर ही वास्तविक और सही मूल्य सूचकांक तैयार करेगा। वैसे इस समय भी आम लोगों की विभिन्न श्रेणियों और वर्गों के लिए रोज़मर्रा के उपयोग की वस्तुओं के मूल्य के आंकड़े कई अन्य विधियों से तैयार किए जाते हैं। इनमें खेत मज़दूरों का उपभोक्ता मूल्य सूचकांक, ग्रामीण मज़दूरों का उपभोक्ता मूल्य सूचकांक और औद्योगिक मज़दूरों का उपभोक्ता मूल्य सूचकांक शामिल है। खेत मज़दूरों और ग्रामीण मज़दूरों के लिए जो मूल्य सूचकांक तैयार किया जाता है वह पूरी तरह उपभोक्ता वस्तुओं जैसे– गेहूं के आटे, दालों, वनस्पति, दूध, गुड़, चीनी, चाय, सब्ज़ियों और फलों की क़ीमतों में घट-बढ़ पर आधारित होता है। लेकिन मूल्य सूचकांक तभी पूरा समावेशी और समग्र माना जाएगा जब उसके सेवा क्षेत्र में मूल्य वृद्धि या मूल्य ह्रास का हिसाब-क़िताब लगाने के भी सूचकांक हों। इस क्षेत्र में दूरसंचार, बैंकिंग, परिवहन, बंदरगाह और विमान संचालन जैसी सेवाएं शामिल होंगी। इसके लिए अमरीका, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया और जापान जैसे देशों की सेवाओं के मूल्यांकन तैयार करने की अवधारणा, कार्यक्षेत्र, प्रतिनिधि, सेवाओं की पहचान और स्वयं सूचकांक निर्धारण पद्धति पर विचार किया गया है। इसके लिए परीक्षण के तौर पर कुछ परियोजनाओं पर काम शुरू हो चुका है। वाणिज्य मंत्रालय द्वारा नियुक्त परामर्शदाता वर्ष 2003-07 की अवधि के आंकड़े एकत्र कर चुके हैं। अब वर्ष 2007 के बाद के आंकड़ों का संकलन किया जाना है। यह काम पूरा हो जाने पर रिपोर्ट योजना विभाग के कार्यदल को सौंप दी जाएगी। पिछले वर्ष वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के औद्योगिक नीति और विकास विभाग ने सेवाओं के मूल्य सूचकांक तैयार करने के काम और इससे जुड़े मामलों पर तकनीकी सलाह देने के लिए एक विशेषज्ञ समिति बनाई थी। उसने सेवा क्षेत्र की विभिन्न वस्तुओं के मूल्य सूचकांक तैयार करने की अवधारणा, कार्यपद्धति, कार्यक्षेत्र और अन्य संबद्ध पहलुओं पर महत्वपूर्ण मार्ग निर्देशन किया है।

जहां वर्तमान मूल्य सूचकांक की गणना वर्ष 1993-94 के आधार वर्ष के संदर्भ में की जाती है वहां नये सूचकांक का आधार 2004-05 का वर्ष होगा। उसका हिसाब-क़िताब इसी वर्ष को केंद्र में रखकर लगाया जा रहा है। औद्योगिक नीति और विकास विभाग के नये सूचकांक को परीक्षण के तौर पर तैयार करना शुरू कर दिया गया है। इसके लिए उसके आंकड़े इकट्ठा करने का काम सुचारू रूप से आगे बढ़ रहा है। इस प्रायोगिक सूचकांक में 1,100 वस्तुओं के आंकड़े एकत्र किए जाते हैं। अंत में लगभग 700 वस्तुओं की तालिका तैयार की जाएगी। नये मूल्य सूचकांक को आगामी दिसंबर तक अंतिम रूप दे दिए जाने की आशा है। कहते हैं कि नये मूल्य सूचकांक में विनिर्मित वस्तुओं को अधिक महत्व और वज़न प्रदान किया जाएगा, क्योंकि उपभोक्ता और ख़रीदार अपनी आय का अधिक हिस्सा इन्हीं पर ख़र्च करते हैं। बदलते उपभोक्ता मिज़ाज़ को ध्यान में रखते हुए नये थोक मूल्य सूचकांक में खाद्य वस्तुओं का प्रतिशत कम हो जाएगा। इससे मुद्रास्फीति मापने वाला बैरोमीटर अधिक सामयिक और अद्यतन हो सकेगा। विनिर्मित उत्पादों के वर्ग का हिस्सा वर्तमान 63.75 प्रतिशत से दो-तीन प्रतिशत बढ़ जाने का अनुमान है। नये मूल्य सूचकांक में खाद्य वस्तुओं का वज़न और महत्व कम करने का मतलब यह होगा कि उनके वज़न मूल्य सूचकांक में अधिक वज़नदार वस्तुएं कम हो जाएंगे। कोई बड़ी बात नहीं कि इस मूल्य महत्व परिवर्तन पर कुछ क्षेत्रों में आपत्ति प्रकट की जाए।

यहां सवाल उठता है कि थोक मूल्य सूचकांक दिनोंदिन शक के घेरे में क्यों आता जा रहा है? कुछ क्षेत्रों में तो इसे कूड़ेदान में फेकने की मांग ज़ोर पकड़ती जा रही है। वर्ष 2005 में अमरीका में मंदी और महंगाई की आंधी चलने के बाद तथा उसके भारत की अर्थव्यवस्था पर भी असर डालने के बाद से तो थोक मूल्य सूचकांक पर से विश्वास उठता जा रहा है। इसके विपरीत उपभोक्ता मूल्य सूचकांक पर विश्वास अधिक जमता जा रहा है। थोक मूल्य सूचकांक कुछ कहता है और बाज़ार में दुकानदार इसके एकदम उलट बात कहते हैं। यह सूचकांक संकेत करता है कि वस्तुओं के दाम गिरते जा रहे हैं, लेकिन बाज़ार में हर चीज़ महंगी दिखाई देती है। यह तो समझ में आता है कि पिछले वर्ष जुलाई में जब मुद्रास्फीति इकाई से दहाई के दायरे में प्रवेश कर गई थी तो महंगाई तो बढ़नी ही थी। फिर जब मुद्रास्फीति बढ़ते-बढ़ते तेरह प्रतिशत के पायदान पर जा पहुंची तब महंगाई से हाहाकार मचना भी स्वाभाविक था। मगर अब जब थोक मूल्य सूचकांक के अनुसार मुद्रास्फीति शून्य और एक प्रतिशत की परिधि के बीच कई सप्ताह ऊपर-नीचे झूलते रहने के बाद इस वर्ष छह जून को समाप्त सप्ताह में शून्य से भी नीचे चली गई और वहां टिक गई, फिर महंगाई क्यों नहीं घटी? तब इसकी सफ़ाई में जो दलील दी गई उससे सच कुछ बाहर झांकता दिखाई दिया था। कहा गया कि ये थोक मूल्यों पर आधारित हैं। इसमें रोज़मर्रा की आम ज़रूरत की चीज़ें जैसे– सब्जियां, आटा, दाल, चीनी, चावल, दूध, दही, अंडे और कपड़े जैसी चीज़ें शामिल हैं। यह तर्क़ भी दिया गया कि महंगाई गत वर्ष सितंबर के उस बेस इफेक्ट का परिणाम है जब महंगाई 12 प्रतिशत से 13 प्रतिशत के पायदान पर टिक गई थी। लेकिन यह नहीं भूलना चाहिए कि थोक क़ीमतें तीन वर्गों, यानी प्राथमिक वस्तुओं, ईंधन और विनिर्मित वस्तुओं के उत्पादन और मूल्यों से सरोकार रखती हैं। थोक मूल्यों के सूचकांक में तभी कमी होती है जब इन तीन वर्गों की वस्तुओं का उत्पादन और क़ीमतें संतोषजनक और सकूनदेह हो। आज स्थिति यह है कि इसमें विनिर्मित वस्तुओं में गिरावट देखने में आ रही है। मूल्यों में इनके निर्यात को लकवा मार गया है। लेकिन तेल की क़ीमतों की कुंजी विदेशों के हाथ में होने के कारण वह कभी दिल की धड़कनों को बढ़ा देती है तो कभी कुछ सकून भी देती है। कारण साफ़ है हम अपने तेल खपत के लगभग 80 प्रतिशत के लिए तेल निर्यातक देशों पर निर्भर रहते हैं, क्योंकि हम अपनी ज़रूरत का केवल 20 प्रतिशत का ही उत्पादन कर पाते हैं। उत्पादकता और उत्पादन में कमी और अनेक बिचौलियों की मनमानी के कारण तेल और तेल उत्पादों के मूल्य 70 से 71 डॉलर प्रति बैरल की ऊंचाई पर बने हुए हैं। इनकी तेज़ी कुछ समय में आ सकती है, लेकिन गेहूं, चावल और चीनी के पिछले मौसम में रिकॉर्ड उत्पादन और गोदामों के खचाखच भरे होने के बावजूद उनके बाज़ार मूल्य ऊंचे बने हुए हैं। सब्ज़ियों के दाम भी महंगाई की दौड़ से पीछे नहीं आगे ही हैं। ये कम हों तो महंगाई कम हो। हालांकि इनमें से अनेक चीज़ों की कुंजी हमारे पास है, लेकिन फिर भी महंगाई बेरहम ऊंचाइयों को ही स्पर्श

करती चली जा रही है। अगर विदेशों में महंगाई का आकलन उपभोक्ता मूल्य सूचकांक से हो सकता है तो हम मुद्रास्फीति की थाह लेने के लिए थोक मूल्य सूचकांक का पैमाना क्यों अपानाएं? वह भी तब जब भानुमती के कुनबे की तरह कहीं की ईंट और कहीं का रोड़ा जोड़कर चार सौ पैंतीस वस्तुओं के एक बड़े समूह से हम काम लेते हैं। आगे चलकर तो मनमानी का यह परिवार दुगुने से भी बड़ा हो सकता है। पर सुकून की बात है कि उसमें अनेक प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ होंगे, जो यहां देश में तैयार होते हैं। अब समय है कि हम उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के अनुसार महंगाई की दर निर्धारित करें। इस समय सूचकांक के अनुसार महंगाई की दर दहाई अंक के ऊपर चल रही है। यह विडंबना है कि एक तरफ जून महीने में मुद्रास्फीति शून्य से भी नीचे गया और दूसरी तरफ उपभोक्ता मूल्य सूचकांक दस प्रतिशत से भी ऊपर पहुंचा। पहली तस्वीर बता रही है, देश में चीज़ें सस्ती हो रही हैं, यहां तक कि हम क़ीमतों की मंदी के दौर में चल रहे हैं। लेकिन दूसरी तस्वीर यह कड़वा सच पेश कर रही है कि आज महंगाई ने अपने रिकॉर्ड ही नहीं तोड़े हैं आम लोगों की कमर भी तोड़ दी है। उपभोक्ता मूल्य सूचकांक वस्तुओं और सेवाओं के उसी मूल्य का दर्पण होता है जिसे हम हर रोज़ दुकान पर या रेहड़ी पर जाकर चुकाते हैं। यह सूचकांक 12 से 13 प्रतिशत की मुद्रास्फीति की साफ़ तस्वीर पेश करता है। दूसरी तरफ वर्तमान थोक मूल्य सूचकांक कई ऐसे उत्पादों और उनके समूह को अभिव्यक्त करता है जिनका चलन या उपयोग समाप्त हो चुका है या जिनकी मांग खत्म हो चुकी है। सांख्यिकी और कार्यक्रम क्रियान्वयन विभाग के कार्मिक बीते कल के ताने-बाने में बंद या दम तोड़ रही वस्तुओं को ही यथार्थ मानकर मूल्य निर्धारण करते हैं। सोचने वाली बात है कि वर्ष 2009 में वर्ष 1993-94 के समय की चीज़ों और मूल्यों के आधार पर मूल्य तय करना कौन-सी बुद्धिमानी है? उपभोक्ता मूल्य सूचकांक रहन-सहन की वास्तविक चीज़ों के वास्तविक मूल्यों, मानकों और दुकानदारों को दी गई असली क़ीमत की कहानी कहता है। इसी पद्धति की खामियों और कमियों को निकालकर साफ़-सुथरे रूप में पेश किया जाना चाहिए। यही समय की पुकार है, ख़रीदारों की मांग है और समय का यथार्थ है। वैसे भी सैकड़ों चीज़ों के थोक मूल्य सूचकांक प्रणाली के समय की कसौटी पर खरा न उतरने के कारण कई देश उसे छोड़ चुके हैं। इस तरह से कोई इंकार नहीं कर सकता कि महंगाई और मंदी के बेमेल मेल का हमारी विकासदर, रोज़गार के अवसरों, उत्पादन और निर्यात सभी पर प्रतिकूल असर पड़ा है। अब उपमहाद्वीप सरीखे इस विशाल अर्थतंत्र के कुछ क्षेत्रों में सुधार की हरी कोंपलों के फूटने से यह नहीं समझ लेना चाहिए कि आर्थिक क्षेत्र में वसंत आ गया है। स्थिति में सुधार ज़रूर हुआ है और आगे भी होगा। लेकिन इसमें कुछ महीने लगेंगे अगर उपभोक्ता मूल्य सूचकांक का सहारा लेकर देश के सामने सही-सही तस्वीर पेश की जाती और ख़तरे की पूर्व सूचना समय पर दे दी जाती तो संभवत: स्थिति के सुधरने में यह देरी भी न होती। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

झरोखा जम्मू-कश्मीर का

काजीगुंड-बारामूला रेल खंड तैयार

जम्मू-कश्मीर वासी अब काजीगुंड- बारामूला तक ट्रेन में 120 किलोमीटर का सफर कम समय में पूरा कर रहे हैं। कश्मीर घाटी में अब तक बारामूला-अनंतनाग के बीच 101 किलोमीटर रेलवे ट्रैक पर ट्रेनें दौड़ रही हैं। काजीगुंड-बारामूला के बीच शेष बीस किलोमीटर रेलवे ट्रैक तैयार हो जाने के बाद शीघ्र ही इस नवनिर्मित रेल खंड का उदघाटन किया जाएगा।

ऊधमपुर-कटड़ा-रियासी-काजीगुंड बारामूला रेल परियोजना की आधारशिला तत्कालीन प्रधानमंत्री ने रखी थी। रेल प्रशासन ने करीब 287 किलोमीटर लंबी परियोजना के तहत ऊधमपुर-कटड़ा, कटड़ा-काजीगुंड और काजीगुंड-बारामूला को तीन हिस्सों में पूरा करने का फैसला किया था। परियोजना के तहत रेलवे प्रशासन ने घाटी में विषम परिस्थितियों के बावजूद तीन हजार करोड़ रुपये की लागत से 120 किलोमीटर लंबे नवनिर्मित बारामूला-काजीगुंड रेल खंड में ट्रेनें दौड़ाने की तैयारी कर ली है। हालांकि रेल प्रशासन ने इस रेल खंड में तीन चरणों में रेल सेवा शुरू कर कश्मीर घाटी में विकास को राह दिखाई। पहले चरण में 11 अक्तूबर '08 को अनंतनाग-बड़गाम तक 66 किलोमीटर कश्मीर में पहली बार सेवा शुरू की गई थी। दूसरे चरण में 14 फरवरी को बारामूला से राजवंशर तक रेल सेवा शुरू की गई। इस प्रकार फरवरी महीने के दौरान कश्मीर घाटी में 101 किलोमीटर रेलवे ट्रैक पर ट्रेनें दौड़नी शुरू हो गईं।

परियोजना से जुड़े अधिकारियों के अनुसार तीन हजार करोड़ रुपये की लागत से तैयार हुए नवनिर्मित बारामूला-काजीगुंड रेल खंड में कुल 15 छोटे-बड़े रेलवे पुल हैं। इनमें 420 मीटर लंबा वेट्ब ब्रिज कंकरीट की गार्डर से बनाया गया है, जबकि 201 मीटर लंबा पुल साद्रन ब्रिज लोहे से बनाया गया है। भारतीय रेल के इतिहास में पहली बार डेढ़ सौ मीटर लंबे एक स्पैन का इस्तेमाल किया गया है। इस पुल में कुल 12 स्पैन का इस्तेमाल किया गया है। ❑

अब तक के सफ़र पर एक नज़र

- 11 अक्तूबर, 2008 को कश्मीर में पहली बार अनंतनाग से बड़गाम के बीच 66 किलोमीटर लंबी रेल सेवा शुरू हुई थी।
- 14 फरवरी, 2009 को बारामूला से राजवंशर तक 101 किलोमीटर तक दौड़ी थी डीईएमयू ट्रेन
- रेलवे सेफ्टी कमिश्नर ने 7 अगस्त, 2009 को 120 किलोमीटर ट्रैक का बारीकी से निरीक्षण करने के बाद नवनिर्मित काजीगुंड-बारामूला ट्रैक पर ट्रेनें दौड़ाने के अनुमति दे दी थी। अब यह ट्रैक पूरी तरह से तैयार है।
- इस 120 शीघ्र किलोमीटर रेल सेक्शन का उद्घाटन होने की आशा है।

परिवर्तन चक्र का हिस्सा बनकर ही हम अपेक्षित बदलाव सुनिश्चित कर सकेंगे

–महात्मा गांधी

राष्ट्रपिता को उनके जन्म दिवस पर शत्–शत् नमन

2 अक्तूबर 2009

अंतरराष्ट्रीय अहिंसा दिवस

सत्यमेव जयते

सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

davp 22202/13/0065/0910

YH-11/09/4

स्वाइन फ्लू (एच I एन I)

● राकेश सिंह
वीणापाणि सिंह

स्वाइन इंफ्लुएंजा श्वास प्रणाली से संबंधित एक रोग है, जिसकी उत्पत्ति सर्वप्रथम सुअरों में पाई गई है। यह टाइप-ए इंफ्लुएंजा वायरस (विषाणु) के कारण होता है तथा सूअरों में यह आमतौर पर होता रहता है, इसी कारण इस रोग को 'स्वाइन फ्लू' कहा जाता है। सुअरों से मनुष्य के संपर्क में आने के पश्चात यह मनुष्य से मनुष्य में भी फैलता है। आरंभिक अवस्था में इसका प्रसार एक मनुष्य से दूसरे तथा दूसरे से तीसरे व्यक्ति तक ही सीमित था। परंतु आज यह रोग मनुष्यों में बहुत तेज़ी से फैल रहा है तथा विश्व के 76 से भी अधिक देशों में फैल चुका है। भारत में इसके मरीज़ों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। संक्रामक रोग होने के कारण इसको लेकर लोगों में भय व्याप्त है।

स्वाइन फ्लू का रोग सबसे पहले सोलहवीं सदी में पाया गया। स्वाइन फ्लू की उत्पत्ति के लिए जिम्मेदार वायरस में एच और एन नामक दो प्रोटीन होते हैं, यही कारण है कि इसे एचI एनI कहा जाता है। इसकी संरचना बार-बार परिवर्तित होती रही है, इसीलिए यह हर दो-तीन साल में महामारी का रूप धारण कर लेता है। स्वाइन फ्लू के वायरस बहुत ही सूक्ष्म होते हैं, जिन्हें नैनोमीटर में मापा जाता है तथा इन विषाणुओं को इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप द्वारा ही देखा जा सकता है। ये मानव शरीर में विभिन्न प्रकार की बीमारियों को जन्म देते हैं। जैसे कुछ वायरस श्वास प्रणाली व गले में संक्रमण करते हैं तो कुछ दिमाग की जानलेवा बीमारियों व कैंसर का कारण बनते हैं। सूअर से मनुष्य में फैलने के बाद मनुष्य से मनुष्य में इसका संक्रमण तेज़ी से होता है। मनुष्य के अतिरिक्त स्वाइन फ्लू के वायरस घोड़े, कुत्ते, बत्तख तथा मुर्गियों को भी संक्रमित कर सकते हैं। वर्तमान में मनुष्य में तेज़ी से फैल रहे स्वाइन फ्लू का वायरस अत्यंत घातक है। अभी तक पूरी दुनिया में लगभग तीस हज़ार मरीज़ों में स्वाइन फ्लू की पुष्टि हो चुकी है। इस बीमारी का सबसे अधिक प्रकोप अमरीका तथा मैक्सिको में है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार आजकल फैल रहा स्वाइन फ्लू अपनी चौथी अवस्था में है (कुल छह चरण निर्धारित किए गए हैं) अर्थात मनुष्य से मनुष्य में तेज़ी से फैलने वाली अवस्था।

स्वाइन फ्लू के लक्षण: इस रोग के आरंभिक लक्षण वही होते हैं जो एक साधारण सर्दी-जुकाम की अवस्था में पाए जाते हैं जैसे- बुखार, खांसी, गला ख़राब होना, नाक बहना, शरीर में दर्द, सिरदर्द, ठंड लगना, थकावट, भूख न लगना आदि। स्वाइन फ्लू के कुछ रोगियों में उल्टी, दस्त की शिकायत भी देखी गई है। इसके अतिरिक्त निमोनिया तथा श्वास प्रणाली की कार्यक्षमता में उत्पन्न दोषों के कारण रेस्पिरेटरी फेल्योर होना रोगी की मृत्यु का कारण बनता है। एक साधारण मौसमी फ्लू के विपरीत स्वाइन फ्लू रोगी की अन्य बीमारियों जैसे- मधुमेह, उच्च रक्तचाप तथा हृदय रोग की अवस्था को और गंभीर बना देता है। स्वाइन फ्लू के ये लक्षण बच्चों में ज्यादा गंभीर देखे गए है। बच्चों को तुरंत अस्पताल में दाखिल करा देना चाहिए यदि उनमें सांस की गति तेज़ हो जाए या सांस लेने में परेशानी हो। इसी प्रकार यदि त्वचा का रंग नीला हो जाए, बच्चा चिड़चिड़ा हो जाए, कम पानी पिये, सुस्ती बढ़ जाए तो भी तुरंत डॉक्टर की सलाह लेनी चाहिए। वयस्कों में भी सांस लेने में कठिनाई का अनुभव होना, छाती या पेट में दर्द अथवा भारीपन होना, चक्कर आना, मूर्छा की स्थिति या बार-बार उल्टी आने पर भी

रोगी को तुरंत अस्पताल में भर्ती करना चाहिए।

संक्रमण: स्वाइन फ्लू का संक्रमण व प्रसार एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य में ठीक उसी प्रकार होता है जैसे मौसमी फ्लू का, अर्थात संक्रमित व्यक्ति के छींकते व खांसते समय दूसरे मनुष्य के उसके संपर्क में आने से। अत: भीड़-भाड़ वाली जगहों जैसे- बाज़ार, मेला, मल्टीप्लेक्स आदि स्थानों पर यह रोग जल्दी फैल सकता है। रोगी द्वारा उपयोग में लाई गई वस्तुओं जैसे- दरवाज़े का हैंडल, डेस्क, बच्चों के खिलौने, टेलीफोन हैंडसेट आदि को छूने के पश्चात उसी हाथ से अपने नाक, मुंह व आंख को छूने से भी इस रोग का संक्रमण हो सकता है, क्योंकि वायरस प्राय: दो घंटे तक इन बाहरी वस्तुओं पर जीवित रह सकता है। नर्सरी, क्रैच, विद्यालय तथा पार्क आदि स्थानों पर बच्चे एक-दूसरे के संपर्क में आते हैं। इससे बच्चों में यह रोग तेज़ी से फैल सकता है। संक्रमित सूअर के पास जाने व उसका कच्चा मांस छूकर हाथ को मुंह, नाक या आंख पर लगाने से भी यह विषाणु संक्रमित कर सकता है। एक रोगी एक स्वस्थ व्यक्ति को बीमारी शुरू होने के एक दिन पहले से लेकर बीमारी शुरू हो जाने के सात या इससे भी अधिक दिन तक संक्रमित कर सकता है अर्थात रोगी रोग की अवस्था से पहले से लेकर तथा रोग की अवस्था के दौरान इस रोग को दूसरे तक पहुंचा सकता है।

स्वाइन फ्लू का निदान : स्वाइन फ्लू के निदान हेतु श्वास प्रणाली का नमूना रोग की अवस्था के प्राथमिक चार-पांच दिनों के अंदर ही लेना चाहिए क्योंकि इस समय के दौरान रोगी के शरीर से वायरस बाहर निकल रहे होते हैं। परंतु कुछ रोगी, खासतौर पर बच्चे दस दिन या इससे अधिक समय तक भी वायरस का प्रसार कर सकते हैं। इन वायरसों का पूर्ण रूप से निदान विशेष प्रयोगशालाओं द्वारा किया जाता है।

टीकाकरण : स्वाइन फ्लू का वायरस चूंकि नया है, इसलिए इस रोग से बचाव के लिए फिलहाल कोई टीका उपलब्ध नहीं है। इस टीके को बनाने में कम-से-कम छह से बारह महीने का समय लगेगा। साधारण फ्लू से बचाव के लिए जो टीके उपलब्ध हैं वह स्वाइन फ्लू से बचाव में उपयोगी सिद्ध नहीं होंगे।

उपचार : इस रोग से उपचार के लिए एंटी वायरल दवाएं ऑक्सल्टामीवीर (टैमीफ्लू) तथा जानामीवीर नामक दवाएं उपयोगी पाई गई हैं। ये दवाएं रोगी के शरीर में प्रविष्ट होकर वायरस की जनन प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न करती हैं ताकि उनका प्रकोप कम किया जा सके। ये दवाएं रोग के लक्षणों को कम करती हैं साथ ही रोग की जटिलता व गंभीरता को भी कम करती हैं। हालांकि पूरी तरह से इनका लाभ तभी मिल पाता है जब इनका उपयोग जल्दी से जल्दी शुरू कर दिया जाए अर्थात रोग के लक्षण उत्पन्न होने के दो दिन के अंदर। इसके अतिरिक्त स्वाइन फ्लू के रोगी को सामान्य रोगियों से अलग वार्ड में दाखिल करना चाहिए। मरीज के मुंह व नाक पर मास्क बांध कर रखें ताकि विषाणु का प्रसार कम-से-कम हो। रोगी को धूम्रपान नहीं करना चाहिए। ताज़ा भोजन, फल तथा ज्यादा-से-ज्यादा मात्रा में साफ जल का सेवन करें। बीमारी के दौरान बच्चों को स्कूल न भेजें। वयस्कों में स्वाइन फ्लू के सारे लक्षण समाप्त हो जाने के सात दिन बाद तथा बच्चों को चौदह दिन बाद ही अस्पताल से छुट्टी देनी चाहिए। बुखार के लिए केवल पैरासीटामोल दवा ही देनी चाहिए। ऑक्सीजन तथा अन्य जीवाणु प्रतिरोधक दवाएं डॉक्टर की सलाह से जरूरत पड़ने पर ही दें।

बचाव के उपाय : हम दिन-प्रतिदिन की कार्यशैली में थोड़ी-सी सावधानी बरत कर स्वाइन फ्लू के संक्रमण से बच सकते हैं। जिस व्यक्ति को खांसी, जुकाम, बुखार या फ्लू के अन्य लक्षण हों उनके पास जाने से बचें। हाथ, मुंह व नाक की सफाई पर पूर्ण ध्यान दें। रोगी को सामान्य व्यक्तियों से दूर रखें। रोगी या संभावित रोगी अथवा संदिग्ध रोगी छींकते एवं खांसते समय मुंह और नाक पर रूमाल या टिशु पेपर का प्रयोग करें और इसे अलग कचरे के डिब्बे में डालें। हाथों को साबुन या एल्कोहल युक्त क्रीम अथवा तरल पदार्थ से साफ़ करें। साबुन और पानी से हाथ साफ़ करते समय कम-से-कम 15 से 20 सेकंड का समय लगाएं। एल्कोहल युक्त जेल का इस्तेमाल करते समय जेल को तब तक रगड़ें जब तक वह सूख न जाए। जेल को पानी की आवश्यकता नहीं होती है और इसमें उपस्थित एल्कोहल जीवाणुओं को मार देता है। भोजन से पहले हाथों को साबुन व पानी से साफ़ करना बहुत आवश्यक है। खूब पानी पिएं एवं पौष्टिक आहार लें। तनाव मुक्त रहें। पूरी नींद लें। घर और आस-पास के वातावरण को साफ रखें। घर में अगरबत्ती, धूपबत्ती अथवा जड़ी-बूटियों से निर्मित हवन सामग्री से हवन करने से वायु शुद्धि होती है। अत: यथा उचित इसे भी करें। भीड़-भाड़ वाले स्थानों पर जाने से बचें। नर्सरी, क्रैच, विद्यालय, पार्कों आदि स्थानों पर बच्चों का विशेष ध्यान रखें। जिन मरीजों को फ्लू के लक्षण हों, उन्हें बीमारी शुरू होने के सात दिन बाद तक या लक्षण खत्म होने के तीन दिन बाद तक अलग कमरे में रहना चाहिए। फ्लू के दौरान जिन रोगियों को तेज़ बुखार, जुक़ाम, खांसी के साथ सांस फूलने लगे, उन्हें तुरंत अस्पताल ले जाएं। मरीज के साथ रहने वाले परिजनों में यदि फ्लू के लक्षण दिखाई दे, तो तुरंत डॉक्टर से संपर्क करना चाहिए।

स्वाइन फ्लू का भविष्य : स्वाइन फ्लू के अब तक के आंकड़े यह दर्शाते हैं कि यदि तत्काल कोई कदम नहीं उठाया गया तो स्थिति विस्फोटक हो सकती है। स्वाइन फ्लू के व्यापक विस्तार से वैज्ञानिकों को यह अंदेशा है कि एच1 एन1 वायरस मौसमी फ्लू के एच5 एन1 वायरस के साथ मिलकर और ज्यादा ख़तरनाक हो सकता है। ठंड के मौसम में इसके वायरस की क्षमता बढ़ जाती है और अब जब शीत ऋतु आने वाली है, इस वायरस का हमला बढ़ सकता है। वैज्ञानिक यह मानते हैं कि विगत वर्षों में फ्लू का यह वायरस अपने में बदलाव लाकर और घातक हो सकता है। यह प्रश्न चिंतनीय है कि आने वाले दिनों में इस वायरस का स्वरूप क्या होगा। इस संदर्भ में वैज्ञानिकों ने तीन प्रकार के अनुमान लगाए हैं। पहला, यह वायरस लुप्त हो जाएगा क्योंकि यह अपने अंदर ऐसा परिवर्तन कर सकता है जिससे इसकी संक्रामकता कम हो जाएगी। दूसरा, यह वायरस इसी क्षमता के साथ विद्यमान रहेगा और ज्यादा संक्रामक होने के साथ कम घातक होगा। तीसरा, यह वायरस साधारण फ्लू के एच5 एन1 वायरस के साथ मिलकर ज्यादा घातक हो सकता है। ❑

(लेखकद्वय क्रमश: एस्कार्ट्स हॉस्पीटल एंड रिसर्च सेंटर, फरीदाबाद के मुख्य चिकित्सा अधिकारी एवं कंसल्टेंट और केएलएम दयानंद महिला महाविद्यालय, फरीदाबाद के समाजविज्ञान विभाग में प्राध्यापक हैं।

ई-मेल : rakesh.singh@fortishealthcare.com)

ख़बरों में

● पीएसएलवी ने ओशनसैट-2 के साथ रचा इतिहास

भारत ने पीएसएलवी के लगातार 15वें सफल अभियान के तहत 20 मिनट के रिकॉर्ड अंतराल में भारतीय उपग्रह ओशनसैट-2 और छह नैनो यूरोपीय उपग्रहों को कक्षा में स्थापित कर दिया। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के पीएसएलवी-सी14 ने 960 किलोग्राम वजनी समुद्र निगरानी उपग्रह ओशनसैट-2 को पृथ्वी से क़रीब 720 किलोमीटर ऊपर कक्षा में स्थापित किया। चेन्नई से क़रीब सौ किलोमीटर दूर आंध्र प्रदेश स्थित सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से आकाश में छोड़े जाने के बाद यह 20 मिनट में अपनी कक्षा में पहुंच गया। 44.4 मीटर लंबे और चार चरणों वाले अंतरिक्ष यान पीएसएलवी-सी14 ने अंतरिक्ष के सफ़र पर रवाना होने के बाद एक-एक करके सभी उपग्रह कक्षा में स्थापित कर दिए। पीएसएलवी ने ओशनसैट के साथ दो जर्मन रुबिन नैनो सैटेलाइट, जर्मनी के ही दो क्यूबसैट्स, तुर्की के एक आईटीयू-पीसैट और स्विट्जरलैंड के स्विसक्यूब-1 सैटेलाइट को अंतरिक्ष में पहुंचाया है। गौरतलब है कि ओशनसैट देश का 16वां रिमोट सेंसिंग सैटेलाइट है। यह मछली पकड़ने के संभावित क्षेत्रों की निशानदेही करने के साथ ही समुद्री क्षेत्र की स्थिति की भविष्यवाणी करेगा और तटीय क्षेत्रों के अध्ययन में मदद करेगा। उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी इस ऐतिहासिक क्षण का साक्षी बनने के लिए वहां मौजूद थे। इसरो अध्यक्ष जी. माधवन नायर ने कहा, "हमने एक उत्कृष्ट और सटीक प्रक्षेपण किया है। इसने एक बार फिर हमारी क्षमता साबित कर दी है। यह टीम वर्क की एक शानदार मिसाल है। पीएसएलवी प्रक्षेपणयान की परिपक्वता साबित हो गई है।"

● एक लाख आदिवासियों पर चल रहे मामले वापस

नक्सलियों के ख़िलाफ़ नवंबर से बड़े अभियान की शुरुआत का खाका तैयार कर रहे केंद्रीय गृह मंत्रालय नक्सलवाद से ग्रस्त राज्यों में आदिवासियों के बीच विश्वास बहाली के लिए झारखंड मॉडल अपनाने की तैयारी कर रही है। झारखंड में केंद्र सरकार की सलाह के बाद स्थानीय प्रशासन ने आदिवासियों पर वन्य नियमों के तहत दर्ज़ क़रीब एक लाख छोटे मामलों को ख़त्म कर दिया गया है। इस प्रक्रिया से उनके बीच सरकार के प्रति विश्वास बहाली का माहौल भी बना है।

मंत्रालय के एक वरिष्ठ अधिकारी ने कहा "झारखंड का यह मॉडल सफल रहा है। छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, बिहार, आंध्र प्रदेश को भी वन्य नियमों के तहत आदिवासियों पर दर्ज़ छोटे मामलों को बंद करने के लिए कहा जाएगा। इस सिलसिले में इन राज्यों के साथ प्रारंभिक स्तर पर कार्रवाई शुरू की गई है।" सूत्रों के अनुसार झारखंड में जो मामले दर्ज़ थे उनमें से कई मामूली से भी निचले स्तर के थे। इसमें किसी जंगल में फल तोड़ना, पत्ती तोड़ना या फिर पेड़ से टूटकर गिरी लकड़ी की चोरी करना जैसे मामले थे।

● वैज्ञानिकों को भटनागर सम्मान

रमन रिसर्च इंस्टीट्यूट के अभिषेक धर, एल.वी. प्रसाद नेत्र संस्थान के संतोष होनवार और हैदराबाद विश्वविद्यालय के वी. सुरेश उन प्रमुख 11 अनुसंधानकर्ताओं में शुमार हैं जिन्हें 2009 के देश के शीर्ष विज्ञान सम्मान के लिए चुना गया है।

प्रतिष्ठित शांति स्वरूप भटनागर पुरस्कारों की घोषणा वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद (पीएसआईआर) के महानिदेशक समीर ब्रह्मचारी ने संस्थान के 67वें स्थापना दिवस समारोह में की। श्री धर को यह सम्मान भौतिक विज्ञान में योगदान के लिए दिया गया जबकि होनवार और सुरेश को क्रमशः चिकित्सा और गणित विज्ञान के क्षेत्र अनुसंधान के लिए चुना गया है। हरिश्चंद्र रिसर्च इंस्टीट्यूट के राजेश गोपाकुमार को भी भौतिक विज्ञान में उनके योगदान के लिए इस पुरस्कार से नवाज़ा गया। भारतीय विज्ञान संस्थान के गिरिधर मद्रास और जयंत रामास्वामी हरित्स को इंजीनियरिंग विज्ञान और इसी अग्रणी संस्थान से एस.के. सतीश को पृथ्वी विज्ञान में उनके योगदान के लिए पुरस्कार के लिए चुना गया। आईआईएससी के नारायणस्वामी जयरामन और आईआईटी दिल्ली के चारूसीता चक्रवर्ती को रसायन विज्ञान के लिए पुरस्कार मिला। जवाहरलाल नेहरू सेंटर फॉर एडवांस्ड साइंटिफिक रिसर्च के अभिताभ जोशी और नेशनल सेंटर फॉर साइंसेज़ के भास्कर साहा को जीवविज्ञान के क्षेत्र में योगदान के लिए पुरस्कार दिया जाएगा। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह इन्हें पुरस्कारों को प्रदान करेंगे।

● भारतीय मूल के वेंकटरमन को रसायन विज्ञान का साझा नोबेल पुरस्कार

भारतीय अमरीकी वेंकटरमन रामकृष्णन को दो अन्य वैज्ञानिकों के साथ 2009 के रसायन विज्ञान के नोबेल पुरस्कार के लिए चुना गया। राइबोसोम पर उनका उल्लेखनीय कार्य नये एंटीबायोटिक्स के विकास में मददगार साबित हो सकता है। तमिलनाडु के चिदंबरम में जन्मे 57 साल के रामकृष्णन को अमरीका के थॉमस योनेथ के साथ 14 लाख डॉलर के पुरस्कार के लिए संयुक्त रूप से चुना गया है। रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंसेज़ ने कहा कि तीनों वैज्ञानिकों ने त्रिआयामी मॉडलों का विकास कर दिखाया है कि विभिन्न प्रकार के एंटीबॉयोटिक किस तरह राइबोसोम से जुड़ते हैं।

अकादमी ने अपने बयान में कहा है- नये एंटीबायोटिक के विकास में, मानव जीवन की रक्षा और मानवता की पीड़ा को कम करने में वैज्ञानिक इन मॉडलों का उपयोग कर रहे हैं।

अब तक भारतीय या भारतीय मूल की आठ हस्तियों को नोबेल पुरस्कार मिल चुका है। इनमें रवींद्रनाथ टैगोर (साहित्य), सी.वी. रमण (भौतिकी), हरगोविंद खुराना (चिकित्सा और शरीर, क्रिया विज्ञान), मदर टेरेसा (शांति), एस. चंद्रशेखर (भौतिकी), अमर्त्य सेन (अर्थशास्त्र) और वीएस नायपाल (साहित्य) शामिल हैं।

रामकृष्णन ने गुजरात के बड़ौदा विश्वविद्यालय से 1971 में विज्ञान में स्नातक की उपाधि हासिल की और उच्चतर अध्ययन के लिए अमरीका चले गए। बाद में वह अमरीका

में बस गए और वहां की नागरिकता हासिल कर ली। अमरीका के ओहायो विश्वविद्यालय से उन्होंने भौतिकी में पीएचडी की उपाधि हासिल की। बाद में अमरीका में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में वे 1976 से 78 तक स्नातक छात्र के रूप में रहे।

● **पित्रोदा प्रधानमंत्री के सलाहार बने**

सूचना प्रौद्योगिकी के पुरोधा माने जाने वाले सैम पित्रोदा को आधारभूत ढांचा, नवोन्मेष और सूचना के क्षेत्र के लिए प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह का परामर्शदाता नियुक्त किया गया है।

उन्हें कैबिनेट मंत्री का दर्ज़ा दिया गया है। पित्रोदा राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के भी अध्यक्ष हैं। वह आधारभूत ढांचा, स्वास्थ्य, न्याय और सूचना के क्षेत्र में सूचना संपर्क प्रौद्योगिकी (आईसीटी) को संबद्ध करने के बारे में सिंह को परामर्श देंगे।

● **बलराज पुरी को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार**

पत्रकार और मानवाधिकार कार्यकर्ता बलराज पुरी को राष्ट्रीय एकता के क्षेत्र में उनके उल्लेखनीय कार्यों के लिए 24वां इंदिरा राष्ट्रीय एकता पुरस्कार से सम्मानित किया जाएगा।

पुरस्कार में एक प्रशस्ति-पत्र और पांच लाख रुपये की राशि प्रदान की जाती है। राष्ट्रीय एकता और सद्भाव के विचार को बनाए रखने के लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने शताब्दी वर्ष में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार की स्थापना की थी। यह पुरस्कार किसी व्यक्ति या संस्था को इस संबंध में किए गए अनुकरणीय योगदान के लिए दिया जाता है। श्री पुरी लेखक की हैसियत से *योजना* से संबद्ध रहे हैं।

● **डॉल्फिन राष्ट्रीय जलीय जीव घोषित**

मनुष्य की दोस्त मानी जाने वाली डॉल्फिन मछली को राष्ट्रीय जलीय जीव घोषित किया गया है। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह की अध्यक्षता में हुई राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण की बैठक में यह फ़ैसला लिया गया। डॉल्फिन गंगा में पाई जाती है जो इसके प्रदूषण और अवैध शिकार के कारण क़रीब-क़रीब लुप्त होने की कग़ार पर है।

डॉल्फिन मछली की लंबाई दो से ढाई मीटर तक होती है। गंगा में पाई जाने वाली मादा डॉल्फिन की लंबाई नर से थोड़ी ज्यादा होती है। डॉल्फिन की आयु 28 साल तक दर्ज़ की गई है। गंगा में रसायनों के बढ़ते प्रदूषण तथा अवैध शिकार, सिंचाई के लिए पानी के दोहन के चलते इनकी संख्या लगातार घटती जा रही है और यह लुप्त होने के कगार पर है।

● **दादा साहेब फालके पुरस्कार मन्ना डे को**

प्रसिद्ध पार्श्व गायक मन्ना डे को पिछले दिनों राष्ट्रपति ने वर्ष 2007 के दादा साहेब फालके पुरस्कार से सम्मानित किया।

90 वर्षीय मन्ना डे ने अपनी लंबी संगीत यात्रा में साढ़े तीन हज़ार से ज्यादा गीतों को अपने सुरों में सजाया। भारतीय सिनेमा में उनके समग्र योगदान के लिए उन्हें इस पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। राष्ट्रपति प्रतिभा पाटील 21 अक्तूबर को राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार समारोह में उन्हें यह पुरस्कार प्रदान किया। इस पुरस्कार के तहत दस लाख रुपये की राशि, स्वर्ण कमल और शाल भेंट किया गया।

1 मई, 1919 को जन्मे मन्ना डे का वास्तविक नाम प्रबोध चंद्र डे है। संगीत की बारीकियां उन्हें उनके चाचा और संगीतकार केसी डे ने सिखाई। अपने चाचा के अलावा मन्ना डे ने उस्ताद अमन अली खान और उस्ताद अब्दुल रहमान खान से भी गायकी की तालीम ली। मन्ना डे 1942 में अपने चाचा के पास मुंबई गए और वहां उनके सहायक के तौर पर काम करना शुरू किया कुछ समय तक वे सचिन देव बर्मन के सहायक रहे और बाद में कुछ और संगीत निर्देशकों के साथ भी काम किया। उन्होंने पार्श्व गायन की शुरुआत 1943 में *तमन्ना* फिल्म से की। हिंदी फ़िल्मों में 1950 से 1970 का दौर संगीत का स्वर्णिम युग कहा जाता है और इसे स्वर्णिम बनाने में मन्ना डे की आवाज का बहुत बड़ा योगदान रहा। उन्होंने मोहम्मद रफ़ी, किशोर कुमार और मुकेश के साथ मिलकर भारतीय फ़िल्म संगीत की मजबूत नींव रखी। दादा साहब फालके पुरस्कार से पहले मन्ना डे को 1969 में फ़िल्म *मेरे हुज़ूर* के लिए और 1971 में बांग्ला फ़िल्म *निशी पद्म* के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किया जा चुका है। डे को 1971 में पद्मश्री और 2005 में पद्म विभूषण से भी अलंकृत किया जा चुका है। ❑

(पृष्ठ 36 का शेषांश)

जो सार्वजनिक क्षेत्र (कर्मचारी राज्य बीमा अस्पताल तथा डिस्पेंसरियां) तथा निजी स्वास्थ्य संगठन अस्पताल और दैनिक देखभाल सेवा उपलब्ध कराएंगे वे ही इस योजना में भाग लेने के पात्र होंगे। स्वयं सहायता समूहों और ग़ैर सरकारी संगठन सहित नागरिक समाज तथा स्वास्थ्य सेवा मुहैया कराने वाले संगठन के प्रतिनिधियों को मिलाकर राज्य स्तर और केंद्र स्तर पर एक मज़बूत निगरानी तंत्र स्थापित करने पर भी विचार किया गया है। केंद्रीय श्रममंत्री ऑस्कर फर्नांडीज़ के अनुसार अब तक 18 राज्यों ने स्वास्थ्य बीमा योजना चलाने की मंशा ज़ाहिर की है। सबसे पहले यह योजना संघ शासित क्षेत्र दिल्ली में लागू की जाएगी उसके बाद महाराष्ट्र में लागू की जाएगी। बाकी बचे राज्यों से भी आशा है कि वे भी योजना को लागू करेंगे। ग़ैर-संगठित क्षेत्रों के श्रमिकों की विशाल संख्या ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है। ये लोग अपनी अधिकतर स्वास्थ्य संबंधी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए ग्रामीण स्वास्थ्य ढांचे पर ही निर्भर हैं। इस कारण से स्वास्थ्य बीमा योजना को प्रभावी बनाने में अस्पतालों के अलावा ग्रामीण स्वास्थ्य ढांचे से भी जोड़ना होगा। ग़रीबों और जनजातीय जनसंख्या वाले क्षेत्रों तथा दूर-दराज के क्षेत्रों में, इन लोगों के बीच इस योजना के बारे में जागरुकता उत्पन्न करने और प्रभावी सेवा उपलब्ध कराने पर भी स्वास्थ्य बीमा योजना की सफलता निर्भर है। इस उद्देश्य के लिए ग़ैर-सरकारी संगठनों तथा स्वयं सहायता समूहों के अलावा एचआरएचएम के अंतर्गत गठित स्वीकृत सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता- आशा के रूप में जाने जानेवाले तीन लाख प्रशिक्षित सामुदायिक स्वास्थ्य महिला कार्यकताओं की सेवाओं का उपयोग किया जा सकता है। ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में भी इस उद्देश्य के लिए आंगनबाड़ी कार्यकताओं की सेवाओं का उपयोग किया जा सकता है। इस मज़बूत कार्यबल के लिए स्वास्थ्य सुरक्षा बहुत महत्वपूर्ण है। यह न केवल श्रमिकों की उत्पादन क्षमता में और आर्थिक स्थिति में सुधार करेगी बल्कि यह अन्य दो योजनाओं, जिनके नाम 'आम आदमी बीमा योजना' और 'वृद्धावस्था पेंशन योजना' है, के साथ मिलकर अर्थव्यवस्था के विकास में शामिल होने के लिए ग़रीब लोगों के बीच चेतना पैदा करने के लिए एक लंबा सफ़र तय करेगी। ❑

(पीआईबी फीचर)

प्रकाशन विभाग की नवीनतम पुस्तकें

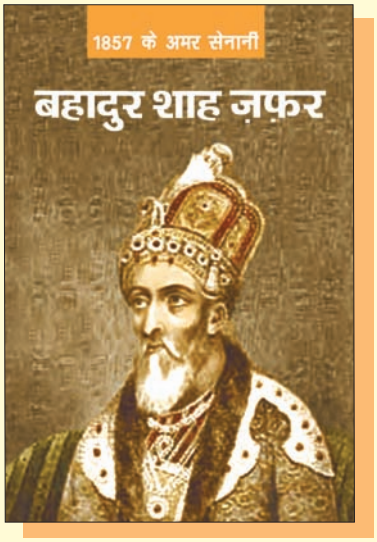

पुस्तक : बहादुरशाह ज़फ़र
लेखक : महेश दर्पण; **मूल्य :** 50 रुपये
आईएसबीएन : 978-81-230-1472-2

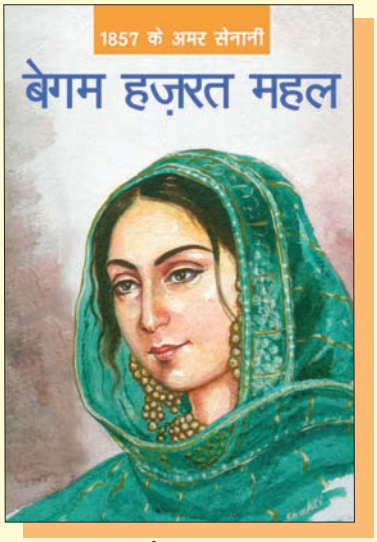

पुस्तक : बेगम हज़रत महल
लेखक : के.सी. यादव; **मूल्य :** 90 रुपये
आईएसबीएन : 978-81-230-1538-5

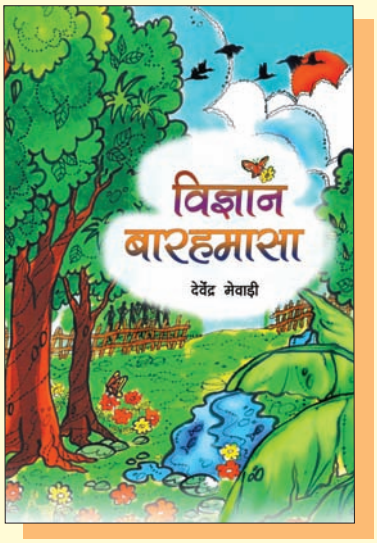

पुस्तक : विज्ञान बारहमासा
लेखक : देवेंद्र मेवाड़ी; **मूल्य :** 100 रुपये
आईएसबीएन : 978-81-230-1514-9

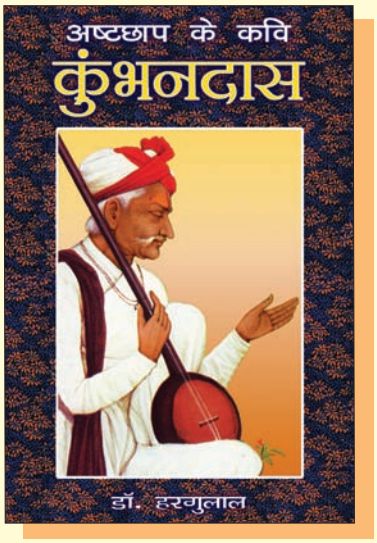

पुस्तक : अष्टछाप के कवि कुंभनदास
लेखक : डॉ. हरगुलाल; **मूल्य :** 90 रुपये
आईएसबीएन : 978-81-230-1439-5

पुस्तक के लिये कृपया हमारे निम्नलिखित बिक्री केंद्रों पर संपर्क करें :- सूचना भवन सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003 (दूरभाष : 24367260, 5610), हाल सं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 (दूरभाष : 23890205) * 701, सी- विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (दूरभाष : 27570686) * 8, एसप्लानेड ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष : 22488030) * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बंसल नगर, चेन्नई-600090 (दूरभाष : 24917673) * प्रेस रोड नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुवनंतपुरम-695001 (दूरभाष : 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकल्प, एमजी रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष : 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलुरु-560034 (दूरभाष : 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष : 2683407) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-H, अलीगंज, लखनऊ-226024 (दूरभाष : 2225455) * अंबिका कॉम्प्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर, पाल्दी, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष : 26588669) * के.के.बी. रोड, नयी कॉलोनी, मकान संख्या-7, चेनीकुटी, गुवाहाटी-781003 (दूरभाष : 2665090)

प्रकाशक व मुद्रक वीना जैन, अपर महानिदेशक द्वारा प्रकाशन विभाग के लिये ब्रजबासी आर्ट प्रेस लिमिटेड, ई-46/11, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेस-2, नयी दिल्ली-110 020 से मुद्रित एवं प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉप्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110 003 से प्रकाशित। संपादक : राकेशरेणु

Licenced under U (DN)-53/2006-08
पंजी सं. 951/57
R.N.951/57

रजि.सं.डीएल (एस)-05/3231/2009-11 तथा डाक व्यय की पूर्व अदायगी के बिना डाक में डालने के लिए लाइसेंस-प्राप्त
Reg. No. D.L.(S)-05/3231/2009-11 Licenced to post without pre-payment at RMS, Delhi
26 अक्तूबर, 2009 को प्रकाशित• 29-30 अक्तूबर, 2009 को डाक द्वारा जारी

सत्यमेव जयते

रोज़गार समाचार

साप्ताहिक

क्या आप सरकारी/सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम/कर्मचारी चयन आयोग/संघ लोक सेवा आयोग/ रेलवे भर्ती बोर्ड/सशत्र सेनाओं/बैंकों में रोज़गार तलाश रहें हैं?

रोज़गार समाचार आपका श्रेष्ठ मार्गदर्शक है। यह विगत तीस वर्षों से नौकरियों के लिए सबसे अधिक बिकने वाला साप्ताहिक है। आप भी इसके सहभागी बनें।

आपका हमारी वेबसाइटः *employmenteews.gov.in* पर स्वागत है, जो कि

- नवीनतम प्रौद्योगिकी से विकसित है।
- उन्नत किस्म के सर्च इंजिन से युक्त है।
- आपके प्रश्नों का विशेषज्ञों द्वारा शीघ्र समाधान करती है।

रोज़गार समाचार/एम्प्लाएमेंट न्यूज की प्रति के लिए निकटतम वितरक से संपर्क करें।

व्यापार संबंधी पूछताछ के लिए संपर्क करें :

रोज़गारसमाचार, पूर्वीखण्ड4, तल5, रामकृष्णपुरम, नईदिल्ली।
फोन : 26182079, 26107405, ई–मेल : enabm sa@yahoo.com

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार